जो नबी ﷺ का नही वह अल्लाह का नहीं

इत्तिबाए सुन्नत

याद रखो, याद रखे जाओगे

अज़ इफादात ▪ नमूना-ए-सलफ हज़रत अलहाज शकील अहमद साहब
मजाज़े बैअत ▪ आरिफ बिल्लाह हज़रत अक़दस शाह मुफ्ती मुहम्मद हनीफ साहब

जो नबी का नही वह अल्लाह का नहीं

इत्तिबाए सुन्नत

याद रखो याद रखे जाओगे

अज़ इफादात

नमूनए सल्फ हज़रत अल हाल शकील अहमद साहब

मजाज़ व बैअत

आरिफ बिल्लाह अज़रत अक़दस शाह मुफ्ती मुहम्मद हनीफ साहब

जमा व तर्तिब

अहबाब हिरा पब्लिकेशन

नाशिर

हिरा पब्लिकेशन

सब प्लॉट न० १४, फाइनल प्लॉट ५२४,

बुशरा पार्क, पनवेल-४१०२०६

E-mail:hirapublication@gmail.com

सिलसिलए इशाअत

किताब का नाम	:	इत्तिबाए सुन्नत
तक़रीज़	:	आरिफ बिल्लाह अज़रत अक़दस शाह **मुफ्ती मुहम्मद हनीफ** साहब
अज़ इफादात	:	नमूनए सल्फ **हज़रत अल हाज शकील अहमद** साहब
इशाअत उर्दू	:	१४३३ हि० २०१२ ई०
इशाअत हिन्दी	:	१४३३ हि० २०१२ ई०
सफहात	:	१९२
तादाद	:	१०००
नाशिर	:	हिरा पब्लिकेशन, पनवेल

मिलने के पते

☆ **इदारए इस्लामियात** ३६, मुहम्मद अली रोड, मुम्बई।

☆ **मकतबा हकीमुल उम्मत,** सहारनपूर, यूपी।

☆ **मकतबा महमूदिया,** देवबंद, यूपी।

फेहरिस्त

तक़रीज़

بسم اللّٰه الرحمن الرحيم

الحمد لحضرة الجلالة والعنت لخاتم الرسالة والصلوٰة والسلام علٰى من كان نبياً والأدم عليه السلام بين الماء والطين فسبحان من خلق الانسان من ماءٍ مهينٍ، وانطق له اللسان واعطاه البيان وان من البيان لسحراً ،وذٰلک فضل اللّٰه يعطيه لمن يشآء ماشآء ويخرج الحى من الميت ويخرج الميت من الحى ولكن اكثر الناس لايعلمون،ولله الخلق والامر كله فاذا اراد شيئاً فيقول له كن فيكون بعد!

तारीख़ में कुदरत के ऐसे शवाहिद मौजूद हैं कि क़ादिर व क़ह्हार जल्ल जलालहू ने बेरूह और बेजान चीज़ों के वास्ते और ज़रिए कुदरत के ऐसे शाहकार और नमूने ईजाद फरमाए हैं कि उरफाए ज़िरूह दंग रह गए, मसलन ख़ुश्क और बोसीदा लकड़ी होने के बावजूद उसतुने हन्नाना का फिराक़े हबीबे रब्बुल आलमीन पर आव ह बुका और वह भी ऐसा कि बड़े बड़े ओरफा असहाब से न बन पड़े, और बहुत ही मामूली और ज़ईफ तर परिन्द के वास्ते अबरहा जैसे दम ख़म और सीना तानने वाले हाथों और हाथी सवारों के छक्के छुड़ा दिए। इस लिए आज भी हम और आप अगर किसी को कुछ न समझते हों मगर ख़ुदा तआला क़ादिर व क़ह्हार उस से ऐसा काम ले ले जो हम जैसे अना रखने वालों से न बन आए तो क्या अजब है। पेशे नज़र रिसाला जो आप के रूबरू कम अज़ कम इस हक़ीर के रूबरू इसी तरह के अजाइबात में से है और यह पढ़ने को दिल चाहता है कि :

نگارمن کہ نہ مکتب رسید ودرس نہ کرو   سبق غمزہ بیاموخت صد مدرس شد

इस से मेरी मुराद मेरे महबूब व मुहिब दोस्त व सदीक़े हमीम भाई शकील अहमद ज़ाद मजदहू हैं उनकी जिस काविशे मअहूद पर यह ख़ामा फरसाई यह सौदाई कर रहा है आप के सामने है पढ़िये और ख़ुद फैसला फरमाइए कि इस नाकारा की गुज़ारिशात महज़ मजनून की बड़ हैं या कुछ हक़ और हक़ीक़त भी। आगे बस एक जुमला पर अपनी हिरज़ासराई ख़त्म करता हूँ कि

لذت مے نہ شناسی بخدا تانہ چشی

बस पढ़ कर ही फैसला कीजिए

"وماردت الا اظہار ما ہوالحق عندی"

व अख़ीरन दोबारा कहता हूँ कि

لذت مے نہ شناسی بخدا تانہ چشی

बस ख़ुद पढ़ कर फैसला कीजिए।

वस्सलाम

नाकारा व आवारा क़िस्मतों का मारा

मुहम्मद हनीफ ग़फरलहू जौनपूरी

१४ रबीउल अव्वल १४३३ हि०

मुताबिक़ ७ फरवरी २०१२

अर्ज़े मुरत्तिब

इस्लाम एक कामिल और मुकम्मल दस्तूरे ज़िंदगी है और जनाब नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ात आली और आप की सीरते मुबारका उस दस्तूरे ज़िंदगी की अमली तफ्सीर है। इबादात, हों या मामलात, अख़्लाक़ियात हों या मआशरते ज़िंदगी के तमाम शोबों में आप ने अपने अक़्वाल व अफआल से, अपने अख़्लाक़ व किरदार से और अपनी आदात व तबाओ से इस निज़ामे हयात के एक एक जुज़ की मुकम्मल वज़ाहत और तशरीह की है और अपने मुत्तबेअीन को इस दस्तूर के मुताबिक़ ज़िंदगी गुज़ारने के लिए एक ऐसा साफ और बेगुबार रास्ता बता गए हैं कि जिस पर चलने में उन्हें कोई दिक्कत और परेशानी न हो और जिस पर चल कर वह बआसानी अपने प्यारे रब की रज़ा और ख़ुशनूदी हासिल कर सकें।

कुरआन मजीद की बहुत सी आयात और हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम की बहुत सी अहादीसे मुबारका इस बात पर शाहिद हैं कि आप की तालीमात की पैरवी और आप की सुन्नतों का इत्तिबा ही इंसान के ज़ाहिर व बातिन के इस्लाह का नुसख़ाए अकसीर और दोनों जहाँ में कामयाबी का ज़ामिन है। यही वजह है कि न सिर्फ इबादात में आप की इताअत व इत्तिबा का मोतालबा किया गया, बल्कि ज़िंदगी के दीगर शोबों, अख़्लाकियत, मामलात और माआशरत हत्ताकि आदात व तबाओ में भी आपकी इताअत व इत्तिबा की तकीद की गई। गोया हज़रत नबीए पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उन के उम्मतियों के दरमियान एक आइडियल की हैसियत से मबऊस किया गया और उन्हें यह हुक्म दिया गया कि

वह उस नमूने के मोताबिक़ खुद भी ज़िंदगी गुज़ारें और दूसरों की ज़िंदगीयों को भी उस नमूने के मुताबिक़ बनाने की फ़िक्र और कोशिश करें। यही वजह है कि हर दौर में उलमा और मशाइख़ ने हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के शमाइल व ख़साइल को और आप की सुन्न व अदओीया को निहायत ऐहतिमाम के साथ जमा फरमाया और मुख़्तलिफ ज़बानों में लिख कर उन्हें आम किया और अपने साथ साथ आम मुसलमानों की ज़िंदगियों को उसी क़ालिब में ढालने की और उन्हीं के रंग में रंगने की पूरी पूरी कोशिश की। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उनकी इन ख़िदमाते जलीला को शर्फे कुबूलियत अता फरमा कर उनके लिए ज़ख़ीरए आख़िरत बनाऐ।

आप के हाथों में मौजूद यह किताब भी उसी सिलसिलतुज़्ज़हब की एक कड़ी है जिस में बाक़ादा हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के शमाइल व ख़साइल और आप की सुनन और दुआओं का बयान तो नहीं है ताहम उन शमाइल व ख़साइल, सुनन और दुआओं को अपनी अमली ज़िंदगी का हिस्सा बनाने के सिलसिले से एक बहुत ही मोअस्सिर तहरीक व तरग़ीब ज़रूरी है।

सुन्नत क्या है, उस पर अमल के दीनी व दुनियवी मुनाफे क्या हैं, हज़रात सहाबए किराम के दौर से लेकर आज तक उम्मत के बरगुज़ीदा बंदों ने उसे किस दर्जा अहमियत का हामिल समझा और उसे किस तरह अपनी ज़िंदगीका जुज़वे लायनफ़क बनाया, और उस पर उन्हें जो इनामात व बशारतें मिलीं, उन तमाम बातों को उनके अक़वाल व वाक़ेआत के हवाले से निहायत पुरअसर अंदाज़ में बयान किया गया है। इन सब के अलावा एक ख़ास बात यह कि

अगर कोई शख़्स सुन्नत की अहमियत और इफ़ादियत को सुनने के बाद अपनी ज़िंदगी को सुन्नात के साँचे में ढालना चाहे तो उसे करना क्या होगा? इस बात को भी निहायत आसान और आम फ़हम अंदाज़ में बयान किया गया है।

यह किताब इस मौज़ू पर कोई बाक़ायदा तसनीफ़ नहीं है बल्कि हज़रत वाला दामत बरकातहुम के सफ़र बंगलौर के दौरान होने वाले मुख़्तलिफ़ बयानात के अहम इक़्तेबासात हैं जिन्हें मौज़ू की अहमियत के पेशे नज़र आप से मुहब्बत करने वाले बअज़ अहबाब ने क़लम बंद कर लिया था। यह इक़्तेबासात बिखरे मोतियों की शकल में उस आजिज़ के पास पहुंचे थे जिन्हें बिफ़ज़्लिही तआला उस ने हज़रत वाला की ईमा पर जोकि इस आजिज़ के लिए दर्जा रखती है, इस उम्मीद के साथ एक ख़ास तरतीब के साथ पिरो दिया है कि उस अज़ीमुश्शान काम में कुछ मेरा भी हिस्सा हो जाए और उसकी बरकत से मुझे भी अपनी ज़िंदगी को सुन्नत के साँचे में ढालने की तौफ़ीक़ हो जाए और यह ख़िदमत मेरे लिए नेजात का ज़रिया बन जाए। आप उन मारूज़ात को पढ़ें और अमल की निय्यत से पढ़ें, मुझे उम्मीद ही नहीं बल्कि यक़ीन है कि अगर मेरी बद आमालियों की नहूसतें दरमियान में हायल न हुईं तो आप इस दर्द दिल को जो बशकल मारूज़ात पेशे ख़िदमत है, ज़रूर महसूस करेंगे।

यह आजिज़ ख़ुदाए जुल मेनन की बेनियाज़ बारगाह में दस्त बस्ता इलतेजा करता है कि वह उस टूटी फूटी ख़िदमत को शर्फ़े क़ुबूलियत अता फ़रमा कर उसे मेरे गुनाहों की बख़्शिश का, अपनी रज़ा के हुसूल का और रोज़े क़यामत हज़रत नबीए करीम

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शिफ़ाअत नसीब होने का बहाना बना दें कि मेरे नज़दीक इस कोशिश का असल हासिल यही है। ऐसा न हो कि काम तो मक़बूल हो जाए और मैं गुनाहों की ग़लाज़त में लत पत होने के सबब उनकी पाक बारगाह में क़ुबूलियत न पा सकूँ। اللهم احفظنی منه.

अहबाब हिरा पब्लिकेशन

१४ रबीउल अव्वल १४३३ हि०

७ फरवरी २०१२ ई०

आप इस किताब को कैसे पढ़ें?

याद रखें! मुसलमान की निय्यत बहुत ज़्यादा अहमियत की हामिल होती है, लिहाज़ा इस किताब को पढ़ने से पहले यह निय्यत ज़रूर कर लें कि इस किताब को अल्लाह पाक की रज़ा और उकनी खुशनुदी हासिल करने की ग़र्ज़ से पढ़ रहा हूँ। नीज़ यह कि इस किताब में दीन की जो बात भी पढ़ुंगा इंशा अल्लाह उस पर अमल करने की पूरी कोशिश करूंगा। जब आप इस निय्यत से पढ़ेंगे तो अल्लाह तआला आप को अमल की तौफीक़ ज़रूर अता फरमाऐंगे। इस निय्यत का एक बहुत बड़ा फायदा यह होगा कि जिस बात पर अमल करना मुश्किल होगा, आप की सच्ची निय्यत और पक्के इरादे की बरकत से अल्लाह पाक उस पर अमल करना आप के लिए आसान फरमा देंगे और जितना वक़्त इस किताब को पढ़ने पर लगेगा वह दीन बनता जाएगा और इबादत में शुमार होगा।

कुछ गुज़ारिशात

१. किताब पढ़ने से क़ब्ल यह दुआ ज़रूर कर लें कि या अल्लाह! आप इस किताब को मेरी हिदायत का ज़रिया बना दीजिए।

२. किताब पढ़ने के लिए ऐसे वक़्त का इंतेखाब करें जो उलझनों या परेशानियों से घिरा हुआ न हो, इस लिए कि कभी ऐसा होता है कि ज़ेहन पर उलझन तो किसी और वजह से सवार होती है, लेकिन चुभन महसूस होती है किताब के मज़मून से।

३. किताब पढ़ने से पहले तौबा इस्तिग़फार ज़रूर कर लें ताकि दिल पर गुनाहों का जो ग़ोबार छाया हुआ है वह छट जाए।

४. किताब के मोतालअे के वक़्त एक क़लम हमेशा साथ में

रखें और जिन उमूर में खुद को कोताह महसूस करते हों उन पर निशान लगा दें और उन्हें बार बार पढ़ें और उनकी इस्लाह के लिए ख़ूब दुआऐं माँगें और कोशिश भी करें।

६. इस किताब को खुद भी पढ़ें, घर वालों को भी पढ़ने के लिए कहें, नीज़ इसे पढ़ने की अपने दोस्त अहबाब को भी दावत दें और इस में जो बातें अमल से मुतअल्लिक़ हों उन्हें अपनाने के साथ साथ दूसरों को भी उनकी जानिब मुतवज्जह करें।

७. इस किताब को पढ़ने के बाद अगर आप को किताब के मशमूलात से कोई दीनी नफा महसूस हो तो आप हज़रत वाला दामत बरकातहुम के लिए या उन बातों को यकजा कर के किताबी सूरत में आप तक पहुंचाने के मुख़्तलिफ मराहिल में किसी भी तरह शरीक होने वाले मआविनीन के लिए खुसूसी तौर पर दुआओं का ऐहतिमाम करें।

اَلْحَمْدُلِلّٰهِ وَكَفٰى وَسَلَامٌ عَلٰى عِبَادِهِ الَّذِيْنَ اصْطَفٰى اَمَّابَعْدُ!

قَالَ اللّٰهُ تَبَارَكَ وَتَعَالٰى :اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ. قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِىْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْلَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ.(آل عمران) وَقَالَ:وَمَااٰتٰكُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ وَمَانَهٰكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا.(الحشر)

وَقَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ ﷺ: مَنْ اَحَبَّ سُنَّتِىْ فَقَدْ اَحَبَّنِىْ وَمَنْ اَحَبَّنِىْ كَانَ مَعِىَ فِى الْجَنَّةِ.(مشكوٰة) وَهٰكَذَا قَالَ:فَمَنْ رَغِبَ عَنْ سُنَّتِىْ فَلَيْسَ مِنِّىْ (مشكوٰة)

हर अक्लमंद शख़्स नफा चाहता है

मुहतरम बज़ुर्गो और दोस्तो! दुनिया में हर अक्लमंद इंसान अपना नफा चाहता है, नुक़सान कोई नहीं चाहता, जो इंसान ज़रा भी अक्ल व शोऊर रखता है वह नफा ही की तरफ दौड़ता है और नुक़सान से हत्तल इम्कान बचने की कोशिश करता है। हर ज़ी अकल और ज़ी शोऊर आदमी की यही फितरत और उसका यही मिज़ाज है कि वह किसी भी काम को बेफायदा नहीं करता बल्कि एक ख़ास मक़सद और एक ख़ास फायदे के पेशे नज़र अंजाम देता है।

अब यह नफा जो वह किसी काम को करने के बाद चाहता है, आम तौर से लोगों के तजरबा की बुनियाद पर होता है कि फलाँ शख़्स ने यह काम किया था और उसे उस काम से यह नफा हुआ था लिहाज़ा लाओ हम भी यह काम करें, ताकि हमें भी वह नफा

हासिल हो, आम तौर से दुनिया का दस्तूर यही है। और अकसर यही होता है कि जब आदमी उस काम को करता है तो उसे वह मतलूबा नफ़ा हासिल हो जाता है।

इंसानी फ़ितरत

लेकिन यह कोई क़ायदए कुल्लिया नहीं है। यानी यह कोई ज़रूरी नहीं है कि जिस काम को करके लोगों ने नफ़ा उठाया हो उस काम को करने के बाद यक़ीनी तौर पर वह नफ़ा हमें भी हा. .ल होगा बल्कि कभी कभी उसके बरख़िलाफ़ भी होता है और आदमी उस नफ़ा वाले काम को करने के बावजूद नुक़सान उठाता है। लेकिन हमारी फ़ितरत और तबीअत कुछ ऐसी है कि जब हम लोगों को किसी काम के ज़रिए नफ़ा हासिल करता हुआ देखते हैं तो अगरचे उस काम में नुक़सान का इमकान भी हो और हमारे इल्म और मुशाहेदे में वह नुक़सान कुछ लोगों को पहुंचा भी हो, उसके बावजूद हमारी तबियत उस काम की तरफ़ चलती है और हम उस काम को कर के अपना मतलूबा नफ़ा हासिल करना चाहते हैं।

और अगर हमें कोई नफ़ा वाला काम मालूम नहीं होता तो हम जानने वालों को तलाश करते हैं, उनके पास जाते हैं, उन से मशवरा करते हैं कि भाई! हम कोई काम करना चाहते हैं लेकिन हमें यह पता नहीं कि आज कल किस काम में और किस लाइन में नफ़ा ज़्यादा है, किस काम में तरक़्क़ी के इमकानात ज़्यादा हैं, लिहाज़ा आप बराए मेहरबानी इस मामले में हमारी कुछ रहनुमाई करें, फिर उन जानने वालों को बतलाने के मुताबिक़ हम उस नफ़ा वाले काम की तरफ़ अपना क़दम बढ़ाते हैं और इम्कानी नफ़ा की

उम्मीद के साथ उस काम को शुरू कर देते हैं, काम शुरू कर देने के बाद अकसर तो ऐसा ही होता है कि हम भी उस काम को करने के बाद नफा हासिल कर ले जाते हैं लेकिन कभी कभी उसके बरखिलाफ भी हो जाता है और नफा के काम को करने के बावजूद हमें नुक़सान का सामना करना पड़ता है। यह सिर्फ हमारी नहीं बल्कि तक़रीबन हर ज़ी अक़्ल और ज़ी शुऊर आदमी की फितरत और तबीयत ऐसी ही है।

अलग़र्ज़ यह एक तमहीदी गुफ्तगू थी कि दुनिया में हर ज़ी अक़्ल और ज़ी शुऊर आदमी नफा चाहता है और नुक़सान से बचना चाहता है, फिर यह अर्ज़ किया गया कि नफा के हुसूल की ख़ातिर जो काम हम इख़्तियार करते हैं वह काम बावजूद अकसर नफा देने के नुक़सान से ख़ाली नहीं होता।

एक सवाल

अब सवाल यह पैदा होता है कि क्या दुनिया में सारे काम ऐसे ही हैं कि उन में नफा और नुक़सान दोनों का ऐहतिमाल रहता है या कोई काम ऐसा भी है जिस को करने के बाद आदमी को सौ फीसद नफा ही होता है, उस में किसी तरह के नुक़सान का कोई इमकान नहीं होता? जब हम इस सवाल को दुनिया वालों के सामने रखते हैं और उन से सवाल का जवाब मांगते हैं तो उन के पास इस सवाल का कोई जवाब नहीं होता। वह यही कहते हैं कि हमें दुनिया की किसी ऐसी तिजारत, ऐसी ज़राअत या दीगर शोबों से मुतअल्लिक़ किसी ऐसे काम का कोई इल्म नहीं जिस में सौ फीसद नफा होता हो और उस में नुक़सान का कोई अंदेशा न हो।

सौ फीसद नफा वाला काम

हाँ अलबत्ता जब हम अपना यह सवाल अपने ख़ालिक़ व मालिक से और उनकी जानिब से भेजे गए आख़िरी पैग़म्बर जनाब नबिए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछते हैं तो वह हमारे इस सवाल का जवाब देते हैं और एक ऐसे काम की तरफ हमारी रहनुमाई करते हैं जिसे करने के बाद आदमी को सौ फीसद नफा ही होता है, नुक़सान कभी नहीं होता बल्कि उस में नुक़सान का इम्कान ही नहीं होता।

अगर हमें किसी ऐसे काम का इल्म हो जाए जिस में सौ फीसद नफा होता हो, नुक़सान कभी न होता हो तो क्या ख़्याल है हम में से हर एक आदमी उस काम को करना चाहेगा या नहीं? ज़रूर करना चाहेगा, बल्कि सब से पहले करना चाहेगा, और जल्द से जल्द यह जानना चाहेगा कि आख़िर वह क़ाम है कौन सा? आप भी जानना चाहते हैं? तो फिर सुनिए वह काम इत्तिबाअे सुन्नत है। यह इत्तिबाअे सुन्नत एक ऐसा काम है जिसको करने के बाद आदमी को सौ फीसद नफा ही होता है नुक़सान कभी नहीं होता।

अल्लाह का महबूब बना देने वाला अमल

फिर यह कि सुन्नत की इत्तिबा करके आदमी को सिर्फ सौ फीसद नफा ही नहीं होता, बल्कि मज़ीद इनाम यह मिलता है कि उस के ज़रिये उसे लोगों की महबूबियत नसीब होती है। और सिर्फ लोगों की महबूबियत नहीं मिलती बल्कि फरिश्तों की महबूबियत भी नसीब होती है। और सिर्फ फरिश्तों की महबूबियत नहीं मिलती बल्कि नबी की महबूबियत भी नसीब होती है। सुन्नत पर अमल के

नतीजे में मिलने वाले यह सारे इनाम व ऐज़ाज़ ही इस अमल की अहमियत बतलाने के लिए काफी थे, मज़ीद किसी इनाम व ऐज़ाज़ की ज़रूरत न थी, लेकिन सिर्फ इसी पर बस नहीं किया जाता बल्कि उन सब के बावजूद एक ख़ुसूसी इनाम यह दिया जाता है कि मुत्तबअे सुन्नत शख़्स को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ख़ुद अपना महबूब बना लेते हैं, अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मुहब्बत और उनकी महबूबियत का मिल जाना कोई मामूली बात नहीं है, यह एक ऐसा इनाम व ऐज़ाज़ है कि उस के बाद अब किसी इनाम व ऐज़ाज़ की ज़रूरत बाक़ी नहीं रहती।

यह बात मैं अपनी तरफ से नहीं कह रहा हूँ, बल्कि कुरआन मजीद की बहुत सी आयात और नबीए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बहुत सी अहादीसे मुबारका से इस मज़मून की ताईद होती है। चुनान्चे कुरआन मजीद में ख़ुद अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का इर्शादे ग्रामी है :

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِىْ

जिस का ख़ुलासा और मफ़हूम यह है कि ऐ मेरे महबूब! आप अपने उम्मतियों से कह दीजिए कि अगर तुम अल्लाह से मुहब्बत करते हो तो तुम्हें अपने हर अमल में मेरे उसवह और मेरे तरीक़े की पैरवी करनी होगी, मेरी इत्तिबा और मेरी पैरवी के बिग़ैर तुम्हारा यह दावा अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की बारगाह में हरगिज़ हरगिज़ क़ाबिले क़बूल न होगा, बल्कि तुम अपने दावे में झूठे समझे जाओगे।

दो अनमोल इनाम

इंसान की फितरत में हिर्स का माद्दा रखा गया है कि वह

किसी भी काम को करने के बाद कुछ नफा और फायदा चाहता है। और चूंकि यह माद्दा और यह जज़्बा खुद अल्लाह तआला ने उसके अंदर रखा है इस लिए उन्होंने उसकी रिआयत भी की है। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त जानता है कि मेरा बंदा हरीस है जब मैं उसे किसी काम का हुक्म करूंगा तो वह लाज़िमन मुझ से पूछेगा कि परवरदिगार ! मैं आप के हुक्म की बिना पर यह काम कर तो लूँगा। लेकिन आप मुझे यह बताऐं कि मुझे इस काम को करने के बाद क्या मिलेगा? लिहाज़ा अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने बंदे की इस हरीसाना तबीअत के मद्दे नज़र इसी आयत के अगले हिस्सा में उसका जवाब दिया है। जिसका खुलासा यह है कि अगर तुम मेरे महबूब के तरीक़े की पैरवी करोगे और उनकी सुन्नत का इत्तिबा करोगे तो मैं तुम्हें दो तरह के इनामात से नवाज़ूंगा, वह दोनों इनाम ऐसे हैं जिन्हें सिर्फ मैं दे सकता हूँ, मेरे अलावा कोई दे सकता है और न उन्हें दुनिया में किसी क़ीमत पर ख़रीदा जा सकता है।

पहला इनाम

१. सुन्नत की इत्तिबा का पहला अज़ीमुश्शान इनाम तो यह दूंगा कि मैं खुद उस बंदे से मुहब्बत करने लगूंगा और उसे अपना महबूब बना लूंगा, इस इनाम की बाबत इस आयत में फक़त इतनी बात मिलती है :

"يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ"

कि जो बंदा अपने हर अमल में अल्लाह के महबूब और लाडले पैग़म्बर की पैरवी करता है और अपनी हर नक़ल व हरकत में उनकी इत्तिबा करता है तो फिर उस बंदे से अल्लाह पाक भी

मुहब्बत फरमाता है और उसे अपना महबूब बना लेता है। लेकिन इस इनाम की मज़ीद वज़ाहत और उसकी मज़ीद तफ्सील अल्लाह पाक ने अपने प्यारे रसूल जनाब नबीए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बानी हमें यह बतलाई है कि जब मैं किसी बंदे से मुहब्बत करता हूँ और उसे अपना महबूब बना लेता हूँ तो सिर्फ अकेले उस से मुहब्बत नहीं करता, बल्कि अपने सब से मुक़र्रब फरिश्ते जिबरईल से कहता हूँ कि जिबरईल! मैं फलाँ बंदे से मुहब्बत करता हूँ, तुम भी उस से मुहब्बत करो। पस जिबरईल भी उस बंदे से मुहब्बत करने लगते हैं और तमाम फरिश्तों में यह ऐलान करते हैं कि अल्लाह पाक अपने फलाँ बंदे से मुहब्बत करते हैं और उसे अपना महबूब बना लिया है, लिहाज़ा ऐ फरिश्तो! तुम सब के सब उस से मुहब्बत करो, पस तमाम फरिश्ते उस से मुहब्बत करने लगते हैं। फिर ज़मीन पर बसने वाले इंसानों के दिलों में हत्ताकि ज़मीन पर रहने वाली दीगर मख़्लूक़ात के दिलों में भी उस बंदे की मुहब्बत डाल दी जाती है। इस तरह रूऐ ज़मीन पर बसने वाली दूसरी मख़्लूक़ात भी उस से मुहब्बत करने लगती है।

ज़िंदा मिसाल

अब यह कि मुत्तबऐ सुन्नत शख़्स को लोगों का प्यार और उनकी मुहब्बत कैसे मिलती है, उसकी जीती जागती मिसाल वह अहलुल्लाह हैं जिन्होंने अपनी पूरी ज़िंदगी को सुन्नत के साँचे में ढाल लिया है। उन खुश क़िस्मत बंदों को जो मक़बूलियत और महबूबियत हासिल होती है, उसका कुछ अंदाज़ा तो हम सभी को होगा कि माल व मताअ पास में नहीं होता, असबाबे राहत मयस्सर नहीं होते, उसके बावजूद उन्हें हक़ीक़ी राहत भी नसीब होती है

और लोगों का प्यार भी उन्हें हासिल होता है। लोग हैं कि दीवाना वार उन पर टूट रहे हैं और उनकी ज़ियारत और ख़िदमत को अपने लिए बाइसे सआदत समझते हैं, उन ख़ासाने ख़ुदा की शान और उनका हाल किसी से मख़्फ़ी नहीं है, जिसका जी चाहे देख ले।

मुहब्बत ख़रीदी नहीं जाती

चुनान्चे एक बुज़ुर्ग एक शहर में तशरीफ लाए, प्रोग्राम कुछ ऐसा था कि उन्हें उस सफर में कई शहरों का दौरा करना था। उनके साथ उनका ख़ादिम भी था। हज़रत जहाँ जाते वहाँ हज़रत का शानदार इस्तिक़बाल होता। मुहब्बत करने वालों की और अक़ीदतमंदों की भीड़ जमा हो जाती। लोग अपनी अपनी गाड़ियों के साथ यह तमन्ना लिए खड़े रहते कि हज़रत हमारी गाड़ी में तशरीफ फरमा हों और हमारे घर क़याम फरमायें, जब सफर मुकम्मल हुआ और हज़रत वापस तशरीफ ले जाने लगे तो अपने ख़ादिम से दरियाफ्त फरमाया बताओ भाई! अगर हम माल लेकर आते तो हमें इस माल के ज़रिए यहाँ अच्छे होटल मिल जाते, अच्छी सवारियाँ मिल जातीं, उम्दा और लज़ीज़ खाने मिल जाते, लेकिन लोगों की यह मुहब्बत और उनका यह प्यार जो हमें इस सफर में मिला, क्या वह हमें मिल सकता था? हरगिज़ नहीं।

फिर फरमाया कि मियाँ! मुहब्बत किसी क़ीमत पर ख़रीदी नहीं जा सकती, मुहब्बत तो दिल का अमल है और उसे अल्लाह पाक ही लोगों के दिलों में डालते हैं, लेकिन डालते उसी वक़्त हैं जब बंदा हर दम उनके महबूब का ख़्याल रखता है और अपने हर अमल को उनके तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम देता है, जब बंदा हर

वक़्त की सुन्नतों का ख़्याल रखता है और उन पर अमल करता है तो फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उस ऐहतिमाम का सिला और बदला इस तौर पर अता फरमाते हैं कि लोगों के दिलों में उस बंदे की मुहब्बत डाल देते हैं।

अलग़र्ज़ नबी की इत्तिबा और उनकी पैरवी का पहला इनाम तो यह मिलता है कि वह बंदा न सिर्फ लोगों का महबूब और पसंदीदा बन जाता है, बल्कि ज़मीन की दीगर मख़्लूक़ात भी उस बंदे से मुहब्बत करने लगती हैं, फरिश्ते भी उस से मुहब्बत करने लगते हैं, नबी की मुहब्बत और उनका प्यार भी उसे नसीब होता है और उन सब से बढ़ कर यह कि खुद अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उस बंदे को अपना महबूब और पसंदीदा बना लेते हैं।

दोस्तो! अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मुहब्बत का मिल जाना इतनी बड़ी नेमत है कि उस नेमत के आगे दुनिया की सारी नेमतें हेच और बेकार हैं। उस नेमत के आगे दुनिया की किसी नेमत की कोई हक़ीक़त ही नहीं, और यह नेमत व दौलत किसी और अमल पर नहीं, बल्कि सिर्फ और सिर्फ इत्तिबाऐ सुन्नत पर मिला करती है।

दूसरा इनाम

२. इत्तिबाअे सुन्नत पर दूसरा इनाम मग़्फिरत की शकल में मिलता है, चुनान्चे इर्शादे खुदावन्दी है:

"وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوبَكُمْ"

कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उस बंदे के तमाम गुनाहों को माफ फरमा देते हैं। यह गुनाहों की बख़्शिश भी एक ऐसा इनाम है जो सिर्फ और सिर्फ अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ही दे सकते हैं, उन के

अलावा कोई यह इनाम नहीं दे सकता।

बताओ दोस्तो! इत्तिबाओ सुन्नत के नतीजे में मिलने वाले यह दोनों इनाम क्या कोई मामूली इनाम है? और क्या हमें उन दोनों इनामों की ज़रूरत नहीं है? क्या हम नहीं चाहते कि हम अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के प्यारे और महबूब बन जाऐं? क्या हमें यह पसंद नहीं कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त हमारे गुनाहों को माफ फरमा दें और हमारी बख़्शिश फरमा दें? जब हम उन दोनों इनामों से मुस्तग़नी नहीं हैं, बल्कि हमें उनकी ज़रूरत है और सख़्त ज़रूरत है तो फिर आख़िर हम अपने हर अमल में इत्तिबाऐ सुन्नत का ऐहतिमाम क्यों नहीं कर लेते?

याद रखें! भले आमाल बहुत से ऐसे हैं जिन की बजाआवुरी पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने बड़े बड़े अज्र व सवाब के देने का नीज़ दर्जात के बलंद करने का वादा कर रखा है। मसलन यह करोगे तो इतनी नेकियाँ दूंगा, यह पढ़ोगे तो इतनी नेकियाँ दूंगा, यह अमल करोगे तो जन्नत में तुम्हारे इतने दर्जे बलंद करूंगा, लेकिन इत्तिबाऐ सुन्नात एक ऐसा अमल है कि इसके अंजाम देने वाले को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त सिर्फ नेकियाँ नहीं देते सिर्फ उसके दर्जे बलंद नहीं करते, बल्कि उसका सिला, उसका बदला और उसकी जज़ा के तौर पर यह सारी चीज़ें देने के साथ साथ एक मज़ीद इनाम यह देते हैं कि उस बंदे से मुहब्बत करने लगते हैं। इस हैसियत से देखें तो दूसरी तमाम ताआत व इबादात के मुक़ाबले इत्तिबाऐ सुन्नत एक ख़ुसूसी और इम्तेयाज़ी शान रखने वाला अमल है। इस अमल की यह ए ऐसी ख़ुसूसियत है जो उसे दूसरी तमाम ताआत व इबादात से मुम्ताज़ करती है।

दोस्तो! ज़रा सोचें तो सही, तसव्वुर तो करें कि आख़िर यह कितनी बड़ी और कैसी अज़ीमुश्शान नेमत और दौलत है कि बंदे को इस दुनिया में अपने प्यारे रब की मुहब्बत मिल जाए, उनका प्यार मिल जाए, यह उस बंदे पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का कितना बड़ा ऐहसान, कितना बड़ा फज़्ल और कितनी बड़ी मेहरबानी है।

हमारी फ़िक्रों का मेहवर

लेकिन हमें यह नेमत कहाँ चाहिए, हमें तो बस एक चीज़ चाहिए और वह है माल, फक़त माल। हम तो बस उसी के ख़्वाहिशमंद हैं, रात व दिन उसके कमाने की धुन में लगे रहते हैं और उसके बढ़ाने की फ़िक्र में घुले जाते हैं। हमारी सारी फ़िक्रों और कोशिशें का मेहवर बस माल होता है कि यह कैसे आए, कहाँ से आए, किस तरह हासिल हो, कैसे बढ़े। हम यह समझते हैं कि जब हमारे पास माल होगा तो हमें राहत मिलेगी, लोगों के दरमियान इज़्ज़त मिलेगी, ज़िंदगी में चैन और सुकून नसीब होगा। हालांकि राहत व इज़्ज़त, चैन व सुकून माल की बुनियाद पर नहीं मिला करता, बल्कि हमारा तजरबा और मुशाहिदा तो कुछ उसके ख़िलाफ ही कहता है।

क़ाबिले रहम लोग

दुनिया में ऐसे बहुत से लोग हैं जिनके पास माल व मता की कोई कमी नहीं है। इतना माल है कि रखने की जगह नहीं है, वह खुद नहीं जानते कि हमारे पास कितना माल है। ज़ाहिरी तौर पर ऐसी कौनसी नेमत है जो उन्हें हासिल नहीं है। आली शान बंगला उनके पास, आली शान ऑफिस उनके पास, लम्बा चौड़ा कारोबार

उनके पास, बेश क़ीमती सवारियाँ उनके पास, नोकर चाकर उनके पास, बैंक बैलेंस (Bank Balance) उनके पास। माल की इस क़दर फरावानी और दुनियवी नक़शों की इतनी बोहतात के बावजूद जब उनकी ज़िंदगियों में झाँक कर देखें तो उन्हें इस क़द्र दुखी और ग़मज़दा पाएंगे कि उन्हें देख कर हमें उन पर तरस आएगा कि हाए यह बेचारे किस क़दर परेशान हैं।

असबाब राहत तो हैं पर राहत नहीं

कई साल पहले की बात है। एक साहब के घर मेरा आना जाना होता था। इस दौरान कई मर्तबा उनके घर खाना खाने की नौबत भी आई। आने जाने के सबब कुछ तअल्लुक़ात भी बन गए थे। उनके दो लड़के थें। अपने इलाक़े के बड़े मालदार आदमी थे। कारोबार बहुत वसीअ पैमाने पर फैला हुआ था। माल की बोहतात का अंदाज़ा इस बात से लगाऐं कि घर के हर फ़र्द के पास अपनी गाड़ी और अपना ड्राइवर था। शौहर के पास ड्राइवर समेत अलग गाड़ी, बीवी के पास ड्राइवर समेत अलग गाड़ी, दोनों बेटों के पास ड्राइवर समेत अलग गाड़ियाँ, यह उनके घर का और उनकी ज़िंदगी का लाइफ स्टाइल था।

एक रोज़ मुझे उनकी अहलिया का फोन आया, कहने लगीं शकील भाई! मैं आप से मिलना चाहती हूँ, मैंने पूछा कोई ज़रूरी काम? कहने लगीं कि हाँ एक ज़रूरी काम है। मैंने कहा फोन पर बता दीजिए, कहने लगीं कि नहीं, मुलाक़ात पर बताना है। मैंने कहा ठीक है, जब आप के शौहर घर पर मौजूद हों तो मुझे फोन कर दीजिएगा, मैं इंशा अल्लाह हाज़िर हो जाऊँगा। कहने लगीं नहीं नहीं, मुझे उनकी मौजूदगी में नहीं मिलना है, दर असल मुझे आप

से कुछ परसनल (Personal) बात करनी है। मैंने कहा बहन! मैं आप के शौहर की मौजूदगी ही में आ सकता हूँ, उनकी ग़ैर मौजूदगी में नहीं आ सकता, कहने लगीं कि शकील भाई! आप परदे की बिल्कुल फ़िक्र न करें, मेरे दोनों बच्चे बालिग़ और समझदार हैं, वह दोनों घर पर मौजूद रहेंगे और मैं भी परदे में रहूंगी, मैंने कहा तब तो ठीक है, इंशा अल्लाह किसी वक़्त इत्तिला करके हाज़िर हो जाउंगा।

चुनान्चे एक रोज़ मैं उन्हें इत्तिला करके उनके घर पहुंचा, उनके दोनों लड़के घर पर मौजूद थे। मैंने कहा बहन! ख़ैरियत तो है, आख़िर ऐसी कौनसी बात है जो आप मुझे भाई साहब की ग़ैर मौजूदगी में बताना चाहती हैं, कहने लगीं क्या बताऊँ शकील भाई! मैं बहुत परेशान हूँ, मेरे बच्चे भी बहुत परेशान हैं, इस वक़्त हम लोग बहुत टेन्शन (Tension) में हैं। मैंने कहा आप यह तो बताऐं कि बात क्या है? कहने लगीं कि बात दर असल यह है कि इस वक़्त मेरे और मेरे शौहर के माबैन कुछ ऐसे इख़्तिलाफ़ात चल रहे हैं जिन की वजह से हमारा पूरा घर जहन्नम बना हुआ है, चैन व सुकून तो गोया बिल्कुल ख़त्म हो गया है। रोज़ रोज़ के झगड़ों से अब हम तंग आ चुके हैं। लिहाज़ा अब मैं नहीं चाहती कि मेरा शौहर कभी घर आए, मेरे बच्चे भी यही चाहते हैं कि अब्बा कभी घर न आऐं, शकील भाई! क्या बताऊँ, अब मैं अपनी ज़िंदगी से इतनी तंग आ चुकी हूँ कि अपने आप ही को ख़त्म कर देना चाहती हूँ, कभी सोचती हूँ कि पंखे से लटक कर जान दे दूँ, कभी सोचती हूँ कि अपनी बिल्डिंग की छत पर चली जाऊँ और वहाँ से छलाँग लगा कर ख़ुदकुशी कर लूँ।

सुना आप ने! यह उस घर की बात बता रहा हूँ जहाँ माल की कोई कमी नहीं है, घर में अैश व इशरत के सारे नक्शे मौजूद हैं, मकान, ऑफिस, बिज़नस, गाड़ियाँ, बैंक बैलेंस, नोकर चाकर, आख़िर वह कौनसी नेमत है जो उस घर वालों को मयस्सर नहीं है, और सुनिए! यह वह लोग हैं जो छुट्टियाँ गुज़ारने हिन्दुस्तान के तफरीही मुक़ामात पंचगनी, महाबलेशवर, उटी, शिमला, कशमीर वग़ैरह नहीं जाते थे, बल्कि उन जगहों पर जाना अपनी शान के ख़िलाफ समझते थे। छुट्टियाँ गुज़ारने के लिए यह लोग बैरूनी ममालिक दुबई, लंदन, अमरीका, अफरीका, आस्ट्रेलिया, नियूज़ीलैंड, सुइज़रलैंड, वग़ैरह का इंतिख़ाब किया करते थे और सोचते यह थे कि उन मुक़ामात पर छुट्टियाँ गुज़ारने से हमें जिस्मानी निशात और ज़ेहनी सुकून हासिल होगा। लेकिन देखिए कि सुकून की तलाश में सरगरदाँ यह हज़रात चैन व सुकून के सारे असबाब व वसाइल के होते हुए भी किस क़दर परेशान और अपनी ज़िंदगी से किस क़दर तंग आ चुके हैं कि अपनी ज़िंदगी ही का ख़ात्मा चाहते हैं।

अब तो घबरा के यूँ कहते हैं कि मर जाएंगे
मर कर भी चैन न आया तो किधर जाऐंगे

एक बड़ी ग़लती

दोस्तो! हम यह समझते हैं कि अगर हमारे पास माल होगा तो हम बड़ी राहतों भरी ज़िंदगी गुज़ारेंगे, हमें इज़्ज़तें नसीब होंगी, सुसायटी और बिरादरी में हमारा एक मुक़ाम होगा, हमारी ज़िंदगी में इतमिनान होगा, चैन व सुकून होगा, घर वालों के माबैन उलफत और मुहब्बत क़ायम रहेगी, दिल आपस में जुड़े रहेंगे, जब कि हक़ीक़त में ऐसा नहीं है।

हमारी यह सोच दर असल एक बहुत बड़ी ग़लत फ़हमी है। माल व दौलत सामाने राहत ज़रूर हैं, असबाब सुकून ज़रूर हैं, लेकिन उनके हासिल कर लेने के बाद आदमी को हक़ीक़ी राहत और हक़ीक़ी सुकून नसीब हो जाए, यह कोई ज़रूरी नहीं है बल्कि अगर यह असबाब बेदीनी के साथ इकट्ठा किए गए होंगे, शरीअत के क़वानीन से इनहेराफ़ करके और सुन्नतों से ऐराज़ करते हुए उन्हें हासिल किया गया होगा तब तो यह सामान और असबाब, राहत तो क्या पहुंचाते, उलटे ज़हमत और परेशानी का सबब बनेंगे, इतमिनान व सुकून की बरबादी का सबब बनेंगे, ज़िल्लतों का तौक़ गले में पहनाऐंगे, आदमी तमाम तर ज़ाहिरी नेमतों के होते घर बैठे बिठाए ज़लील व ख़्वार हो जएगा, किसी को मुंह दिखाने के लायक़ तक नहीं रहेगा।

चैन और सुकून का राज़

पता चला कि राहत, इज़्ज़त, चैन, सुकून वग़ैरह यह सारी नेमतें ऐसी हैं जो माल व दौलत की बुनियाद पर नहीं मिला करतीं, इन तमाम नेमतों को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने अपने रसूल की इताअत व फ़रमाँबरदारी और आप की सुन्नतों की इत्तिबा के पीछे छुपा रखा है। जो शख़्स जिस क़दर आप का मुती व फ़रमाँबरदार और आप की सुन्नतों का इत्तिबा करने वाला होगा उसी क़दर उसके दिल में इतमिनान होगा, ज़िंदगी में चैन व सुकून होगा, बज़ाहिर असबाबे राहत उसके पास न होंगे लेकिन हक़ीक़ी राहत उसे ज़रूर हासिल होगी।

अल ग़र्ज़ कहने का मंशा यह है कि सुन्नत की इत्तिबा से सिर्फ़ उख़रवी मुनाफ़ा हासिल नहीं होते, बल्कि उसके ज़रिए बहुत से

दुनियवी मुनाफा भी नसीब होते हैं।

इंतिहाई आसान काम

अब वह अमल जो बहुत से दुनियवी और उख़रवी समरात व मुनाफे के हुसूल का ज़रिया हो वह किस क़दर मुहतम बिश्शान और अज़ीमुश्शान अमल होगा, लेकिन अफसोस सद अफसोस कि यह अमल जिस क़दर अज़ीमुश्शान है उसी क़दर हम लोग उसकी तरफ से ग़फलत का शिकार हैं, बहुत कम लोग हैं जो सुन्नतों का ऐहतिमाम करने वाले हैं। हालाँकि सुन्नतों का ऐहतिमाम कोई मुश्किल काम नहीं है, बल्कि अगर यह कहा जाए तो बजा होगा कि सुन्नतों का ऐहतिमाम सिर्फ आसान ही नहीं बल्कि इंतिहाई आसान काम है।

मैं अकसर कहा करता हूँ कि इत्तिबाए सुन्नत से ज़्यादा आसान काम शायद दुनिया में कोई और है ही नहीं, इस लिए कि इत्तिबाए सुन्नत को वजूद में लाने के लिए कोई अलाहेदा अमल करना ही नहीं होता बल्कि रोज़मर्रा के वह तमाम काम जो हम सुबह से लेकर शाम तक अंजाम दिया करते हैं, उन में नबी का तरीक़ा मालूम करके बस उन्हें नबी के तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम देना होता है।

एक प्यारी बात

इसी बात को हजरत जी मौलाना इनामुल हसन साहब रह० बड़े प्यारे अंदाज़ से फरमाया करते थे। फरमाते थे कि 'मैं यह नहीं कहता कि आप हज़रात सारी सुन्नतों पर अमल करें बल्कि सिर्फ यह कहता हूँ कि जो करें सुन्नत के मुताबिक़ करें''

देखिए! हज़रत ने कैसी प्यारी बात इर्शाद फरमाई कि जुमला तो एक कहा लेकिन उस एक जुमला में पूरी तक़रीर कर दी और वाज़ेह कर दिया कि हमें सारी सुन्नतों पर अमल नहीं करना है, बल्कि जो कुछ कर रहे हैं बस उसे सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम देना है।

मुफ्त का अज्र

देखिए! हम लोग बैतुल ख़ला जाने के लिए चप्पल पहनते हैं। अगर पहले दाऐं पैर में पहनें तब भी पहन लेंगे और अगर पहले बाऐं पैर में पहनें तब भी पहन लेंगे, इसी तरह बैतुल ख़ला में दाख़िल होते वक़्त अगर दायाँ क़दम पहले दाख़िल करें तब भी अंदर दाख़िल हो जाऐंगे और अगर पहले बायाँ क़दम दाख़िल करें तब भी अंदर दाख़िल हो जाऐंगे। इसी तरह कपड़ा पहनते वक़्त अगर हम पहले दाऐं आस्तीन में हाथ डालें तब भी कपड़ा पहन लेंगे और अगर बाऐं आस्तीन में हाथ डालें तब भी कपड़ा पहन लेंगे, इसी तरह घर से निकलते वक़्त अगर दायाँ क़दम पहले बाहर निकालें तब भी बाहर निकल जाऐंगे और अगर बाऐं क़दम से बाहर निकलें तब भी बाहर निकल जाऐंगे, इसी तरह घर में दाख़िल होते वक़्त अगर दायाँ क़दम पहले अंदर रखें तब भी घर में दाख़िल हो जाऐंगे और अगर पहले बायाँ क़दम अंदर रखें तब भी अंदर दाख़िल हो जाऐंगे।

लेकिन अगर हम उन आमाल में हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम का तरीक़ा मालूम कर लें कि :

जब हमारे नबी जूता या चप्पल पहनते तो पहले किस पैर में पहना करते थे?

बैतुल ख़ला में दाख़िल होते तो पहले कौनसा क़दम अंदर रखा करते थे?

जब बैतुल ख़ला से बाहर निकलते तो पहले कौनसा क़दम बाहर निकाला करते थे?

कपड़ा पहनते तो पहले किस आस्तीन में हाथ डाला करते थे?

जब कपड़ा निकालते तो पहले किस आस्तीन से हाथ निकाला करते थे?

जब घर में तशरीफ लाते तो पहले कौनसा क़दम अंदर रखा करते थे?

जब घर से बाहर निकलते तो पहले कौनसा क़दम बाहर निकाला करते थे?

और मालूम करने के बाद इस तरीक़े के मुताबिक़ अमल कर लें तो अमल तो वजूद में आ ही जाएगा, साथ ही हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तरीक़े की इत्तिबा के सबब वह अमल हमारे लिए अज्र व सवाब का बाइस भी बनेगा।

देखिए! क्या इस अज्र को पाने के लिए हमें अलग से कोई काम करना पड़ा? नहीं बल्कि वही काम जो हम कर रहे थे, और रोज़ाना किया करते थे, बस उसे नबी के तरीक़े के मुताबिक़ कर लिया तो हमारी ज़रूरत भी पूरी हो गई, साथ ही मुफ्त का अज्र भी मिल गया।

इसी बात को आरिफ बिल्लाह हज़रत अकदस डॉक्टर अब्दुल हई साहब रह० यूँ इर्शाद फरमाते थे कि "तुम एक काम को अपनी तरफ से और अपनी मरज़ी के मुताबिक़ अंजाम दो और उसी काम को तुम इत्तिबाए सुन्नत की नियत से हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम के बताए हुए तरीके के मुताबिक़ अंजाम दो तो दोनों कामों में ज़मीन और आसमान का फर्क़ होगा और उस फर्क़ को तुम खुद महसूस भी करोगे, इस लिए कि जो काम तुम अपनी मरज़ी से करोगे तो वह काम हो तो जावेगा, लेकिन वह तुम्हारा अपना काम होगा, जिस में तुम्हें कोई अज्र नहीं मिलेगा, और अगर उसी काम को तुम सुन्नत की इत्तिबा की निय्यत से हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम दो तो काम तो उस वक़्त भी होगा लेकिन उस वक़्त तुम्हें सुन्नत की अदाएगी का सवाब मिलेगा, साथ ही उस अमल की बरकत और उसका नूर भी उस में शामिल हो जाएगा''

हमारा हाल

दोस्तो! दुनिया के बहुत से काम जो बज़ाहिर बहुत मुश्किल होते हैं और जिन्हें अंजाम देने में बहुत सी दिक्क़तें और रोकावटें भी पेश आती हैं, उसके बावजूद हम उन कामों को बड़ी फ़िक्र और ऐहतिमाम के साथ बजा लाते हैं, लेकिन सुन्नत पर अमल एक ऐसा काम है जो बज़ाहिर मुश्किल भी नहीं, बल्कि इंतिहाई आसान है और उसको अंजाम देने में किसी तरह की कोई रोकावट भी पेश नहीं आती, उसके बावजूद हमारा हाल यह है कि हम सुन्नतों के ऐहतिमाम से ग़ाफ़िल रहते हैं।

एक मिसाल

सुन्नत पर अमल करना कितना आसान है और उस पर अमल करने में किसी तरह की कोई रोकावट भी पेश नहीं आती, इस बात को मैं एक मिसाल से वाज़ेह करूं ताकि बात पूरी तरह

समझ में आए।

देखिए! नींद से बेदार होकर आँखों को मलना, तीन बार اَلْحَمْدُلِلّٰه 'अल हम्दु लिल्लाह' कहना, एक बार कलिमाए तय्यबा पढ़ना, सोकर उठने के बाद की दुआ पढ़ना, यह सब वह आमाल हैं जो नींद से बेदार होने के बाद हमारे नबी अंजाम दिया करते थे, यानी नींद से बेदार होकर उन आमाल का बजा लाना मसनून है। अब आप मुझे बतायें कि उन आमाल में कौनसा अमल ऐसा है जो मुश्किल है और जिस की अदाएगी में हमें किसी तरह की कोई रोकावट और परेशानी लाहिक़ होती है। अगर हम नींद से बेदार होने के बाद सुन्नत की नियत से आँखों को मलना चाहें, तीन मर्तबा اَلْحَمْدُلِلّٰه 'अल हम्दु लिल्लाह' कहना चाहें, कलिमए तय्यबा पढ़ना चाहें, सोकर उठने के बाद की दुआ पढ़ना चाहें तो हमें इन आमल को बजा लाने में कोई दिक़्क़त और परेशानी पेश आती है? नहीं और क्या हमें उस वक़्त उन आमाल के बजा लाने से कोई रोकता है? कोई नहीं रोकता। अच्छा अगर कोई रोकना चाहे तो क्या वह रोक सकता है? नहीं रोक सकता। कोई तंज़ीम या कोई बातिल जमात रोकना चाहे, हमारे घर वाले हमें रोकना चाहें, हमारे पड़ोसी हमें रोकना चाहें, हमारी बिरादरी और हमारा ख़ानदान हमें रोकना चाहे या कोई ज़ाहिरी दुश्मन ऐसा हो जो हमें उस से रोकना चाहे तो क्या वह हमें उस से रोक सकता है? हरगिज़ नहीं रोक सकता। फिर आख़िर क्या वजह है कि जिस अमल की बजा आवरी में कोई दिक़्क़त नहीं, कोई परेशानी नहीं, कोई रोकावट नहीं, उसको अंजाम देने में हमारा कोई वक़्त भी ख़र्च नहीं होता, उसके बावजूद हम वह अमल अंजाम नहीं दे पाते तो क्या यह

सोचने की बात नहीं है? आख़िर उसकी वजह क्या है? वजह सिर्फ यह है कि इत्तिबाए सुन्नत की जितनी अहमियत हमारे दिलों में होनी चाहिए थी उतनी अहमियत नहीं रही और जब किसी काम की अहमियत आदमी के दिल में नहीं होती तो फिर उस काम की तरफ उमूमन उसकी तबियत कम ही चलती है।

अमल एक, इनामात बहुत

आप हज़रात मुझे बताऐं कि क्या सारी दुनिया के लोग मिल कर किसी को एक नेकी देना चाहें तो दे सकते हैं? हरगिज़ नहीं दे सकते। इसी तरह अगर सारी दुनिया देकर और सिर्फ दुनिया ही नहीं बल्कि सातों आसमान और सातों ज़मीन देकर सिर्फ एक नेकी ख़रीदना हो तो क्या एक नेकी ख़रीदी जा सकती है? हरगिज़ नहीं।

बताइए! जो नेकी इतनी क़ीमती हो कि सारी दुनिया के लोग मिल कर देना चाहें तो न दे सकें और सातों आसमान और सातों ज़मीना देकर भी उसे ख़रीद न जा सकता हो तो फिर सोचें कि आख़िर सुन्नत किस क़दर अज़ीमुश्शान और अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के नज़दीक किस क़दर पसंदीदा अमल होगा कि उस पर अमल के सबब सिर्फ एक नेकी नहीं मिलती, बल्कि बहुत सी नेकियाँ मिलती हैं। और सिर्फ नेकियाँ नहीं मिलतीं बल्कि नेकियों के साथ साथ ख़ालिक़ और मख़्लूक़ की मुहब्बत व महबूबियत, तअल्लुक़ मअल्लाह की नेमत, कुरबत इलल्लाह की दौलत, हिफाज़त, अनवार व बरकात वग़ैरह बहुत सी नेमतें हैं जो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त सुन्नत पर अमल के सबब बंदे को अता फरमाते हैं। लेकिन अफसोस कि हम ने सुन्नत की अहमियत को समझा नहीं। अगर हम उसकी अहमियत से वाक़िफ होते तो दानिस्ता तौर पर किसी भी सुन्नत पर

अमल का मौक़ा हाथ से जाने न देते।

दोस्तो! ज़रा ग़ौर करें कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को अपने महबूब से कितना प्यार है कि हम जा रहे हैं इस्तिंजा ख़ाना, और वह भी अपनी ज़रूरत पूरी करने के लिए लेकिन चूँकि जाने में और बाहर निकलने में हम ने उनके महबूब का ख़्याल रखा और उनकी इत्तिबा की तो वह हमें उस अमल का भी सिला देते हैं और इस तरह देते हैं कि वह सारा वक़्त जो इस्तिंजाख़ाना में सर्फ होता है, ज़ाय नहीं जाता बल्कि वह भी हमारे हक़ में अज्र व सवाब का बाइस बनता है।

हिफाज़त का ग़ैबी इंतिज़ाम

इसी तरह हम रोज़ाना सोते हैं, यह नींद हमारी जिस्मानी सेहत की ख़ातिर किस क़दर ज़रूरी है इस से हम सभी वाक़िफ हैं, अगर नींद न मिले तो फिर हमें किस क़दर बेचैनी होती है और उसके मुज़िर असरात किन किन सूरतों में हमारे जिस्म पर पड़ते हैं उसकी वज़ाहत की ज़रूरत नहीं है। लेकिन अगर हम ने सोने से पहले वो आमाल कर लिए जो उस वक़्त मसनून हैं और जिन्हें हमारे आक़ा सोने से पहले अंजाम दिया करते थे तो उसके बावजूद कि हम सो रहे हैं अपनी ज़रूरत पूरी कर रहे हैं, ग़फलत के आलम में हैं लेकिन अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उन मसनून आमाल के सबब हमारी हिफाज़त का ग़ैबी इंतिज़ाम इस तरह करते हैं कि एक फरिश्ते को हमारी हिफाज़त का इंतिज़ाम की डियूटी पर मुक़र्रर करते हैं जो रात भर हमारी हिफाज़त करता है और सिर्फ हिफाज़त का इंतिज़ाम नहीं होता बल्कि इन मसनून आमाल पर अमल करने के सबब वह सोना हमारे हक़ में इबादत शुमार किया जाता है।

दोस्तो! यह हैं मसनून आमाल की अहमियत और उनकी बरकात जिसे हम लोग "सुन्नत ही तो है" कह कर नज़र अंदाज़ कर दिया करते हैं लेकिन यह आमाल अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की बारगाह में बहुत बड़ी क़ीमत दिलाते हैं, हम सो रहे होते हैं, अपनी ज़रूरत पूरी कर रहे होते हैं, ग़फलत के आलम में होते हैं, हमें अपने आस पास की कुछ ख़बर नहीं होती, ऐसी ग़फलत के आलम में होते हैं, हमें अपने आस पास की कुछ ख़बर नहीं होती, ऐसी ग़फलत के आलम में होने के बावजूद हमारा परवरदिगार उस वक़्त हमारे साथ अताओं का क्या मामला कर रहा होता है, हमें उसका कुछ पता नहीं होता।

सुन्नतें सीखने की तरतीब

दोस्तो! हमें सुन्नत पर अमल करने की ख़ातिर बहुत कुछ करना नहीं है। बस सिर्फ़ यह करना है कि अपने वह तमाम आमाल जो हम सुबह से लेकर शाम तक अंजाम दिया करते हैं, उन कामों की फेहरिस्त बनाने के बाद यह देखें कि उन में कितने आमाल की सुन्नतें हम जानते हैं और कितने आमाल की सुन्नतें हम नहीं जानते। जिन आमाल की सुन्नतें हम जानते हैं उन्हें मसूनून तरीक़े के मुताबिक़ ही अंजाम दें और जिन आमाल की सुन्नतें हमें मालूम न हों उन्हें उसी वक़्त काग़ज़ पर लिख लें और उनका मसनून तरीक़ा किताबों में तलाश करें या फिर उलमाए केराम से मालूम कर लें, और जब इल्म हो जाए तो उसी तरीक़े के मुताबिक़ अमल शुरू कर दें।

एक धोका

इस काम के लिए काग़ज़ क़लम हमेशा पास में रखें और जब कभी कोई ऐसा अमल सामने आए, जिसका मसनून तरीक़ा हमें मालूम न हो या उस अमल से मुतअल्लिक़ दुआ का इल्म न हो तो उसे बिला किसी ताख़ीर के फ़ौरन लिख लें और फिर जल्द से जल्द उसकी तहक़ीक़ करें, नफ़्स और शैतान उस वक़्त यह समझाऐंगे कि हाँ हाँ ठीक है, उसे याद रखो, उस अमल की सुन्नत मालूम करना है, बस घर पहुंचते ही उसे किताब में देख लेना या मौलाना साहब के पास जाकर मालूम कर लेना।

ख़ूब अच्छी तरह समझ लें कि यह ख़्याल नफ़्स और शैतान की तरफ़ से डाला जाता है जिसे मान लेना और लिखने को मोअख़्ख़र कर देना दर हक़ीक़त उनके धोके में मुबतला हो जाना है। अगर उस अमल को उसी वक़्त न लिखा गया और बाद पर टाल दिया गया तो बहुत मुम्किन है कि वह बात ज़ेहन से मिट जाए और फिर कभी उस की तहक़ीक़ की नौबत ही न आए। इस लिए आप तहक़ीक़ ख़्वाह बाद में करें लेकिन लिख उसी वक़्त लें, जब लिख लिया जाएगा तो इंशा अल्लाह पूछने की नौबत भी आ जाएगी। अपने दीगर ज़रूरी कामों की तरह उसे भी अपना एक ज़रूरी काम समझें। जब फ़िक्र हो जाएगी और इस तरतीब से पूछने का सिलसिला शुरू हो जाएगा तो कुछ ही अरसे के बाद आप देखेंगे कि रोज़मर्रा के सारे आमाल सुन्नत के मुताबिक़ होते चले जा रहे हैं, अल्लाह पाक हम सब को इस तरतीब पर अमल करने की तौफ़ीक़ नसीब फ़रमाऐं।

मेरा मामूल

देखिए! यह काग़ज़ मेरी जेब में रखा हुआ है (आप ने एक काग़ज़ अपनी जेब से निकाल कर हाज़िरीन को दिखलाया) मैं भी इसी तरह लिखता जाता और पूछता जाता हूँ, यह मेरा आज का नहीं बल्कि सालों पुराना मामूल है। मैं इस काम के लिए एक अलग काग़ज़ हमेशा अपनी जेब में रखा करता हूँ जिस पर मैं अपने पूछने की बातें दर्ज करता जाता हूँ जिन में मसाइल भी होते हैं और सुन्नतें भी होती हैं, इन बातों का उनवान ही है 'पूछने की बातें'।

जहाँ कोई ऐसा काम सामने आया जिस का शरई मसअला मालूम न हो तो फौरन उसे काग़ज़ पर लिख लेता हूँ कि यह मसअला मालूम करना है। इसी तरह जिस किसी अमल की सुन्नत मालूम नहीं होती तो उसे भी लिख लेता हूँ कि इस अमल की सुन्नत मालूम करनी है। अगर मैं बहुत ऐहतियात से भी बतलाऊँ तो मसाइल पूछते और सुन्नतें मालूम करते हुए शायद मुझे ३६ साल का अरसा गुज़र गया होगा। उस वक़्त से लेकर आज तक लिखने का और पूछने का सिलसिला मुसतकि़ल जारी है। लिखता जाता हूँ पूछता जाता हूँ, लिखता जाता हूँ पूछता जाता हूँ। इतने तवील अरसे तक पूछने के बावजूद यह हाल है कि देखिए इस काग़ज़ पर अब भी बहुत सी बातें जो मसाइल और सुनन से मुतअल्लिक़ हैं लिखी हुए हैं जिन्हें अभी मालूम करना है। इतने तवील ज़माना तक पूछने के बावजूद यह ऐहसास होता है कि अब भी बहुत कुछ पूछना बाक़ी है। मुझे तो समझ में नहीं आता कि एक मुसलमान मसाइल जाने बिग़ैर और सुन्नतें सीखे बिग़ैर ज़िदगी

कैसे गुज़ारता है।

मसाइल मालूम करने की और सुन्नतें सीखने की यह एक बहुत ही आसान तरतीब है जो मैंने बतौफीक़े इलाही आप हज़रात के सामने बयान की है। मसाइल की रोशनी में और सुन्नत के साँचे में ढाल कर ज़िंदगी गुज़ारने के लए हमें बस इतना करना है और कुछ नहीं करना। अब बतलाइऐ! क्या यह भी कोई मुश्किल काम है? क्या हम ऐसा नहीं कर सकते? भला जो अमल इतना आसान हो कि उसके करने में कोई रोकावट पेश आती हो और न ही उसके करने में हमारा कोई वक़्त ख़र्च होता हो तो फिर आख़िर उस अमल के बजा लाने में हमें क्या दिक़्क़त और परेशानी है?

अल्लाह पाक याद दिलाते हैं

दोस्तो! जब हम से इतना आसान काम भी न हो सकेगा तो फिर हम खुद सोचें कि दूसरे दीनी अहकाम व अवामिर जिनकी बजा अवरी में एक गूना मशक़्क़त भी है, हम उन कामों को कैसे अंजाम दे पाऐंगे? सुन्नतों का ऐहतिमाम कोई मुश्किल काम नहीं है जैसा कि मैंने पहले अर्ज़ किया। बस ज़रा सी फिक्र और तवज्जुह की ज़रूरत है। और जिसे यह फिक्र लाहिक़ हो जाती है और वह सुन्नतों के ऐहतिमाम पर दवाम हासिल कर लेता है तो फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त खुद उसकी रहबरी फरमाते हैं, उसे ख़ुद याद दिलाते हैं कि देख मेरे बंदे! इस वक़्त की यह सुन्नत है अमल कर ले, इस वक़्त मेरे नबी का यह तरीक़ा है अमल कर ले, यह हो ही नहीं सकता कि आदमी को सुन्नतों पर अमल की फिक्र लाहिक़ और फिर अल्लाह पाक उसे ग़ाफिल रहने दें।

देखिए! हज़रत सुफियान सौरी रहमतुल्लाह अलैह का एक

वाक़्या जो बहुत मशहूर व मारूफ है और बहुत सी किताबों में लिखा हुआ है कि आप एक मर्तबा मस्जिद में दाख़िल हो रहे थे। दाख़िल होते भूले से दाऐं क़दम के बजाए बायाँ क़दम पहले अंदर रखने लगे तो फौरन ग़ैब से आवाज़ आई। अल्लाह पाक ने प्यार से 'सौर' कहते हुए मुतनब्बह किया कि ओ बैल! क्या कर रहा है? देखता नहीं कहाँ दाख़िल हो रहा है? यह मैं अपनी ज़बान में कह रहा हूँ, फौरन मुतनब्बह हुए, बायाँ क़दम पीछे किया और दाऐं क़दम से मस्जिद में दाख़िल हुए।

देखा आप ने! कैसे रहबरी की गई। जब बंदा हर वक़्त की सुन्नतों का ऐहतिमाम करता है तो फिर उसी तरह उसकी रहबरी की जाती है, फिर अल्लाह पाक उसे ग़ाफिल रहने नहीं देते। खुद याद दिलाते हैं कि मेरे बंदे! जब तू हर वक़्त मेरे नबी को याद रखता है, कभी नहीं भूलता तो फिर भला मैं तुझे आज कैसे भूल जाने दूँ? मैं तुझे भूलने नहीं दूंगा, खुद याद दिलाऊंगा।

एक अजीब नुकता

यह वाक़्या मैंने बारहा किताबों में पढ़ा, बयानात में सुना और खुद अपने बयानों में कई मर्तबा नक़ल भी किया, लेकिन इस वाक़्या से मुतअल्लिक़ एक बड़ा अजीब नुकता अभी अल्लाह पाक ने दिल में डाला। वह यह कि देखिए! हज़रत का नाम तो सुफ़ियान था लेकिन उस भूल पर मुतनब्बह करते हुए उन्हें सौर कहा गया और फिर यही सौर का लफ़्ज़ उनके नाम के साथ हमेशा के लिए वाबस्ता हो गया। अब जो भी आप का नाम लेता है, कहीं लिखता है, कहीं नक़ल करता है वह सुफ़ियान सौरी ही कहता है और आप उसी नाम के साथ जाने जाते हैं।

यहाँ सवाल यह पैदा होता है कि हज़रत सुफियान सौरी रहमतुल्लाह से उस वक़्त जो ख़िलाफे सुन्नत अमल का सुदूर हुआ था वह सहवन हुआ था आप ने क़सदन ऐसा नहीं किया था औ चूँकि वह अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के महबूब और चहेते थे इस लिए उन्हें उनकी भूल पर फौरन मुतनब्बह भी कर दिया गया, लेकिन आख़िर क्या वजह थी कि उन की उस भूल को दुनिया वालों के सामने हमेशा के लिए महफ़ूज़ कर दिया गया। हालाँकि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त तो बड़े बड़े जुर्मों और बड़े बड़े कुसूरों को छुपाने वाले और माफ फरमाने वाले हैं, फिर आख़िर उस अमल पर जोकि सहवन हुआ था ऐसी तंबीह की गई कि रहती दुनिया तक लोग याद रखें।

उसका जवाब यह है कि उस तंबीह को मशहूर करके और उसे हमेशा के लिए बाक़ी रख कर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त हमें यह बतलाना चाहते हैं कि देखो! सुन्नत के तर्क को मैंने शरअन मअसीयत क़रार नहीं दिया है, लेकिन चूँकि सुफ़्यान मेरे महबूब हैं और सुन्नतों के ऐहतिमाम के ज़रिए मेरे सब से ज़्यादा महबूब और चहेते को हर दम याद रखते हैं, इस लिए मैं यह हरगिज़ गवारा नहीं कर सकता कि मेरे महबूब की सुन्नतों का ऐहतिमाम करने वाला किसी मौक़े पर तर्के सुन्नत का मुरतकिब हो और मेरे सब से ज़्यादा महबूब और चहेते को भूल जाए, अगर उस ने ऐसा किया ख़्वाह भूले से किया हो, लेकिन उसका यह अमल मेर नज़दीक इतना बड़ा जुर्म है कि मैं फक़त उस पर तंबीह नहीं करूंगा, बल्कि उस तंबीह को हमेशा के लिए महफ़ूज़ कर दूंगा, ताकि नाम लेते वक़्त हर आदमी उन्हें याद दिलाए कि सुफ़्यान! याद रखो, तुम एक

मर्तबा हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को भूले थे और वह खुद भी लोगों की ज़बानी जब अपना नाम सुनें तो उन्हें भी यह ख़्याल रहे कि मैं एक मर्तबा हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को भूला था।

ताहम यह एक ऐसी तंबीह है जिसका ऐलान तो सारी दुनिया में होगा लेकिन इसके बावजूद उनका नाम लेकर लोगों को मज़ा आएगा और उनका तज़किरा करके उन से मुहब्बत बढ़ेगी। इस लिए कि मैंने यह तंबीह नाराज़ होकर नहीं की है बल्कि प्यार से की है और प्यार का इज़हार अपनों ही के साथ किया जाता है। लिहाज़ा ग़ौर करें कि हज़रत सुफ़ियान सौरी रह० अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के कितने अपने रहे होंगे कि उन्हें की जाने वाली तंबीह को हमेशा के लिए बरक़रार रखा गया, यही वजह है कि "सौरी" कहने के बावजूद किसी को नफरत नहीं होती, किसी को उन पर गुस्सा नहीं आता, बल्कि उन की मुहब्बत और भी बढ़ जाती है। यानी यह एक ऐसी तंबीह है कि भूल भी बतलाई जा रही है, उस पर तंबीह भी की जा रही है, उस तंबही का ऐलान भी हो रहा है, साथ ही यह भी बताया जा रहा है कि हम ऐसी छोटी छोटी भूल पर हर एक की गिरिफ्त तो नहीं करते लेकिन सुफ़ियान ने इत्तिबाए सुन्नत का इस दर्जा ऐहतिमाम किया है और उस ऐहतिमाम के सबब हमारा इतना कुर्ब हासिल कर लिया है और हमारे ऐसे महबूब बन चुके हैं कि अब हमें उनका नुक़सान गवारा नहीं है। लिहाज़ा मैं उस भूल पर न सिर्फ उन्हें मुतनब्बह करूँ, बल्कि उस तंबीह को दुनिया भर में मशहूर भी करूंगा। ताहम इस तंबीह को मशहूर कर देने के बावजूद इंतिज़ाम करूंगा कि जब कभी कोई उनका नाम लेगा तो

उन्हें हक़ीर समझेगा न ज़लील समझेगा, बल्कि अज़मत और मुहब्बत के साथ उनका नाम लेगा, यानी तंबीह को मशहूर करने की और बाक़ी रखने की ज़ाहिरी सूरत तो सज़ा की होगी, लेकिन दर हक़ीक़त यह सज़ा बतौर इनाम के होगी।

देखिए! यह कैसा अजीब नुकता है जो अल्लाह पाक ने अभी अभी ज़ेहन में डाला। हालाँकि यह वाक़या सालों से मेरे इल्म में है लेकिन इस वाक़ए से मुतअल्लिक़ यह नुक़्ता कभी भी ज़ेहन में नहीं आया। आज उसे अल्लाह पाक ने ज़ेहन में डाला। और मियाँ वही डालते हैं, उस में बयान करने वाले का कोई कमाल नहीं होता।

याद रखने वाले याद रखे जाते हैं

ऐसा नहीं है कि ऐहतिमाम करने वालों के साथ अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की रहबरी और याद देहानी का मामला सिर्फ गुज़िश्ता ज़माना के साथ या यह कि पिछले ज़माने के बरगुज़ीदा बंदों के साथ मख़्सूस था, अब यह सिलसिला बंद हो चुका। नहीं नहीं, ऐसा नहीं है, बल्कि सुन्नतों का ऐहतिमाम करने वाले बंदों की रहबरी आज भी की जाती है। अगर कभी किसी वजह से वह ग़ाफ़िल हो जाते हैं तो अल्लाह पाक उन्हें ग़ाफ़िल रहने नहीं देते, बल्कि उस वक़्त की सुन्नत ख़ुद उन्हें याद दिलाते हैं।

चुनान्चे एक साहब जिन्हें अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने इत्तिबाए सुन्नत की तौफ़ीक़ से नवाज़ा है और वह बिहम्दिल्लाह निहायत ऐहतिमाम के साथ सुन्नतों पर अमल करते हैं। उन्हों ने ख़ुद मुझे बतलाया कि अल हम्दु लिल्लाह, मैं अपनी दानिस्त में कभी किसी सुन्नत को तर्क नहीं करता, जिस वक़्त की जो सुन्नत मेरे इल्म में होती है पूरे ऐहतिमाम के साथ उस पर अमल करने की कोशिश

करता हूँ लेकिन एक मर्तबा बड़ा अजीब वाक़िया पेश आया। हुआ यूँ कि मैं रात में सोने के लिए अपने बिस्तर पर पहुंचा। अपने इल्म के मुताबिक़ सोने से पहले के सारे मसनून आमाल मैंने अंजाम दे लिए। अब जब लेटा और सोना चाहा तो नींद ग़ायब, नींद का कहीं नाम व निशान ही नहीं। मैं बड़ा परेशान हुआ कि आख़िर माजरा क्या है, नींद क्यों नहीं आ रही है? जब कि मुझे नींद बहुत जल्दी आती है। इतनी जल्दी कि सर तकिया पर रखते ही गहरी नींद सो जाता हूँ, लेकिन उस रात मैं लेटा करवटें बदल रहा था उसके बावजूद नींद का कहीं नाम व निशान न था। कहने लगे, जब काफी देर हो गई और मुझे कुछ समझ में न आया तो मैंने अल्लाह ही से पूछा कि या अल्लाह! मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा कि मुझे नींद क्यों नहीं आ रही है, लेकिन परवरदिगार! आप तो सब जानते हैं, आप को हर चीज़ का इल्म है, आप ही बता दीजिएं कि मुझे नींद क्यों नहीं आ रही है।

क्या कभी हम अल्लाह से बात करते हैं?

देखिए! अल्लाह पाक से पूछ रहे हैं, अपनी परेशानी की वजह मालूम कर रहे हैं। क्या कभी हम भी अल्लाह पाक से कोई बात पूछते हैं? किसी उलझन और परेशानी के वक़्त कभी हम भी उनकी तरफ मुतवज्जह होते हैं? नहीं मियाँ! हम कहाँ पूछते हैं, हमें उसकी फ़ुरसत ही कहाँ है कि हम अल्लाह पाक की तरफ मुतवज्जह हों, उन से बात करें, हम समझते हैं कि हम तो ज़मीन पर हैं और अल्लाह पाक अर्श पर हैं, वह कहाँ हम कहाँ, भला उन से भी कहीं बात हो सकती है, उन से भी कुछ पूछा जा सकता है?

दोस्तो! आज कल मोबाइल के वजूद ने समझ में न आने

वाली बहुत सी चीज़ों को समझा दिया है। वह बातें जो कल तक हमारी समझ से बालातर थीं आज मोबाइल के ज़रिए बहुत आसानी के साथ समझ में आ रही हैं। उसके ज़रिए बम्बई में बैठा शख़्स बैंगलौर में बैठे आदमी से बात कर लेता है, बैंगलौर में बैठा शख़्स देहली में बैठे आदमी से बात कर लेता है, देहली में बैठा आदमी हैदराबाद में बैठे आदमी से बात कर लेता है। ग़र्ज़ यह कि इस मोबाइल के ज़रिए आदमी अपने घर में रहते हुए हज़ारों मील दूर बैठे अपने शनसा से बआसानी बात कर लेता है। आख़िर दोनों के माबैन इतनी दूरी और इतने फ़ासले के बावजूद राब्ता हो रहा है या नहीं? बात चीत हो रही है या नहीं? आख़िर क्यों? इसी लिए तो कि दोनों एक दूसरे को जानते पहचानते हैं और दोनों के माबैन एक राब्ता क़ायम है।

हर वक़्त हैं बातें मगर आवाज़ नहीं है

दोस्तो! अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के साथ भी राब्ता क़ायम किया जा सकता है, तअल्लुक़ बनाया जा सकता है और बनाने वाले आज भी बना रहे हैं। यह जो हर वक़्त की सुन्नतें हैं, उन्हीं का ऐहतिमाम करना अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के साथ राब्ता बनाता है, उनके साथ तअल्लुक़ बनाता है। उन्हीं सुन्नतों के ऐहतिमाम के सबब अल्लाह पाक से शनासाई होती है, जान पहचान होती है, बाहम राब्ता क़ायम होता है और फिर रफ्ता रफ्ता अल्लाह पाक के साथ एक ऐसा ख़ास तअल्लुक़ बन जाता है कि फिर बंदा हर आन अल्लाह पाक को ख़ुद से बहुत क़रीब पाता है और जब चाहता है उन से बात कर लेता है।

ख़ुदा की क़सम! जिस दिन हमारी अल्लाह पाक से शनासाई

हो जाएगी, जान पहचान हो जाएगी, उनके साथ राब्ता और तअल्लुक़ बन जाएगा उस दिन हमें भी यह महसूस होगा कि अल्लाह पाक हमारे साथ हैं, बिल्कुल हमारे पास हैं, फिर उस मअियत और कुरबत के सबब हर दम उन से बातें होंगी, राज़ व नियाज़ होगा, बाहम सवाल व जवाब होंगे, और उस गुफ्तगू को, उस राज़ व नियाज़ को और उस सवाल व जवाब को हमारे और अल्लाह पाक के अलावह कोई नहीं जान सकेगा। कभी हम सवाल करेंगे तो वह जवाब देंगे, हम ग़मज़दा और परेशान होंगे तो वह तसल्ली देंगे और उस तसल्ली से हम जी ही जी में ख़ुश होंगे। किसी को उस गुफ्तगू की, उस राज़ व नियाज़ की, उस तसल्ली और दिलदारी की ख़बर भी न होने पाएगी, उसी गुफ्तगी का और उसी राज़ व नियाज़ का तज़किरा हज़रत ख़्वाजा अजीज़ुल हसन मजज़ूब रह० ने इस अंदाज़ से किया कि :

तुम सा कोई हम दम कोई दम साज़ नहीं है
हर वक़्त हैं बातें मगर आवाज़ नहीं है
हम तुम ही बस आगाह हैं उस रब्ते ख़फी से
मालूम किसी और को यह राज़ नहीं है

दोस्तो ! राज़ व नियाज़ की बातें अपने किसी क़रीबी और चहेते ही से की जाती हैं। जो अपना नहीं होता उस से कोई राज़ व नियाज़ की बातें नहीं करता। अगर हम चाहते हैं कि हम अल्लाह पाक के महबूब और चहेते बन जाऐं, हमें उन के साथ कुरबत व अपनाइयत का तअल्लुक़ हासिल हो जाए और हम भी उन के साथ इस तरह राज़ व नियाज़ की बातें किया करें तो यह सब कुछ सिर्फ और सिर्फ सुन्नतों के ऐहतिमाम की बदौलत ही

मुम्किन है। उसके बिग़ैर उसके साथ तअल्लुक बन ही नहीं सकता, उनकी मुहब्बत मिल ही नहीं सकती, उन तक पहुंचने का और हर दम उनके राब्ता में रहने का ज़रिया सिर्फ और सिर्फ सुन्नतों का ऐहतिमाम है। उसके बिग़ैर उन तक रिसाई और उनके साथ राब्ता बहुत मुश्किल है।

हमें अल्लाह की कुरबत का ऐहसास क्यों नहीं?

इन्हें देखिए! एक यह भी तो हैं जो अल्लाह पाक से बात कर रहे हैं और उन से अपनी परेशानी का हल पूछ रहे हैं। यह बात चीत इसी लिए तो हो रही है कि वह अल्लाह पाक को पहचान रहे हैं, उन्हें अपने से बहुत क़रीब पा रहे हैं, उनके साथ राब्ते में हैं। इस लिए कि आदमी उसी से बात चीत करता है जो उस से क़रीब होता है या वह जिस के साथ राब्ते में होता है। उसी कुरबत और राब्ते की बिना पर बात चीत होती है, पूछना और बताना होता है। मैं भी जो आप से गुफ्तगू कर रहा हूँ और आप मेरी गुफ्तगू सुन रहे हैं, यह इसी लिए तो कि हम एक दूसरे से क़रीब हैं, एक दूसरे को देख रहे हैं, इस कुरबत और देखने के सबब हमारे दरमियान एक राब्ता क़ायम है।

दोस्तो! जितने हम एक दूसरे से क़रीब हैं, उस से कहीं ज़्यादा अल्लाह पाक हम से क़रीब हैं। खुद फरमाते हैं:

وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيْدِ

कि मैं तुम्हारी शहेरग से भी ज़्यादा क़रीब हूँ। जब मख़्लूक़ की ईजाद करदा एक चीज़ के ज़रिऐ हज़ारों मील दूर होने के बावजूद राब्ता हो जाता है तो क्या ख़ालिक़े कायनात के बनाए गए इस दिल के ज़रिए उन से राब्ता करना जब कि वह हमारी शहेरग

से भी ज़्यादा क़रीब हैं मुम्किन नहीं है?

दोस्तो! अल्लाह पाक तो हम से इतने क़रीब हैं। लेकिन हम उनकी इतनी कुरबत के बावजूद उन से उतने ही ग़ाफ़िल हैं। यह ग़फ़लत इसी लिए है कि हम सुन्नतों के ऐहतिमाम से ग़ाफ़िल हैं। यह जो हर वक़्त के मसनून आमाल और मसनून दुआऐं हैं वह ग़फ़लतों से निकालने ही के लिए दिए गए थे कि हम उन के ज़रिए ग़फ़लतों से निकलें और खुदा के राब्ते में रहे, लेकिन हम ने सुन्नतों के ऐहतिमाम ही से ग़फ़लत बरती जिस की वजह से हमारे क़ल्ब पर ग़फ़लत का ऐसा परदा पड़ा कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त जैसी प्यारी और मेहरबान ज़ात का ऐहसास इतनी कुरबत के बावजूद हमें नहीं होता।

ग़फ़लत को दूर करने वाला अमल

देखिए! आदमी हर वक़्त किसी न किसी अमल में मशग़ूल होता है, पस जो आदमी जिस अमल में मशग़ूल है अगर उस ने अपना वह अमल सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम दिया है तो उस का मतलब यह है कि वह उस वक़्त ग़ाफ़िल नहीं है और अगर उसने वह अमल सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम नहीं दिया है तो उस का मतलब यह है कि वह उस वक़्त ग़ाफ़िल है।

उसे मिसाल से यूँ समझें कि एक आदमी अभी नींद से बेदार हुआ और बेदार होते ही उस ने वह तमाम आमाल जो उस वक़्त मसनून हैं अंजाम दे लिए तो उस का मतलब यह हुआ कि उसकी सुबह ग़फ़लत के साथ नहीं हुई है। और अगर बेदार होने के बाद उस ने वह आमाले मसनूना भुला दिए तो इसका साफ मतलब यह है कि उस ने सुबह इस हाल में की है कि वह अल्लाह पाक और

उनके प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की याद से बिल्कुल ग़ाफ़िल है। पस जिस शख़्स की चौबिस घंटे की ज़िंदगी में सुन्नतों का ऐहतिमाम हो तो यूँ समझें कि उस शख़्स की चाबीस घंटे की ज़िंदगी से ग़फलत दूर हो गई है। और जिसकी ज़िंदगी से जिस क़दर ग़फ़लत दूर होगी उसी क़दर वह ज़िंदगी के तामा शोबों में अल्लाह तआला के अहकामात का ख़्याल रखने वाला और अहसन तरीक़े पर उन की बजाआवरी करने वाला होगा।

फ़िक्र भी हो और मश्क़ भी

अब अगर कोई कहे कि यह तो बहुत मुश्किल काम है कि आदमी को हर वक़्त की सुन्नतों का ख़्याल रहे, हर अमल में नबी के तरीक़े का ध्यान रहे। तो उस तअल्लुक़ से भी सुन लिजिए कि यह काम फिल हक़ीक़त कोई मुश्किल काम नहीं है। हमें इस लिए मुश्किल नज़र आ रहा है कि हम ने उसका ऐहतिमाम नहीं किया है, उसकी मश्क़ नहीं की है। जो लोग सुन्नतों का ऐहतिमाम करते हैं उनके लिए हर वक़्त की सुन्नतों का ख़्याल रखना मुश्किल नहीं रहता। अगर हम भी थोड़ी कोशिश करें और अपनी सुन्नतों के ऐहतिमाम की फ़िक्र अपने ऊपर ग़ालिब कर लें तो हमें भी हर वक़्त की सुन्नतों का ख़्याल रहने लगेगा और कुछ ही दिनों में ऐसी मश्क़ हो जाएगी कि फिर इंशा अल्लाह रोज़मर्रा के सारे आमाल सुन्नत के मुताबिक़ होने लगेंगे।

आक़ा याद क्यों न आऐंगे

दोस्तो! हर वक़्त की सुन्नतों का ख़्याल रखना मुश्किल नहीं है। बल्कि यह एक ऐसी बात है जिसका हमारी अमली ज़िंदगी से भी

तअल्लुक़ है। अगर हम ग़ौर करें तो हम ख़ुद यह महसूस करेंगे कि एक ऐसा अमल जो किसी ख़ास वाक़ओ से तअल्लुक़ रखता हो या फिर हमें किसी ने बताया हो तो उस अमल के अंजाम देते वक़्त हमें उस वाक़ओ का या उस शख़्स का ख़्याल ज़रूर आता है।

कई साल पहले की बात है कि मेरा एक जगह जाना हुआ, वहाँ एक साहब से मेरी मुलाक़ात हुई। मुलाक़ात पर मैंने उन्हें कुछ अमली बातें भी बताई थीं। फिर दरमियान में कई साल ऐसे गुज़रे कि मेरा उस जगह जाना हुआ और न उन साहब से मुलाक़ात की कोई सबील बन सकी। अभी कुछ अरसा पहले जब मैं वहाँ गया तो वह साहब फिर मिले, मुलाक़ात पर अलैक सलैक हुई। कहने लगे शकील भाई! अगरचे बहुत अरसे बाद हमारी मुलाक़ात हो रही है लेकिन आप मुझे रोज़ाना याद आते हैं। मैंने कहा वह कैसे? कहने लगे कि गुज़िश्ता मुलाक़ात पर आप ने मुझे कुछ मसनून आमाल बतलाए थे, अलहम्दु लिल्लाह मैं उस वक़्त से उन तमाम आमाल पर पाबंदी के साथ अमल करता हूँ। आप ने बताया था कि जब सीढ़ी पर या किसी ऊँची जगह पर चढ़ना हो तो पहले दायाँ क़दम बढ़ाऐं और 'अल्लाहु अकबर' कहें। और जब नीचे की तरफ आना हो तो पहले बायाँ क़दम बढ़ाऐं और 'सुबहानल्लाह' कहें, यह सुन्नत है। मैं जब कभी सीढ़ी पर चढ़ते हुए दायाँ क़दम बढ़ाता हूँ और 'अल्लाहु अकबर' कहता हूँ या उतरते वक़्त बायाँ क़दम बढ़ाता हूँ और 'सुबहानल्लाह' कहता हूँ तो मुझे फौरन आप की याद आती है कि आप ने मुझे यह अमल बतलाया था।

मियाँ! जब सुन्नत बताने वाले शख़्स की याद आ सकती है तो फिर जिस ज़ात की यह सुन्नत है और जिसका यह तरीक़ा है अमल

के वक़्त उस ज़ात की याद क्यों नहीं आ सकती? ज़रूर आ सकती है, बस ज़रासी मश्क़ की ज़रूरत है। और जब मश्क़ हो जाती है तो फिर सुन्नत पर अमल करते हुए आक़ा की ज़ात ज़ेहन में मुस्तहज़र रहती है और इस क़दर लुत्फ आता है कि मैं बयान नहीं कर सकता।

सुन्नत पर अमल नबी की याद के साथ

दोस्तो! अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने आमाले मसनूना पर हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की याद के साथ अमल करने में एक अलग ही लज़्ज़त रखी है और यह लज़्ज़त अल्लाह पाक ने बहुत से लोगों को अता भी फरमाई है। अल्लाह पाक अपने फज़ल व करम से हमें भी यह नेमत अता फरमाऐं, इसी लिए मैं अकसर कहा करता हूँ कि सिर्फ सुन्नत के मुताबिक़ अमल न करें बल्कि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की याद के साथ सुन्नत पर अमल करें। अमल के वक़्त हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) याद आऐं। कर के देखें। दोस्तो! उसका मज़ा और उसका सुरूर कुछ और ही होगा, बल्कि मैं तो क़स्मिया कह सकता हूँ कि सुन्नत पर अमल करने में वह कैफ और सुरूर है कि जो एक मर्तबा उस से आशना हो जाएगा फिर वह दुनिया की सारी लज़्ज़तों और मस्तियों को भूल जाएगा, फिर उसे दुनिया की तमाम चीज़ों के मुक़ाबले सुन्नत की इत्तिबा में वह कैफ व सुरूर में मिलेगा कि बस वही जानेगा।

मैं यह बात इस लिए अर्ज़ कर रहा हूँ कि तजरबा और मुशाहिदा यह बतलाता है कि जब आदमी को बफज़्ले ख़ुदावन्दी कुछ आमाले मसनूना पर अमल की तौफीक़ हो जाती है तो फिर कुछ

दिनों के बाद रफ्ता रफ्ता उसे उन आमाल की ऐसी आदत पड़ जाती है कि फिर वह बेख़्याली में भी उन आमाल को मसनून तरीक़े के मुताबिक़ ही अंजाम देने लगता है। अमल के वक़्त नबी की याद नहीं होती कि मैं यह अमल क्यों कर रहा हूँ, किस की इत्तिबा में कर रहा हूँ। सुन्नत की इत्तिबा का ख़्याल रफ्ता रफ्ता दिल से निकलता जाता है। लिहाज़ा यह ख़्याल और ध्यान ज़रूर रहे कि अमल तो सुन्नत के मुताबिक़ हो लेकिन हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की याद के साथ हो, उन्हें भूल कर न हो। अमल के वक़्त आक़ा याद आऐं कि मैं यह अमल इस तरीक़े पर कर रहा हूँ कि मेरे आक़ा ने इस अमल को इसी तरह अंजाम दिया है। जब कभी नींद से बेदार हों तो उस वक़्त दोनों हथैलियों से आँखों को मलें और सोचें कि मेरे आक़ा बेदार होते वक़्त ऐसा किया करते थे। आँखों को मलते वक़्त तीन बार अलहम्दु लिल्लाह कहें और सोचें कि मेरे आक़ा उस वक़्त तीन बार अलहम्दु लिल्लाह कहा करते थे। फ़िर एक बार कलिमाए तय्यबा पढ़ें और सोचें कि आक़ा उस वक़्त एक बार कलिमए तय्यबा पढ़ा करते थे। फिर सो कर उठने के बाद की दुआ पढ़ें और सोचें कि बेदार होने के बाद आक़ा यह दुआ पढ़ा करते थे। इस तरह करते रहें और सोचते रहें, अमल होता जा रहा हो और तसव्वुर में आक़ा घूमते जा रहे हों।

दोस्तो! हम उन्हें न सोचें तो फिर किसे सोचें? उन्हें याद न करें तो फिर किसे याद रखें? हमारा उन के सिवा है ही कौन? लेकिन अफसोस कि हम अव्वल तो आमाले मसनूना का ऐहतिमाम नहीं करते और अगर बतौफीक़े इलाही कुछ कर भी लेते हैं तो आक़ा को भूल कर करते हैं, उनकी याद के बिग़ैर करते हैं इल्ला

माशा अल्लाह।

ऐसा अमल कि दुश्मन देखे याद दिलाए

दोस्तो! सुन्नतों का ऐहतिमाम करके देखें और हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की याद के साथ करके देखें, इंशा अल्लाह कुछ दिनों के बाद ऐसी मश्क़ हो जाएगी कि फिर सुन्नत के ख़िलाफ करना याद नहीं रहेगा।

चुनान्चे एक साहब का बयान है कि मेरी वालिदा ने मुझे बचपन में कपड़ा पहनने और उतारने का मसनून तरीक़ा बताया था और उसी वक़्त से मुझे मसनून तरीक़े के मुताबिक़ कपड़ा पहेनने और उतारने की मश्क़ कराई थी, मैं अलहम्दु लिल्लाह उसी वक़्त से मसनून तरीक़े के मुताबिक़ कपड़ा पहनता और उतारता हूँ। मुझे यह याद ही नहीं पड़ता कि मैंने कभी मसनून तरीक़े के ख़िलाफ कपड़ा पहना या उतारा हो। ऐसा कभी नहीं हुआ कि कुर्ता पहनते वक़्त पहले बाऐं अस्तीन में हाथ डाला हो या उतारते वक़्त पहले दाऐं आस्तीन से हाथ निकाला हो।

हाँ अलबत्ता कुर्ता पहनते वक़्त कभी कभी बिस्मिल्लाह कहना भूल जाता हूँ, लेकिन यह अल्लाह पाक ही का ऐहसान है कि जब कभी भूलता हूँ तो वह फौरन मुतनब्बेह करते हैं। फिर उन्हीं की दी हुई तौफीक़ से यह करता हूँ कि पहले मसनून तरीक़े के मुताबिक़ कुर्ता उतारता हूँ, उतारते वक़्त की दुआ पढ़ता हूँ, बिस्मिल्लाह के भूलने पर तौबा इस्तिग़फार करता हूँ, फिर बिस्मिल्लाह कह कर दोबारा मसनून तरीक़े मुताबिक़ पहेनता हूँ और फिर कपड़ा पहनने की दुआ भी पढ़ता हूँ।

फिर कहने लगे कि शकील भाई! नफ़्स और शैतान ने मुझे

एक मसनून अमल भुलाया था लेकिन मैं उसी वक़्त अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की दी हुई तौफ़ीक़ से चार अमल सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम देता हूँ। जब मैं इस तरह उनके भुलाने पर उस अमल को उसी वक़्त सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम देता हूँ और एक नहीं कई अमल सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम देता हूँ तो फिर नफ़्स और शैतान आइन्दा भुलाने की जुरअत नहीं करते बल्कि अज़ ख़ुद मुझे याद दिलाते हैं कि देखो यह सुन्नत है, देखो यह सुन्नत है।

उनकी इस बात का तो मुझे भी ख़ूब तजरबा है कि जब नफ़्स और शैतान ने मिलकर मुझे किसी अमल का मसनून तरीक़ा भुला दिया तो मैंने उसी वक़्त अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की दी हुई तौफ़ीक़ से उस अमल को भी सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम दिया, साथ ही उस से मुतअल्लिक़ा दूसरे आमाल भी सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम दिए, उसका फ़ायदा यह हुआ कि आइन्दा जब भी उस अमल का मौक़ा आया तो उन गुरू घंटालों ने ख़ुद याद दिलाया कि देखो यह सुन्नत है, ख़्याल रखो यह सुन्नत है। देखिए! जब उन्होंने सुन्नत पर अमल की मश्क़ की और ख़ूब ऐहतिमाम के साथ अमल किया तो कह रहे हैं कि मुझे ख़िलाफ़े सुन्नत कपड़ा पहनना याद ही नहीं है।

दोस्तो! अगर हम भी फ़िक्र करें और थोड़ी मश्क़ कर लें तो हमें भी हर अमल में मसनून तरीक़े का ऐहतिमाम नसीब हो सकता है, यह कोई मुश्किल काम नहीं है। जब बंदा किसी काम के करने की फ़िक्र करता है और उस फ़िक्र को अपने ऊपर ग़ालिब कर लेता है और उस काम को पाए तकमील तक पहुंचाने की मुसलसल कोशिश करता रहता है तो फिर अल्लाह पाक उसकी कोशिशों को

ज़ाओ जाने नहीं देते, उसे उसके मक्सूद तक ज़रूर पहुंचाते हैं।

एक अहम बात

जिस तरह हमें नमाज़ अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की याद के लिए दी गई थी इसी तरह आमाले मसनूना हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की याद के लिए दिए गए थे। लेकिन हमारा हाल यह है कि हमें नमाज़ में अल्लाह की याद आती है और न आमाले मसनूना के वक़्त हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ही याद आते हैं। हालाँकि यह दोनों आमाल याद के लिए दिए गए थे।

याद रखें! मसनून दुआओं का ऐहतिमाम करना गोया उस वक़्त अल्लाह पाक को याद रखना है और उन से ग़फलत बरतना गोया उस वक़्त अल्लाह पाक को भूल जाना है। इसी तरह आमाले मसनूना का ऐहतिमाम करना गोया उस वक़्त हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को याद रखना है और उन से ग़फलत बरतना गोया उस वक़्त हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को भूल जाना है।

क़ब्र के सवालात की तैयारी

नीज़ अगर बग़ौर देखें तो मसनून दुआओं और मसनून आमाल का ऐहतिमाम करना दर असल क़ब्र के सवालों के जवाबात की तैयारी करना है। वह इस तरह कि क़ब्र में हर शख़्स से तीन सवाल किए जाएंगे।

१. पहला सवाल होगा مَنْ رَبُّكَ 'मन रब्बुक' कि तुम्हारा रब कौन है?

२. दूसरा सवाल होगा مَادِيْنُكَ 'मा दीनुक' कि तुम्हारा दीन

क्या है?

३. तीसरा सवाल उस सूरत में होगा कि हज़रत नबिए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम का चेहरए मुबारक दिखला कर पूछा जाएगा कि : مَاكُنْتَ تَقُوْلُ فِيْ هٰذَا الرَّجُل 'मा कुन्त तकूलु फी हाज़र्रजुल'

कि इन्हें पहेचानते हो यह कौन हैं?

पस जो शख़्स मसनून दुआओं का ऐहतिमाम करता है वह दर असल क़ब्र के पहले सवाल के जवाब की तैयारी कर रहा है और उन दुआओ के ज़रिए हर वक़्त अपने रब को याद रख रहा है। और सि ने दुनिया में हर वक़्त अपने रब को याद रखा होगा वह भला क़ब्र में जाकर उन्हें क्यों कर भूल जाएगा। वह वहाँ भी उन्हें याद रखेगा और फौरन जवाब देगा कि मेरा रब अल्लाह है जिस से मैं हर दम सवाल किया करता था, जो मेरी हर ज़रूरत को पूरा किया करता था और जिसे मैं हर मुश्किल में पुकारता था।

इसी तरह जो शख़्स मसनून आमाल का ऐहतिमाम करता है वह दर असल क़ब्र के तीसरे सवाल के जवाब की तैयारी कर रहा है। इस तौर पर कि इन मसनून आमाल के ज़रिए वह हर वक़्त हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को याद रखता है। पस जिस ने दुनिया में रहते हुए अपने तमाम आमाल में आप की इत्तिबा की और उस इत्तिबा के ज़रिए हर दम आप को याद रखा वह क़ब्र में भी आप को याद रखेगा, आप को पहचानेगा। और सिर्फ याद ही नहीं रखेगा बल्कि आप के दीदार का मुनतज़िर होगा कि कब मैं अपने महबूब का रूख़े अनवर देखूँ और उनकी ज़ियारत करूँ।

इस लिए कि दुनिया में तो ज़ियारत न कर सका, वहाँ तो दीदार के लिए आँखें तरस गईं थीं। दिल बहुत तड़पता और बहुत

मचलता था कि काश! एक बार ही सही, लेकिन हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ज़ियारत हो जाती। लेकिन अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मसलहत कि वहाँ ज़ियारत न हो सकी। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त से कहता और माँगता इस लिए नहीं था कि किस मुंह से माँगूँ? सारी ज़िंदगी तो हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की बग़ावत में गुज़ारी है, उनकी नाफ़रमानी में गुज़ारी है, फिर भला में उनहें मुंह दिखाने के क़ाबिल कहाँ? इस लिए कभी उसकी दरख़्वास्त न की। बस यही सोच कर अपने दिल को तसल्ली देता और बहला लेता कि दुनिया में ज़ियारत न होने का ग़म न कर, क़ब्र में ज़ियारत हो ही जाएगी, मैं तो कब से इस दिन का और इस घड़ी का इंतिज़ार कर रहा था, मुद्दतों इंतिज़ार के बाद आज मौक़ा मिला है, लिहाज़ा आज जी भर कर अपने महबूब का दीदा करूंगा।

पस जूँही आक़ा का चेहरए अनवर उसे दिखलाया जाएगा वह मचल उठेगा, फ़र्ते मुहब्बत से उसका चेहरा खिल जाएगा, और वह बड़े इतमिनान के साथ मुसकुराते हुए जवाब देगा कि उन के बारे में मुझ से क्या पूछते हो, मैंने उन्हें दुनिया में भुलाया ही कब था जो आज भूल जाऊँगा? मैं तो हर वक़्त उन्हें याद रखता था और उन्हें तसव्वुर में रखते हुए अपना हर काम उन्हीं के तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम दिया करता था। यह मेरे नबी हैं, मेरे आक़ा जनाब मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) हैं और मैं उनका अदना उम्मती और अदना गुलाम हूँ।

एक मुत्तबअए रसूल का हाल

हाँ दोस्तो! याद रखने वालों के साथ ऐसा ही मामाला होता है। चुनान्चे अभी हाल ही में एक बुजुर्ग का इंतिक़ाल हुआ जो बड़े

अल्लाह वाले थे। सादात में से थे, बड़े आलिम थे और बड़े ख़ुश मिज़ाज थे। गुजरात के एक मदरसे में हदीस की बड़ी किताबें पढ़ाया करते थे। सारी ज़िंदगी क़ालल्लाह और क़ालर्रसूल में गुज़ार दी थी। इतने बड़े आलिम और इतने बड़े अल्लाह वाले होने के बावजूद अपने आप को बहुत छुपाया था। लोगों में घुले मिले रहते और उन से ख़ूब दिल लगी किया करते थे। जब उनका इंतिक़ाल हुआ तो कुछ दिनों के बाद उन के एक शागिर्द ने उन्हें ख़्वाब में देखा। और देखा क्या मियाँ, अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने दिखलाया कि देखो! मुझे और मेरे महबूब को याद रखने वाले क़ब्र में भी किस शान से और कितने इतमिनान के साथ रहते हैं।

अल ग़र्ज़ उनके शागिर्द ने ख़्वाब में क़ब्र का मंज़र देखा कि हज़रत क़ब्र में लेटे हुए हैं। मुनकर नकीर आए और अपने मामूल के मुताबिक़ सवालात करने लगे। जब चेहरए अनवर दिखला कर सवाल किया गया कि उन्हें पहचानते हो यह कौन हैं? तो हज़रत ने बड़े इतमिनान से बल्कि एकगूना नाज़ के साथ जवाब दिया कि मुझ से क्या पूछते हो, नाना जान ही से पूछ लो कि मैं कौन हूँ।

ज़रा सोचें दोस्तो! कि ज़िंदगी में उन्होंने हुज़ूर को कैसा याद रखा होगा, आक़ा के साथ कैसा तअल्लुक़ बनाया होगा और इत्तिबाए सुन्नत का किस दर्जा ऐहतिमाम किया होगा कि इतने नाज़ से जवाब दे रहे हैं। इतना नाज़ भरा जवाब वही शख़्स दे सकता है जिसने इत्तिबाए कामिल के ज़रिए आप के साथ एक ख़ास तअल्लुक़ और एक ख़ास रिश्ता बना लिया हो, ऐसा जवाब हर एक के बस की बात नहीं है। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने उन महबूब और मक़बूल बंदों के सदक़े और तुफ़ैल में हम सियाकारों को भी आप

का ऐसा तअल्लुक़, ऐसी इत्तिबा और ऐसी याद नसीब फरमाऐं कि जिस की बुनियाद पर न सिर्फ क़ब्र में हम आप को पहचान लें, बल्कि रोज़े महशर जब हज़रत नबिए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का सामना हो तो आप भी हमें पहचान लें, हमें देख कर खुश हो जाऐं, मुहब्बत से गले लगा लें और अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की बारगाह में हमारी सिफारिश कर दें कि या अल्लाह! यह मेरा उम्मती है जिस से मैं मुहब्बत करता हूँ। इस लिए कि उस ने दुनिया में मुझे हमेशा याद रखा, कभी फरामोश न किया, मेरे ग़म को अपना ग़म और मेरे दर्द को अपना दर्द समझा और उसी ग़म और दर्द के साथ अपनी सारी ज़िंदगी गुज़ारी। या अल्लाह! आज मैं इस से राज़ी हूँ, पस आप भी उस से राज़ी हो जाइऐ, उसे प्यार की निगाह से देख लीजिए और अपनी आगोशे रहमत में जगह दे दीजिए। और फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त हज़रत नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सललम की इस मुहब्बत भरी दरख़्वास्त को हमारे हक़ में क़बूल फरमा लें।

अल ग़र्ज़ मसनून दुआओं और मसनून आमाल का ऐहतिमाम दर असल क़ब्र के सवालात के जवाबात की तैयारी है जिस से आज हम लोग हद दर्जा ग़ाफिल हैं। अल्लाह पाक हमारे इस कुसूर तो माफ फरमाऐं और हमें हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सललम की ऐसी इत्तिबा जो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को मतलूब और महबूब हो, नसीब फरमायें।

हमारा ज़ाब्ता

दोस्तो! दुनिया में हमारा ज़ाब्ता यह है कि याद रखने वालों को हम याद रखते हैं और भूला देने वालों को हम भूला दिया करते

हैं। पस जब हमारा दसतूर और ज़ाब्ता यह है तो हम अपने उस ज़ाब्ता के मुताबिक़ सोच लें कि जो शख़्स मसनून दुआओं और मसनून आमाल के ज़रिए जिस क़द्र अल्लाह पाक और उनके प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सललम को दुनिया में याद रखेगा वह उतना ही दुनिया में भी याद रखा जाएगा और क़यामत के रोज़ भी याद रखा जाएगा। और जो शख़्स दुनिया में इन आमाल से जितनी ग़फ़लत बरतेगा और इन्हें भूलाए रखेगा वह न सिर्फ़ दुनिया में भुलाया जाएगा, बल्कि क़यामत के रोज़ भी वह उतना ही भुला दिया जाएगा। और जिसे क़यामत के रोज़ अल्लाह पाक और उसके प्यारे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सललम भूला दें, उस से मुंह फेर लें और उसे दूर कर दें तो फिर बताऐं कि उस रोज़ उसका पुरसाने हाल कौन होगा?

यह मुंह फेरा जाना मुम्किन है और यक़ीनन कुछ लोग ऐसे होंगे जिन से क़यामत के रोज़ अल्लाह पाक मुंह फेर लेंगे। अगर यह मुम्किन न होता तो नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सललम यह दुआ न मांगते और अपने उम्मतियों को यह दुआ न सिखाते:

اَللّٰھُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُبِکَ مِنْ اَنْ تَصُدَّعَنِّیْ وَجْھَکَ یَوْمَ الْقِیٰمَةِ

कि या अल्लाह ! मैं इस बात से आप की पनाह माँगता हूँ कि क़यामत के रोज़ आप मुझ से अपना चेहरा फेर लें। लिहाज़ा अगर हम चाहते हैं कि क़यामत के रोज़ अल्लाह पाक हमें याद रखें, हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) हमें याद रखें, हम से मुंह न फेरें तो हमें मसनून दुआओं और मसनून आमाल का बहुत ऐहतिमाम करना चाहिए कि उसके बिग़ैर इस बुरे अंजाम से नहीं बचा जा सकता।

अमदम बर सरे मतलब

ख़ैर, बात पर बात निकलती गई और गुफ्तगू तवील हो गई। ताहम बिहम्दिल्लाह दरमियान में भी काम की बातें हुईं हैं। वरना तो मैं उन साहब का वाक्या नक़ल कर रहा था। वह कहते हैं कि मैं जूँ ही अल्लाह पाक की जानिब मुतवज्जह हुआ और मैंने उन से पूछा तो फौरन अल्लाह पाक ने मेरे दिल में बात डाली कि मेरे बंदे! आज तो मिसवाक करना भूल गया है, जब तू रोज़ाना सोने से पहले मिसवाक के ज़रिए मेरे नबी को याद रखता है तो फिर भला मैं तुझे आज कैसे भूल जाने दूँगा? मैं तुझे मिसवाक किए बिग़ैर सोने देना नहीं चाहता था, इसी लिए मैंने तेरी नींद को रोक लिया था। उठ, नबी की याद के साथ मिसवाक कर, फिर सो जा। कहते हैं कि मैं बिस्तर से उठा, मिसवाक की और दोबारा लेट गया। अब जो लेटा तो मामूल के मुताबिक़ फौरन नींद आ गई।

देखा आप ने! पूछने पर अल्लाह पाक की जानिब से रहबरी हुई या नहीं? उनकी जानिब से जवाब आया या नहीं? और मियाँ? पूछने पर उनकी जानिब से जवाब आया ही करता है, कोई पूछ कर तो देखे, कोई उन्हें दिल से याद तो करे, कोई उनसे बात तो करे, वह हर एक की सुनते हैं और हर एक के सवाल का जवाब देते हैं। यह जो दिल में बात डाली जाती है और कभी किसी बात का इलहाम होता है, यही दर हक़ीक़त उनका जवाब होता है, वह इसी तरह अपने बंदों की रहबरी किया करते हैं।

दोस्तो! कभी हम भी तो उन से बात करके देखें, उन से कुछ पूछ कर देखें, ख़ुदा की क़सम वह ज़रूर जवाब देंगे, अगर जवाब न दें तो मुझ से कहिएगा। सुन्नत का ऐहतिमाम करने वालों की आज

भी रहबरी की जा रही है, उन्हें आज भी भूलने नहीं दिया जाता। काश! हम भी सुन्नतों का ऐहतिमाम करने वाले और उन सुन्नतों के ज़रिए हर दम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को याद रखने वाले बन जाते तो हमें भी ऐसे ही मुतवज्जह किया जाता और हमारी भी ऐसी ही रहबरी की जाती।

करामात का जुहूर मक्बूलियत की दलील नहीं

लेकिन हम लोग सुन्नतों का ऐहतिमाम करते हैं और न ऐहतिमाम करने वालों को कुछ अहमियत देते हैं, बल्कि कश्फ व करामात वालों को ढूंढते हैं और उन्ही के मोतकि़द हुए जाते हैं। कहते हैं फलाँ साहब बड़े साहबे कश्फ हैं, फलाँ साहब से बड़ी करामतों का जुहूर होता है।

याद रखें! कश्फ़ व करामात का जुहूर मक्बूलियत की दलील नहीं है, ख़िर्क़े आदत चीज़ों का जुहूर तो कभी कभी किसी ग़ैर मोमिन के ज़रिए भी हो जाता है और हुआ भी है, तो क्या उस सूरत में यह कहा जाएगा कि वह शख़्स अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की बारगाह में मक्बूल है? हरगिज़ नहीं, लेकिन आज कल लोग उसी को सब कुछ समझे बैठे हैं और ऐसा नहीं है कि आज कल समझ रहे हैं, बल्कि हर दौर में कुछ नादान ऐसे रहे हैं।

चुनान्चे हज़रत जुनैद बग़दादी रहमतुल्लाह अलैह का वाक़या मैंने एक किताब में देखा कि एक शख़्स दस साल तक हज़रत की ख़िदमत में रहा। दस साल कोई मामूली मुद्दत नहीं होती, एक तवील ज़माना होता है। इतना तवील ज़माना हज़रत की ख़िदमत में गुज़ारने के बाद एक रोज़ कहने लगा कि हज़रत! मैं जाना चाहता हूँ। फरमाया क्यों जाना चाहते हो, क्या बात पेश आ गई? कहने

लगा कि हज़रत! बात दर असल यह है कि मैंने आप का बड़ा नाम सुना था कि आप बड़े बुजुर्ग हैं, बड़े अल्लाह वाले हैं, इलाक़ा भर में आप की शोहरत और आप का चरचा था। मैंने सोचा कि जब हज़रत इतने बड़े बुज़ुर्ग और इतने बड़े अल्लाह वाले हैं तो उन से कश्फ़ व करामात का सुदूर लाज़िमन होता होगा और अगर मैं उन की सोहबत में रहुंगा तो मुझे उनकी बहुत सी करामतों को क़रीब से देखने का मौका मिलेगा, बस यह सोच कर मैं आप की ख़िदमत में पड़ा रहा, लेकिन इतना तवील ज़माना आप की ख़िदमत में गु़ज़ारने के बावजूद मैंने आप की कोई करामत नहीं देखी, इस लिए अब वापस जाना चाहता हूँ। फरमाया ठीक है, अगर तुम जाना ही चाहते हो तो ज़रूर चले जाओ, मैं तुम्हें हरगिज़ नहीं रो दूंगा, लेकिन एक बात बताते जाओ कि तुम ने दस साल का तवील अरसा मेरे साथ गुज़ारा, इस दौरान क्या कभी कोई अमल ख़िलाफे सुन्नत भी देखा? कहने लगा नहीं, ख़िलाफे सुन्नत अमल तो कोई नहीं देखा। फरमाया मिया! जुनैद की इस से बड़ी करामत और क्या होगी कि दस साल के अरसे में इस से किसी ख़िलाफे सुन्नत अमल का सुदूर नहीं हुआ।

देखिए! ऐसे लोग भी होते हैं जो सिर्फ कश्फ व करामात के मुंतज़िर रहते हैं। और जिसकी ज़िंदगी में उन ख़्वारिक़ आदत का जुहूर नहीं देखते, उसकी ज़िंदगी ख़्वाह इत्तिबाए सुन्नत से कितनी ही आरास्ता क्यों न हो उसे बिल्कुल ख़ातिर में नहीं लाते, जबकि इत्तिबाए सुन्नत के मुक़ाबले में उन माद्दी कश्फ व करामात की कोई हैसियत नहीं है।

इसी लिए आरिफ बिल्लाह हजरत अक़दस डॉक्टर अब्दुल हई

आरफी रह० फरमाया करते थे कि "माद्दी कश्फ व करामात से बेहतर रूहानी कश्फ व करामात हैं और यह रूहानी कश्फ व करामात इत्तिबाए सुन्नत के ज़रिए हासिल होते हैं" इत्तिबाए सुन्नत एक ऐसा अमल है कि उस ज़रिए इंसान रूहानी तौर पर साहबे करामत हो जाता है। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने आमाले मसनूना में इतनी कशिश और जाज़बियत रखी है कि उनका ऐहतिमाम करने वाला इन्दल्लाह व इन्दन्नास मक़बूल बन जाया करता है।

असल कमाल इत्तिबए सुन्नत है

दोस्तो! एक मोमिन का असल कमाल इत्तिबाए सुन्नत है, उसकी इन्दल्लाह महबूबियत और मक़बूलियत की दलील ही यह है कि उसका हर फेअल (अमल) और हर अमल ख़िलाफे सुन्नत हो भी गया तो शरअन उस पर सरज़निश होती है और न उस पर किसी क़िस्म का कोई मुवाख़ज़ा होता है और न ही उस भूल चूक से उसकी महबूबियत और मक़बूलियत पर कोई हर्फ आता है बल्कि मिन जानिबिल्लाह उसे मुतवज्जह किया जाता है और उसकी रहबरी की जाती है जैसा कि मैंने पहले अर्ज़ किया।

महबूबियत की बक़ा का ग़ैबी इंतिज़ाम

नीज़ अगर बग़ैर देखें तो यह भूल चूक मुत्तबअे सुन्नत बंदे के हक़ में अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की एक बहुत बड़ी मेहरबानी तो है ही, साथ ही उस बंदे की महबूबियत और मक़बूलियत की बक़ा का एक ग़ैबी इंतिज़ाम भी है। वह इस तौर पर कि जब उस बंदे से इस तरह की भूल चूक सरज़द होती है तो उस भूल चूक के सबब उसे नाज़ नहीं होता, यह ख़्याल नहीं होता कि मैं बहुत कुछ करता

हूँ मैं बड़ा मुत्तबअे सुन्नत हूँ, हर वक़्त की सुन्नतों का मुझे बड़ा ख़्याल रहता है वग़ैरह वग़ैरह। अगर यह भूल चूक न हो तो फिर आदमी के नाज़ में मुबतला होने का अंदेशा रहता है जो कि हलाकत व बरबादी का पेश ख़ेमा है। पस उस भूल चूक का एक फायदा तो यही है कि बंदा नाज़ में मुबतला होने से महफ़ूज़ रहता है।

दूसरा फायदा यह है कि जब वह उस तर्के सुन्नत पर पछताता है कि हाए यह मुझ से क्या हो गया, मैं उस वक़्त की सुन्नत को कैसे भूल गया, तो उसके उस पछतावे के बाद अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का प्यार उस पर और बढ़ जाता है कि मेरे बंदे को देखो तो सही, मेरे महबूब के तरीक़े की ख़िलाफवरज़ी पर कैसा पछता रहा है। हालाँकि उस ने क़सदन ऐसा नहीं किया है बल्कि सहवन उस से ऐसा हो गया है, उसके बावजूद यह इस क़द्र नादिम और शरमिन्दा हो रहा है। बंदे की इस नदामत व शरमिन्दगी पर और उसके इस पछतावे पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की नज़रे रहमत और नज़रे मुहब्बत उसकी तरफ और मुतवज्जह हो जाती है, प्यार और बढ़ जाता है। इत्तिबाए सुन्नत पर उसे जो कुछ मिलता उस नज़रे रहमत और नज़रे मुहब्बत की बिना पर उस से कहीं ज़्यादा अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उसे अता फरमाते हैं। पस इत्तिबाए सुन्नत का जो मक़सद था कि बंदा अलताफे बारी और इनायाते रब्बानी का मोरिद बन जाए वह मक़सद उस सूरत में भी हासिल हो जाता है बल्कि उस के साथ कुछ और इज़ाफ़ा भी कर दिया जाता है। यह एक अलग और मुस्तक़िल नफा है जो भूले से तर्के सुन्नत के बाद पछताने पर उसे हासिल होता है।

नफ्स और शैतान के पैदा करने की हिक्मत

इसके अलावा इत्तिबाए सुन्नत के ऐहतिमाम का एक फायदा यह भी है कि नफ्स और शैतान जो इंसान के सब से बड़े दुश्मन हैं, उनके धोकों से और उनके मक्र व फरेब में गिरिफ्तार होने से उस मुत्तबओ सुन्नत बंदे की हिफाज़त की जाती है।

दोस्तो! हम सब जानते हैं कि नफ्स और शैतान हमारे दुश्मन हैं और उन दोनों दुश्मनों को भी अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ही ने पैदा किया है। अब यह बात कि जब अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने बंदों पर मेहबान हैं तो फिर उन्होंने अपने बंदों के लिए दुश्मन क्यों बनाए? यह एक अलग और एक मुस्तकि़ल सवाल है जिसका तफ्सीली जवाब तो मैं फिर किसी वक़्त दूंगा, अलबत्ता उस वक़्त मुख़्तसरन इतना कहता चलूँ कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ईमान वालों के दोस्त हैं, ख़ुद इर्शाद फरमाया है:

اَللّٰهُ وَلِيُّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا

कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ईमान वालों के दोस्त हैं और उस दोस्ती का सुबूत यह दिया है कि क़दम क़दम पर हमारी ज़रूरत के सारे असबाब व वसाइल हमें मुहय्या फरमा दिए और हमारी हर मुम्किन ज़रूरत और राहत का पूरा ख़्याल रखा।

दुश्मन के पैदा करने में हिक्मत यह है कि अल्लाह पाक तो हमारे हैं और उन्होंने अपने दोस्त होने का सुबूत भी फराहम कर दिया है, लेकिन हम उनके हैं या नहीं यह तो दुश्मन से मुक़ाबला के वक़्त ही पता चलेगा। अगर हम दुश्मन की बात नहीं मानते, बल्कि उनकी मुख़ालिफत करते हैं, उन से मुक़ाबला करते हैं तो उसका मतलब यह है कि हम भी अल्लाह के हैं और उन से

मुहब्बत करते हैं। इसके बरख़िलाफ अगर हम दुश्मन की मानते हैं और अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के मुक़ाबले में उनकी इताअत करते हैं तो फिर ख़्वाह सारी दुनिया मिल कर हमें अल्लाह वाला कहती रहे लेकिन अल्लाह पाक कहते हैं कि तुम मेरे नहीं हो।

माँ से ज़्यादा मुहब्बत करने वाली ज़ात

दोस्तो! अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने ईमान वालों के दो दुश्मन ज़रूर बनाए हैं लेकिन उन्हें मुकम्मल तौर पर उनके दुश्मनों के हवाले नहीं किया है बल्कि उन से हिफाज़त का सामान और हथियार भी उन्हें अता फरमाया है। वह सामान और हथियार यही आमाले मसनूना हैं जिन पर अमल करके वह उनके हमलों के ख़िलाफ पूरी कुव्वत के साथ अपना दिफा कर सकते हैं।

देखिए! माँ की मुहब्बत एक मिसाली मुहब्बत होती है, लोग दुनिया में माँ की मुहब्बत और उसकी मम्ता की मिसाल दिया करते हैं। एक माँ को अपने बच्चे से कितना प्यार होता है यह बस वही औरत जानती है जो खुद माँ होती है, माँ के अलावा कोई और उस प्यार को समझ सकता है और न ही समझा जा सकता है। फिर यही मुहब्बत और यही प्यार उसे अपने बच्चे की राहत का ख़्याल रखने पर और उसे नुक़सान देह चीज़ों से बचाने पर मजबूर करता है। जिस जगह से बच्चे को नुक़सान पहुंचने का मामूली सा अंदेशा भी होता है वह उस जगह से अपने बच्चे को दूर रखती है।

दोस्तो! कोई माँ अपने बच्चे से इतना प्यार नहीं करती जितना प्यार अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने बंदों से करते हैं। रिवायतों में आता है कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त माँ के मुक़ाबले में ७० गुना ज़्यादा अपने बंदे से मुहब्बत करते हैं और बाज़ रिवायतों

के मुताबिक़ १०० गुना ज़्यादा मुहब्बत करते हैं। जब एक माँ अपनी मुहब्बत के सबब अपने बच्चे का हर तरह ख़्याल रखती है और अपनी बिसात भर उसकी हिफाज़त का पूरा इंतिज़ाम करती है तो क्या अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त नफ्स और शैतान के मुक़ाबले में अपने बंदों की हिफाज़त का इंतिज़ाम नहीं करेंगे? यह मुम्किन ही नहीं कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने बंदों से मुहब्बत तो करें लेकिन उन्हें दुश्मनों से हिफाज़त का सामान और तदबीर न बताऐं, यह बात उनकी शाने रूबूबियत और मुहब्बत के बिल्कुल ख़िलाफ है। उनकी मुहब्बत का तक़ाज़ा यह है कि वह अपने बंदों की रहबरी करें, उन्हें दर पेश ख़तरात से आगाह करें और उन ख़तरात से बचने की तमाम तर मुम्किना तदबीरें उन्हें बताऐं।

सुन्नत को हल्का न समझें

क्या बताऊँ दोस्तो! हम ने सुन्नतों की अहमियत को समझा ही नहीं। यह सुन्नतें क़िला हैं क़िला, एक मुस्तहकम क़िला। जब आदमी सुन्नतों का ऐहतिमाम करता है तो उस ऐहतिमाम के सबब वह एक ऐसे मुस्तहकम क़िला में महफूज़ हो जाता है जहाँ वह नफ्स और शैतान की तरफ से पेश आने वाले तमाम तर ख़तरात से मामून और महफूज़ हो जाता है।

नफ्स और शैतान चूँकि हर वक़्त बंदे के साथ लगे रहते हैं और हर वक़्त उसे नुक़सान पहुंचाने की कोई न कोई तदबीर करते रहते हैं, इस लिए अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने अपने बंदे की हिफाज़त की ख़ातिर उसे हर वक़्त के मसनून आमाल बतलाए हैं। बअलफाज़े दीगर यूँ कहा जा सकता है कि सुन्नतों के ऐहतिमाम की बदौलत आदमी की शख़्सियत बारोब बना दी जाती है और उसके

दुश्मन उस से मरऊब होने लगते हैं।

यह मैं अपने घर की बात नहीं कह रहा हूँ बल्कि किताबों में लिखा हुआ है कि जब आदमी सुन्नतों का ऐहतिमाम करता है तो उस ऐहतिमाम के सबब जहाँ नेक लोगों के दिलों में उसकी मुहब्बत डाली जाती है वहीं दूसरी तरफ उसके दुश्मनों पर उसका रोब भी डाला जाता है। पस जब मिन जानिबिल्लाह यह बात तय हो चुकी कि मुत्तबअे सुन्नत शख़्स का रोब दुश्मन पर डाला जाएगा तो नफ़्स और शैतान भी तो आदमी के दुश्मन हैं, मुत्तबअे सुन्नत आदमी का रोब उन पर भी डाला जाएगा।

लिहाज़ा आमले मसनूना को हलका न समझें, बल्कि जी जान से उन पर अमल की कोशिश करें कि इत्तिबाए सुन्नत के सबब जिस तरह आदमी नेक लोगों के दिलों में जगह बना लेता है, इसी तरह उस अमल की बरकत से उसके दुश्मनों पर भी उसका रोब डाला जाता है। लिहाज़ा जब हम नींद से बेदार हों तो उस वक़्त अपनी दोनों हथैलियों से आँखों को मलें, तीन बार अल हम्दु लिल्लाह कहें। जब अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का नाम हमारी ज़बान पर आएगा तो ख़्वाह हमें महसूस हो कि न हो, लेकिन उस नाम के असरात यक़ीनन पड़ कर रहेंगे और उसकी बरकात ज़रूर ज़ाहिर होंगी।

तजदीदे ईमान बार बार तजदीदे निकाह कभी कभी

साथ ही सोने के सबब जो ग़फलत हम पर तारी हुई थी वह भी उस मसनून अमल यानी आँख के मिलने के सबब जाती रहेगी। उसके बाद कलिमाए तय्यबा : لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰه

ला इलाह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर रसूलुल्लाह। पढ़ें।

अब यहाँ सवाल पैदा होता है कि आख़िर नींद से बेदार होते ही यह कलिमा क्यों कहलाया गया? उस वक़्त इस कलिमा के पढ़ने की क्या मसलहत है?

दोस्तो! नबी का कोई तरीक़ा और उनकी कोई सुन्नत फ़ायदे और मसलहत से ख़ाली नहीं है। उन फवाइद व मसालेह तक हमारी अक़्ल की रिसाई हो या न हो, लेकिन अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने अपने महबूब के तमाम तरीक़ों में बेशुमार फवाइद व मसालेह रखे हैं। उस वक़्त उस कलिमा को पढ़ने के बहुत से फवाइद व मसालेह हज़रात उलमाए किराम जानते होंगे, लेकिन मुझ बेपढ़े लिखे की समझ में जो बात आती है वह यह कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त यह चाहते हैं कि मेरे बंदे की सुबह उस कलिमा के साथ हो जिसे पढ़ कर आदमी ईमान में दाख़िल होता है। इस लिए कि पता नहीं रात को सोने से क़ब्ल उस ने अपनी बीवी से या घर के किसी दूसरे फर्द से कोई ऐसा कलिमा कह दिया, हो जिसकी बिना पर यह ईमान से ख़ारिज हो गया हो और उसे उसका ऐहसास भी न हुआ हो, लिहाज़ा सुबह सवेरे वह मेरी तारीफ के बाद उस कलिमा को कह लिया करे ताकि उसके ईमान की तजदीद हो जाए। और फिर तजदीदे ईमान का हुक्म तो हदीस पाक में भी दिया गया है, वहाँ भी उस अमल की तरग़ीब वारिद हुई है। चुनान्चे एक रिवायत में जनाब नबीए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुद हज़रात सहाबए किराम रिज़वानुल्लाह अलैहिम अजमईन को ईमान की तजदीद का हुक्म दिया है। फरमाया : جَدِّدُوْا اِيْمَانَكُمْ कि अपने ईमान की तजदीद करते रहा करो। फिर सहाबए किराम के इस्तिफसार पर कि हम अपने ईमान की तजदीद किस तरह करें?

आप ने फरमाया : اَكْثِرُوْا مِنْ قَوْلِ لَا اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰـهُ कि ला इलाह इल्लल्लाह कसरत से पढ़ते रहा करो।

इस तरह की रिवायात के पेशे नज़र फुक़हाए किराम रह० ने यह मसअला लिखा है कि जिस तरह आदमी को अपने ईमान की तजदीद करते रहना चाहिए, इसी तरह उसे कभी कभार अपने निकाह का भी तजदीद कर लेना चाहिए। इस लिए कि अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता किसी कलिमए कुफ्र के कह देने के सबब उसका ईमान सल्ब हो गया होगा तो ईमान सल्ब होते ही निकाह भी टूट जाएगा, ऐसी सूरत में खुद उस की बीवी भी उस पर हराम हो जाएगी। इस लिए बतौर ऐहतियात यह तरग़ीब दी गई कि ईमान की तजदीद के साथ साथ कभी कभी अपने निकाह की तजदीद कर लिया करो ताकि हराम के इरतिकाब से महफ़ूज़ रहो।

सुन्नत की ख़िलाफ वरज़ी के साथ विलायत नहीं मिलती

अल ग़र्ज़ मैं यह कहना चाहता हूँ कि इत्तिबाए सुन्नत के बिग़ैर आदमी ख़ुदा का हो ही नहीं सकता। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का तअल्लुक़, उनकी कुरबत, उनकी मुहब्बत, उनकी मारफत, यह सारी नेमतें इत्तिबाए सुन्नत के बिग़ैर हासिल नहीं हो सकतीं। यह नेमतें सिर्फ उसी को मिलती हैं जो अपने हर अमल में उनके महबूब की नक़ल उतारने वाला बन जाए।

चुनान्चे मैंने एक किताब में पढ़ा कि एक इलाक़े में एक साहब की बड़ी शोहरत थी कि बड़े बुज़ुर्ग हैं, बड़े अल्लाह वाले हैं। उनका शोहरा सुन कर एक बुज़ुर्ग को ख़्याल हुआ कि जब इतने

बड़े अल्लाह वाले हैं तो मुझे भी उनकी ख़िदमत में हाज़िर होना चाहिए और उन से मुलाक़ात करनी चाहिए। चुनान्चे वह मुलाक़ात के लिए तशरीफ ले गए और वहाँ पहुंच कर उन से अक़ीदतमंदाना मुलाक़ात की। दौराने गुफ्तगू उन साहब ने क़िब्ला की सिम्त थूका। हज़रत ने देखा तो आप को बड़ा तअज्जुब हुआ कि उनकी बुज़ुर्गी और विलायत का तो इस क़द्र शोहरा है और उन्हें इतना भी ख़्याल नहीं कि क़िब्ला की सम्त थूकना न चाहिए। वापस तशरीफ ले आए और फरमाया कि जो काबतुल्लाह का ऐहतिराम न जानता हो और जिसे यह भी न पता हो कि क़िब्ला की सिम्त थूकना ख़िलाफे सुन्नत है वह भी कहीं बुज़ुर्ग और वली हो सकता है? यहाँ बुज़ुर्गी नहीं, सिर्फ बुज़ुर्गी का धोका है।

जो रसूल का नहीं वह ख़ुदा का नहीं

नफ्स और शैतान हर वक़्त इंसान को धोका देने के दरपै रहते हैं और धोका देने के लिए नित नये तरीक़े इस्तिमाल करते हैं। अल्लाह पाक उनके तमाम धोकों से हमारी और पूरी उम्मत की हिफाज़त फरमाऐं। वह किस किस तरह धोका देते हैं उसकी एक मिसाल भी सुनते चलें।

एक मर्तबा एक साहब जिन से कुछ ग़ायबाना तआरूफ था, बम्बई आए और मेरे मेहमान हुए। मेरी उन से पहली मुलाक़ात थी। बड़ी मारफत भरी बातें कर रहे थे, दौराने गुफ्तगू इश्क़े ख़ुदावन्दी और इश्क़े रसूल पर बरजस्ता अशआर भी सुनाते जाते थे। मुझ से कहने लगे शकील भाई! क्या बताऊँ, अब तो दुनिया में जी ही नहीं लगता, लोगों से मुलाक़ात भी तबीयत पर बहुत शाक़ गुज़रती है, हर दम बस उन्हीं के ख़्यालों में गुम रहता हूँ और

उन्हीं से बातें करता रहता हूँ। मुझे भी उनकी बातों पर और उनकी हालत पर बड़ा रश्क आया। मैं ने कहा भई! आप को आप का यह हाल बहुत मुबारक हो, दुआ करें कि हमें भी वह हाल जो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को पसंद हो नसीब हो जाए। वह चूंकि मेरे मेहमान थे, कुछ रोज़ क़याम के इरादा से आए थे, इस लिए अकसर औक़ात उन के साथ रहने का इत्तिफ़ाक़ हुआ।

लेकिन दोस्तो! क्या कहूँ और कैसे कहूँ, मुझे यह देख कर बड़ा ही अफसोस हुआ कि ज़बान पर तो इश्क़े ख़ुदा और इश्क़े रसूल की बातें हैं, लेकिन ज़िंदगी में सुन्नतों का कोई ऐहतिमाम नहीं है। मैंने दौराने क़याम उनके जितने आमाल देखे उन में अकसर सुन्नत के ख़िलाफ थे। देखता रहा और देख देख कर अफ्सोस होता रहा और उनकी उस सादा लौही पर, बल्कि उस धोके पर जो उन्हें लग़ा था, बड़ा ही दुख हुआ, लेकिन कहता कैसे कि वह मेरे मेहमान जो थे। अलबत्ता उनके रूख़सत होने के दिन मेरे सब्र का बंधन टूट गया और मैंने मुनासिब अंदाज़ में उन से कह दिया कि भाई साहब! गुस्ताख़ी माफ, अगर आप बुरा न मानें तो मैं बड़े अदब के साथ एक बात आप की ख़िदमत में अर्ज़ करना चाहता हूँ और वह भी इस लिए कि आप मेरी मुहब्बत और अक़ीदत लिए यहाँ तशरीफ लाए हैं, मेरे साथ हुस्ने ज़न रखते हैं और किसी दर्जे में आप को मुझ से हम दर्दाना तअल्लुक़ भी है, इस तअल्लुक़ का मुक़तज़ा यह है कि मैं भी आप की हम दर्दी चाहूँ और इस बात से आप को आगाह करूँ जो आप के हक़ में नुक़सान देह है। लिहाज़ा एक बात दयानतन आप की खिदमत में अर्ज़ करना चाहता हूँ।

वह यह कि आप को आप के इस हाल की बिना पर धोका लग गया है। यह इस्तिग़राक़ी कैफियत, मारफत भरी बातें और इश्क़िया अशआर का बरजस्ता ज़बान पर आ जाना, उन सब से आप धोका में न आऐं और न यह ख़्याल करें कि मैं कुछ हो गया हूँ और मुझे तअल्लुक़ मअल्लाह की दौलत हासिल हो चुकी है। यह सब अहवाल और कैफियाते नफ्स और शैतान की पैदा करदा हैं और उनकी जानिब से दिया गया बहुत बड़ा धोका है जिस में आप मुबतला हो गए हैं। मैं एक बार फिर माज़रत के साथ कहता हूँ कि जितने रोज़ आप मेरे यहाँ रहे, मैंने बग़ौर आप के आमाल को देखा और यह देख कर मुझे बड़ा अफसोस हुआ कि आप की ज़िंदगी में मसनून आमाल का ऐहतिमाम है और न ही मसनून दुआओं का। और जिस की ज़िंदगी मसनून आमाल और मसनून दुआओं के ऐहतिमाम से आरी हो वह ज़ाब्ते की रू से ख़ुदा तक नहीं पहुंच सकता। मियाँ! यह धोका है धोका, जो रसूल का न हुआ वह ख़ुदा का नहीं हो सकता। आप जल्द से जल्द इस धोके से निकलें और अपने रोज़मर्रा के तमाम आमाल को सुन्नतों से आरास्ता और मोज़य्यन करने की कोशिश करें।

इसी बात को आरिफ बिल्लाह हजरत हकीम अख़्तर साहब दमात बरकातहुम ने इस अंदाज़ से फरमाया है कि :

नक़्शे क़दम नबी के हैं जन्नत के रास्ते
अल्लाह से मिलाते हैं सुन्नत के रास्ते

याद रखें! जब तक ज़िंदगी सुन्नत के साँचे में न ढल जाए और सुन्नत तबीयते सानिया न बन जाए उस वक़्त तक तअल्लुक़ मअल्लाह की दौलत का हुसूल महज़ ख़्याल ख़ाम है और सरासर

धोका है जो नफ़्स और शैतान की तरफ से दिया गया है।

चूंकि वह भले और समझदार आदमी थे इस लिए उन्हें इस बात का ऐहसास हुआ कि बात तो वाक़ई बिल्कुल ठीक है। चुनान्चे रूख़सत होने से क़ब्ल उन्होंने मसनून दुआऐं, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नतें, उसवए रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और इस तरह की कुछ और किताबें हासिल कीं और वतन पहुंच कर उन्हें पढ़ा और सीखा। और फिर मुझे फोन पर इत्तिला दी कि हज़रत! मैंने अब तक उन किताबों से इतनी दुआऐं और इतनी सुन्नतें सीख ली हैं और अल हम्दु लिल्लाह उन पर पाबंदी के साथ अमल भी कर रहा हूँ। यह सुन कर मेरा बड़ा जी ख़ुश हुआ।

हम ज़रा अपने हाल पर ग़ौर करें

यह तो उन साहब की बात हुई, लेकिन यहाँ ठहर कर हम ज़रा अपने हाल पर भी ग़ौर करें और देखें कि कहीं हमारा हाल भी उन्ही की तरह तो नहीं कि हम भी इश्के ख़ुदा और इश्के रसूल की बातें तो ख़ूब करते हैं, मौक़ा मिलने पर सुन्नत की अहमियत पर बड़ी लच्छेदार तक़रीर भी कर लेते हैं, सुन्नत के फ़वाइद गिनाते नहीं थकते और लोगों में चल फिर कर कहते हैं कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तरीक़े ही में कामियाबी है, लेकिन यह बातें सिर्फ ज़बान की हद तक महदूद रहती हैं, अमल से उसका कोई तअल्लुक़ नहीं होता।

ख़ूब अच्छी तरह समझ लें! कि एक है दीन का इल्म और एक है दीन पर अमल, फक़त इल्म की बुनियाद पर और दीन की मेहनत करने की बुनियाद पर कोई दीनदार नहीं हो जाता, दीन

का इल्म होना और है दीनदार होना और है। इसी तरह दीन की मेहनत करना और है और दीनदार होना और है। किसी की तक़रीर या तहरीर को देख कर उसे दीनदार नहीं कहा जा सकता जब तक कि अमली ज़िंदगी सुन्नत व शरीअत के मुताबिक़ न हो।

दीनदारी का मैयार

एक ऐसी ऑडियो कैसेट या सी. डी. जिस में दीनी बयानात महफ़ूज़ हों और बयानात भी किसी अल्लाह वाले के हों, उन बयानात को सुन कर कोई यह नहीं कहता कि माशा अल्लाह यह कैसेट या यह सी. डी. बड़ी दीनदार है। इसी तरह किसी दीनी किताब को देख कर या उसे पढ़ कर कोई यह नहीं कहता कि माशा अल्लाह यह किताब बड़ी दीनदार है। पता चला कि दीनी बातों को याद कर लेना, उन्हें बयान कर देना, उन्हें लिख कर महफ़ूज़ कर लेना दीनदारी का मैयार नहीं है।

दीनदारी का असल मैयार तो यह है कि आदमी अपनी याद की हुई बातों पर, अपनी बयान की हुई बातों पर और अपनी लिखी हुई बातों पर अमल भी करता हो, लेकिन आज हमारा मिज़ाज यह हो चला है कि हम दीनी बातों के जान लेने को, उन्हें याद कर लेने को, उन्हें बयान कर देने को या उन्हें लिख देने को दीनदारी का मयार समझ बैठे हैं, ख़्वाह वह बातें हमारी अमली ज़िंदगी से कितनी ही दूर क्यों न हों।

रूहानी मौत का सबब

देखिए! निगाह नीची रख कर चलना सुन्नत है। जब बंदा निगाह नीची रख कर चलता है तो वह ज़ाहिरी गंदगी से भी महफ़ूज़ रहता है और बातिनी गंदगी से भी महफ़ूज़ रहता है। जिस

तरह ज़ाहिरी गंदगी लग जाने की सूरत में आदमी का जिस्म या कपड़ा गंदा और नापाक हो जाता है, इसी तरह जब आदमी बातिनी गंदगी में मुलव्विस होता है तो उसके सबब उसका दिल गंदा और ख़राब हो जाता है। बद नज़री भी एक बातिनी गंदगी है और यह उमूमन निगाह उठाकर चलने के सबब लगती है। जब बंदा निगाह उठा कर चलता है और बद नज़री कर बैठता है तो उस बद नज़री की वजह से उस का दिल गंदा हो जाता है।

हदीस पाक का मफ़हूम है कि निगाह इबलीस के तीरों में से एक तीर है। और फ़क्त तीर ही नहीं बल्कि एक ऐसा तीर है जो ज़हर में बुझा हुआ है। हम सभी जानते हैं कि ज़हर में बुझा हुआ तीर किस क़दर मोहलिक और ख़तरनाक होता है। तीर को ज़हर में इसी लिए बुछाया जाता है कि अगर यह दुश्मन को ज़रा सा भी लग जाए तो उसके लिए जान लेवा साबित हो। इसी तरह यह निगाह भी इबलीस का एक तीर है जो पूरी तरह ज़हर में बुझा हुआ है। हालते जंग में इस्तिमाल किए जाने वाले तीर का निशाना तो पूरा जिस्म होता है, ख़्वाह वह तीर जिस्म के किसी हिस्से में लगे और दुश्मन को नुक़सान पहुंचे, लेकिन बद नज़री इबलीस का एक ऐसा तीर है जिस से वह सीधे दिल को निशाना बनाता है और उस पर वार करता है। हम और आप समझ सकते हैं कि जिस ज़हर में बुझे हुए तीर का निशाना दिल हो और वह तीर अपने निशाना पर लग भी जाए तो क्या फिर वह आदमी ज़िंदा बच सकता है? बिल्कुल नहीं। यह निगाह का तीर जब आदमी के दिल पर लगता है तो वह जिस्मानी तौर पर तो मुर्दा नहीं होता, चलता फिरता ही दिखाई देता है लेकिन इस हमले के सबब उसके दिल की मौत वाक़े हो जाती

है।

क़ाबिले ग़ौर बात

दोस्तो! जब हम निगाह का ग़लत इस्तिमाल करते हैं तो इबलीस का यह तीर सीधा हमारे दिल पर लगता है और हमारे दिल को मुर्दा कर देता है। हमें खुदा के घर आते जाते एक अरसा गुज़र गया लेकिन आज तक हमारा उनके साथ कोई रब्त और तअल्लुक़ नहीं बना, नमाज़ पढ़ते हुए बरसों गुज़र गए, लेकिन आज तक हमें नमाज़ की लज़्ज़त नहीं मिली, रूकू का कैफ नहीं मिला, सजदे में अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की कुरबत का ऐहसास नहीं हुआ, कुरआन मजीद की तिलावत करते हैं, लेकिन कभी उस पाक कलाम की हलावत नहीं मिली, क्या यह बात क़ाबिले ग़ौर नहीं है? क्या कभी हम ने सोचा कि आख़िर इसकी वजह क्या है? इसकी वजह यही है कि निगाह के ग़लत इस्तिमाल के सबब हमारा दिल मुर्दा हो चुका है, अब उसे ताअत की लज़्ज़त मिलती है और न ही खुदा की कुरबत का ऐहसास होता है। और हो भी कैसे? कहीं मुर्दा और बेजान भी किसी चीज़ को महसूस किया करता है?

दोस्तो! अगर हम दो चार मर्तबा किसी के घर चले जाते हैं तो हमारा उनके साथ एक तअल्लुक़ बन जाता है और हमें उनके साथ अपनाइयत का ऐहसास होने लगता है, फिर जूँ जूँ यह आमद व रफ्त बढ़ती जाती है आपसी तअल्लुक़ात और भी ज़्यादा मज़बूत और मुस्तहकम होते जाते हैं, फिर एक वक़्त आता है कि हम कहने लगते हैं कि हमारे उनके साथ घरेलू तअल्लुक़ात हैं। अगर यह तअल्लुक़ात इलाक़े के किसी सेठ और दौलतमंद आदमी के साथ हो जाऐं या हुकूमत के किसी ओहदादार के साथ हो जाऐं और बकसरत

उनके घर आदम व रफ्त होने लगे तो उस तअल्लुक़ के सबब हम अपने अंदर एक कुव्वत भी महसूस करते हैं कि फ्लाँ सेठ के साथ हमारा तअल्लुक़ है, फलाँ ओहदेदार के साथ हमारा तअल्लुक़ है।

दोस्तो! अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के मुक़ाबले में किसी सेठ की, किसी ओहदादार की, किसी वज़ीर और मुशीर की और किसी मिनिस्टर की कोई हैसियत नहीं है, अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त से ज़्यादा पावर और कुदरत वाला कोई नहीं है, उन से ज़्यादा अज़मत व ज .लत वाला कोई नहीं है, सारी कायनात उनके क़ब्ज़ए कुदरत में है, वह जब चाहें कायनात के निज़ाम को ज़ेर व ज़बर कर दें, उन्हें कोई रोकने वाला नहीं है, वह जिसे चाहें इज़्ज़त दें और जिसे चाहें ज़लील कर दें, कोई उन्हें पूछने वाला नहीं है। ऐसी ज़बरदस्त ताक़त और कुदरत वाली ज़ात के घर हम रोज़ाना आते जाते हैं और यह आमद व रफ्त एक अरसे से जारी है। क्या कभी हम ने सोचा कि इतने दिनों की आमद व रफ्त के नतीजे में हमारा उन के साथ कुछ तअल्लुक़ बनाया नहीं और उस तअल्लुक़ की बिना पर हमें अपने अंदर कोई कुव्वत महसूस हुई या नहीं?

मियां! उनके साथ हमारा तअल्लुक़ तो क्या बनता, आज तक हमारी उन से शनासाई भी नहीं हो पाई, हम रोज़ाना मस्जिद जाते हैं, लेकिन जैसे जाते हैं वैसे ही चले आते हैं, मस्जिद से निकलते हुए हमें कभी यह ऐहसास नहीं होता कि हम अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के दरबार से होकर आ रहे हैं जो सारे जहानों का ख़ालिक़ व मालिक है और पूरी कायनात का अकेला बादशाह है। एक दौलतमंद के घर होकर आएं तो उसके साथ तअल्लुक़ का हमें ऐहसास होता है, एक ओहदादार के घर होकर आएं तो उसके साथ तअल्लुक़ का

हमें ऐहसास होता है और रब्बुल आलमीन के दरबार से होकर लौटते हैं तो उन के साथ तअल्लुक़ का हमें कोई ऐहसास होता है और न उस तअल्लुक़ की बिना पर हम अपने अंदर कोई कुव्वत महसूस करते हैं। बताऐं दोस्तो! क्या यह बात क़ाबिले ग़ौर नहीं है? बेदिली के साथ उनके घर जाना, बेदिली के साथ वहाँ रहना और फिर बेदिली ही के साथ वापस चले आना, यह हमारा बरसों का मामूल बन चुका है। उनके साथ तअल्लुक़ का ऐहसास होना तो बहुत दूर की बात है, सच तो यह है कि हमारा उनके घर में दिल ही नहीं लगता।

हमें ऐहसास कहाँ?

और दिल लगे भी कैसे, जब दिल लेकर वहाँ गए ही नहीं थे तो यह दिल लगता कैसे, बल्कि हक़ीक़त यह है कि इस दिल को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने अपने घर में लाने की इजाज़त ही नहीं दी, इस लिए कि बद नज़री के सबब यह दिल मुर्दा हो चुका था। जब हम अपने घर में किसी मुर्दा को नहीं रखते ख़्वाह वह मुर्दा हमारा कितना ही अज़ीज़ क्यों न हो तो भला अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने घर में किसी मुर्दा को लाने की इजाज़त क्यों कर देंगे? जब हम ने बद नज़री के सबब इस दिल को मुर्दा कर दिया तो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने हमें उसकी सज़ा यह दी कि इस दिल को अपने घर की हाज़िरी से रोक दिया, उसे अंदर लाने की इजाज़त नहीं दी, कह दिया कि जब तू किसी मुर्दा को अपने घर में रखना पसंद नहीं करता तो भला मैं क्यों कर तेरे मुर्दा दिल को अपने घर में बुलाना पसंद करूंगा, नमाज़ के लिए जिस्म को लेकर आ जा और दिल को बाहर ही रहने दे।

और सुन! तेरे जिस्म को बुला रहा हूँ यह भी तुझ पर बहुत बड़ा ऐहसान कर रहा हूँ, इस लिए कि मैंने जिस्म की पाकी के जो क़वानीन बनाए थे उनका पास व लिहाज़ रख कर तूने अपने जिस्म को पाक कर लिया है, लिहाज़ा जिस्म को तो अंदर ले आ, लेकिन दिल को बाहर ही रहने दे। अगर यह बात न होती तो उस बद नज़री के सबब मैं तुझे जिस्म की हाज़िरी से भी रोक देता। इस लिए कि मैं बहुत ग़ोय्यूर हूँ, मुझ से ज़्यादा बाग़ैरत कोई नहीं है, जिस तरह मुझे इबादत में किसी की शराकत गवारा नहीं है इसी तरह मुहब्बत में भी किसी की शराकत गवारा नहीं है। मुझे यह हरगिज़ पसंद नहीं कि मेरा नाम लेने वाला मुझे छोड़ कर किसी और की तरफ मुहब्बत की निगाह डाले।

दोस्तो! दिल के मुर्दा हो जाने के सबब अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने उसे मस्जिद की हाज़िरी से रोक दिया। इसी लिए हमारा दिल मस्जिद में नहीं लगता, कितना ही उसे खींचो और अंदर लाने की कोशिश करो, लेकिन यह आता ही नहीं, बद नज़री की यह बहुत बड़ी सज़ा है जो हमें दी गई है, लेकिन हमें ऐहसास कहाँ है?

वह दिल जिस में जलवा तुम्हारा नहीं है
वह दिल सब का हो पर तुम्हारा नहीं है

दिलों को धोने वाला लिकविड

अगर जिस्म या कपड़ा गंदा हो जाए तो उसे पानी से धोया जा सकता है, लेकिन अगर दिल गंदा हो जाए तो उसे उस पानी से और उस साबुन से नहीं धुला जा सकता। आज तक दुनिया में कोई ऐसा साबुन, ऐसा पावडर और ऐसा लिकविड (Liquid) ईजाद नहीं हुआ जो दिल की उस गंदगी को धो सके। दिल पाक व साफ

होता है आँखों से बहने वाले अश्के नदामत से। जब बंदा सच्ची पक्की तौबा कर लेता है और आइन्दा बातिनी गंदगी में मुलव्विस न होने का पुख़्ता इरादा कर लेता है तब अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उसके दिल की गंदगी को दूर फरमाते है।

देखिए! अमल के ऐतेबार से यह कितनी आसान और कितनी छोटी सुन्नत है कि आदमी को सिर्फ निगाह नीची रख कर चलना है और कुछ नहीं करना। लेकिन उसका नतीजा और उसका फायदा कितना बड़ा है कि उस अमल की बिना पर आदमी के दिल की हयात बाक़ी रहती है, उसका दिल मुर्दा होने से महफ़ूज़ रहता है।

मैंने उस सुन्नत को जो छोटा कहा है वह सिर्फ इस बात को समझाने के लिए कि यह अमल बज़ाहिर देखने में कितना छोटा है और अमल के ऐतेबार से किस क़द्र आसान है कि उस पर अमल करने में किसी तरह की कोई मशक़्क़त नहीं है। वरना खुदा की क़सम कोई सुन्नत छोटी है ही नहीं। मियाँ! जिस अमल पर उनकी निसबत लग जाए वह अमल भी कहीं छोटा हो सकता है? हरगिज़ नहीं हो सकता। अल ग़र्ज़ जिस्म और दिल दोनों की हिफाज़त निगाह की हिफाज़त की बुनियाद पर होती है और निगाह की हिफाज़त निगाह नीची रख कर चलने ही में होती है।

बातिन की तबाही की वजह

बहर हाल, मैं यह अर्ज़ कर रह था कि निगाह नीची रख कर चलना सुन्नत है और यह सुन्नत हमारे इल्म में भी है और न सिर्फ यह कि इल्म में है, बल्कि हम लोगों में उसका ख़ूब बयान भी करते हैं और उसके बहुत से फ़वायद भी गिनाते हैं। बयान करते

हुए और लोगों को उसके फवायद समझाते हुए हमारी ज़िंदगी गुज़र गई, लेकिन अगर अमल देखें तो खुद हमारा अमल उसके बर खि़लाफ है। हम दुनिया को तो दीन समझा रहे हैं, लेकिन खुद हमारा हाल यह है कि आज तक हमें गर्दन झुका कर चलना नहीं आया। हमारे बातिन की तबाही और दिल के उजड़ जाने की वजह यही हमारा अमली निफाक् और कौल व अमल के माबैन यही तज़ाद है कि हमारी बातें ख़ूब अच्छी होती हैं, बयान ख़ूब अच्छा होता है, तालीफ व तसनीफ बहुत उम्दा होती है, लेकिन अमल, तो वह सरासर सुन्नत के खि़लाफ होता है।

रब चाही या मन चाही

अगर हम बग़ौर अपनी ज़िंदगी का जायज़ा लें तो यक़ीनन हम जेसे मुत्तबओ सुन्नत लोगों को अपना यह हाल नज़र आएगा कि हम अकसर मवाके़ पर सुन्नत से इन्हिराफ करते हुए ज़िंदगी गुज़ार रहे हैं। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की अता करदा यह ज़िंदगी जो दर हक़ीक़त एक इम्तिहान और आज़माइश है, उसकी हक़ीक़त को जाने बिग़ैर उसे बस अपनी मरज़ी से जिए जा रहे हैं, हमारा हाल यह है कि जिन आमाले नबवी पर अमल करना हमारी तबियत को भाता है और जिन पर अमल करने से हमारा मुआशरा के साथ कोई टकराव नहीं होता हम उन पर तो अमल कर लेते हैं, लेकिन जिन आमाले नबवी पर अमल करना हमारी तबियत को नहीं भाता या भाता तो है, लेकिन उन पर अमल करते हुए हमारा मुआशरा के साथ टकराव होता है तो उस वक़्त हम उन्हें छोड़ देते हैं।

मियाँ! आक़ा की ऐसी इत्तिबा कि जी चाहा तो अमल कर लिया, जी न चाहा तो अमल छोड़ दिया, मुआशरा के साथ टकराव

न हुआ तो अमल कर लिया और टकराव हुआ तो अमल छोड़ दिया, ऐसी इत्तिबा तो दर हक़ीक़त 'मन चाही इत्तिबा है रब चाही इत्तिबा नहीं है' और क़यामत के रोज़ कामियाबी रब चाही इत्तिबा पर मिलेगी, मन चाही इत्तिबा पर नहीं मिलेगी। इसी लिए अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने कुरआन मजीद में साफ साफ ऐलान फरमा दिया है कि : وَمَآ اٰتٰكُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ وَمَا نَهٰكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا

कि मेरे महबूब तुम्हें जो दें सब ले लो और जिन कामों से मना करें उन से बाज़ आजाओ, लेकिन हम हैं कि सिर्फ अपनी पसंद की बातों को लेते हैं और जो पसंद नहीं होतीं उन्हें छोड़ देते हैं।

ख़ूब अच्छी तरह समझ लें! कि मन चाही इत्तिबा पर मुतमइन रहना नफ्स का बहुत बड़ा धोका है कि वह हमारी पसंद और चाहत के चंद आमाल में सुन्नत की इत्तिबा दिखला कर हमें मुतमइन कर देता है कि माशा अल्लाह तुम्हें सुन्नतों का बड़ा ख़्याल रहता है और हम भी ऐसे नादान हैं कि उस की झूठी तसल्ली की बिना पर ख़ुश फ़हमी में मुबतला हो जाते हैं।

याद रखें! सुन्नत पर अमल का मुतालबा दिल की चाहत और मुआशरे की मुताबिक़त के साथ मशरूत नहीं है। सुन्नत की इत्तिबा तो हत्तल इम्कान हर मामले में करनी है। दिल चाहे तब भी और न चाहे तब भी, मुआशरे को मंज़ूर हो तब भी और मंज़ूर न हो तब भी। आज तो यह हाल है कि हमारे घर की एक शादी हमारी दीनदारी की और हमारी इत्तिबाए सुन्नत की सारी पोल खोल देती है। घर में शादी का मौक़ा क्या आया कि सब से पहले तरीक़ए नबवी को एक किनारे कर दिया जाता है, अच्छे ख़ासे दीनदार भी

शादी बियाह के मौक़े पर रसम व रवाज की बेड़ियों से आज़ाद नहीं हो पाते इल्ला माशा अल्लाह। वह भी घर के बड़े बूढ़ों से उस मौक़े की रसम व रवाज मालूम करते हैं कि अब्बा यह काम कैसे किया जाता है, अम्माँ यह काम कैसे किया जाता है, यह मामला कैसे अंजाम दिया जाता है, उसके अलावा हमें और क्या क्या करना होगा? फिर अब्बा और अम्माँ की हिदायात की रोशनी में सारे मामलात अंजाम दिए जाते हैं। भला जो काम उलमा और मुफ्तियाने किराम से पूछ कर करने का था वह रसम व रिवाज के वाक़फीन से पूछ कर किया जा रहा है।

देखिए! यह है हमारी दीनदारी की सतह कि रसम व रिवाज तो सारे अंजाम देंगे और फिर भी पक्के मुत्तबए सुन्नत रहेंगे, कैसा अजीब धोका लगा है। और उज्र यह तराश्ते हैं कि भाई! अब क्या करें, अभी तो यह करना ही पड़ेगा वरना अब्बा नाराज़ हो जाऐंगे, अभी तो इतना करना ही पड़ेगा वरना अम्माँ नाराज़ हो जाऐंगी, और फिर आज कल तो इतना करना ही पड़ता है उसके बिग़ैर कहाँ चलता है, अगर यह भी न करूँ तो दोस्त अहबाब क्या कहेंगे, रिश्तेदार क्या कहेंगे, लोग क्या सोचेंगे।

दोस्तो! यह सब लिखा जा रहा है और उसे हम ख़ुद लिखवा रहे हैं और आज का यही लिखाया गय कल क़यामत के रोज़ हमें पढ़ना होगा कि जिस वक़्त मेरे नबी की इत्तिबा तुम्हे अच्छी लगती थी या उस इत्तिबा के सबब तुम्हारा मुआशरे के साथ टकराव नहीं हौता था उस वक़्त तुम मेरे नबी को याद रखते थे और जिस वक़्त मेरे नबी की इत्तिबा तम्हें अच्छी नहीं लगती थी या इत्तिबा के सबब तुम्हारा मुआशरे के साथ टकराव होता था उस वक़्त तुम मेरे नबी

को भूल जाया करते थे। तुम्हें मेरे नबी के साथ मुहब्बत थोड़ा ही थी, तुम्हें तो अपना मुआशरा अज़ीज़ था, अपने रिश्तेदार अज़ीज़ थे, अपने दोस्त हबाब अज़ीज़ थे, अपने बीवी बच्चे और अपना घराना अज़ीज़ था, तुम ने लोगों के मुक़ाबले में मेरा और मेरे नबी का कोई ख़्याल न किया। पस जिन लोगों की रज़ामंदी और नाराज़गी का तुम ने दुनिया में ख़्याल रखा था आज अपने आमाल का बदला भी उन्हीं से ले लो। बतायें दोस्तो! उस वक़्त हमारा क्या बनेगा और कौन हमारे काम आएगा?

झूठी पारसाई

और बाज़े लोग अपना दामन बचाने की ग़र्ज़ से कि मेरी दीनदारी पर कोई बट्टा न लगे, यह कहते हैं कि मैं क्या करूँ, मैं तो अपने बच्चे की शादी सुन्नत के मुताबिक़ ही करना चाहता हूँ लेकिन मेरी बीवी नहीं मानती, कोई कहता है कि मेरे अम्माँ अब्बा नहीं मानते, कोई कहता है कि मेरे रिश्तेदार नहीं मानते।

याद रखें! ऐसा कहने वाले सिर्फ लोगों को धोका नहीं देते, बल्कि खुद भी बहुत बड़े धोके में मुबतला हैं। सारे रसम व रवाज का अंजाम देना खुद उनकी अपनी चाहत होती है, लेकिन कहें कैसे कि दीनदारी पर हर्फ जो आएगा। इस लिए कहीं बीवी का, कहीं दोस्त हबाब का और कहीं रिश्तेदारों की नाराज़ी का बहाना बनाते हैं।

दोस्तो! उन हीले बहानों से आज काम चल सकता है और उनकी बिना पर आज लोगों को मुतमइन किया जा सकता है, लेकिन कल क़यामत की अदालत में यह हीले बहाने कुछ काम न देंगे, वहाँ सब कुछ खोल कर रख दिया जाएगा। हम अपनी उस

झूठी परसाई से दुनिया को तो धोका दे सकते हैं, ख़ुदा को धोका नहीं दे सकते। हमारी दाढ़ी टोपी से, हमारे कुर्ते पायजामे से, हमारे बयान से, हमारी तालीफ़ व तसनीफ़ से आज दुनिया धोका खा सकती है और हमें दीनदार समझ सकती है, लेकिन कल क़यामत के रोज़ उन चीज़ों की बुनियाद पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त धोका नहीं खाऐंगे, वह ख़ूब जानते हैं कि कौन कितना पारसा है।

आख़िरत के साथ दुनिया का भी नुक़सान

याद रखें! मख़्लूक़ की रिआयत की बिना पर ख़ालिक़ के हुक्म को तोड़ने और उन्हें नाराज़ करने से सिर्फ़ आख़िरत ही का नुक़सान नहीं होता, दुनिया का भी नुक़सान होता है और उस नुक़सान का बारहा मुशाहेदा हुआ है। वह यह कि जब कभी लोगों को ख़ुश करने की ख़ातिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को नाराज़ किया गया और शरीअत के क़वानीन को तोड़ा गया, कुछ ही अरसे के बाद यह देखा गया कि वह सारे लोग उस से नाराज़ हो गए। उसके बरख़िलाफ़ उसका भी मुशाहेदा हुआ है कि जिस ने अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की रज़ामंदी का लिहाज़ किया और लोगों की नाराज़ी की परवाह किए बिग़ैर शरीअत के क़वानीन की मुकम्मल पासदारी की, मिन जानिबिल्लाह यह इंतिज़ाम हुआ कि कुछ ही अरसे के बाद वह सारे लोग उस से राज़ी हो गए। लिहाज़ा मख़्लूक़ की रज़ामंदी की ख़ातिर ख़ालिक़ को नाराज़ करना आख़िरत का बरबाद करना तो है है, साथ ही दुनिया का भी नुक़सान मोल लेना है।

कहने के साथ करने का ऐहतिमाम हो

दोस्तो! कभी तो हम ग़ौर करें, तन्हाई में बैठ कर कभी तो

अपनी हालत का जायज़ा लें। आख़िर यह दो रूख़ी ज़िंदगी हम कब तक गुज़ारेंगे कि ज़बान पर तो इत्तिबाए सुन्नत के फवायद हों और आमाल अकसर सुन्नत के ख़िलाफ़ हों। मेरे कहने का मंशा हरगिज़ यह नहीं कि अमल के ऐहतिमाम के बिग़ैर इत्तिबाए सुन्नत के फवायद न बयान किए जाऐं, मैं हरगिज़ यह नहीं कहना चाहता, बल्कि सिर्फ यह कहना चाहता हूँ कि हमारी कही हुई बातें कब तक हमारी ज़बान तक महदूद रहेंगी? आख़िर यह अमली ज़िंदगी का हिस्सा कब बनेंगी? अगर यह बातें ज़बान की हद तक महदूद रहें और हमारे क़ौल व अमल में इसी तरह तज़ाद रहा तो कहीं ऐसा न हो कि हमारा हश्र उन लोगों के साथ हो जिन की ज़बानें कल क़यामत के रोज़ आग की कैंचीयों से काटी जाऐंगी। इस लिए कि हदीस पाक की रू से यह सज़ा उन्हीं लोगों को दी जाएगी जो लोगों से कहते तो थे लेकिन ख़ुद अपनी कही हुई बातों पर अमल नहीं करते थे।

ख़ुलासा यह कि कहना सुनना तो जारी रखा जाए और अपनी निय्यत से कहा सुना भी जाए, लेकिन अमल का ऐहतिमाम सब से ज़्यादा हो, इस से ग़ाफिल न हुआ जाए। जब अमल की निय्यत से कहा सुना जाएगा, दिल में अमल का सच्चा पक्का जज़बा होगा तो अमल के मवाक़े पर अल्लाह पाक ख़ुद मुतवज्जह करेंगे कि देख मेरे बंदे ! तो दिन भर लोगों से कहता फिरा है, अब यह अमल का मौक़ा आया है, लिहाज़ा अमल कर ले।

कल कभी आया है न कभी आएगा

लेकिन होता यह है कि जूँही अल्लाह पाक मुतवज्जह करते हैं, मअन एक दूसरा ख़्याल नफ्स और शैतान की तरफ से आता है कि

हाँ हाँ बहुत अच्छी बात है, वाक़ई क़ाबिले अमल है, तुम्हें ज़रूर उस पर अमल करना चाहिए। लेकिन आज फलाँ उज़्र है फिर कर लेना, आज बहुत थके हुए हो बाद में कर लेना, आज ज़रा फलाँ काम है, बस आज रहने दो कल से पाबंदी के साथ उस पर अमल करना। यह ख़्याल सरासर नफ्स और शैतान का धोका होता है जिस में मुबतला होकर आदमी अमल से हाथ धो बैठता है।

दोस्तो! कल कभी आया है और न कभी आएगा, जब भी कल आएगा वह कल की नहीं आज की शकल में होगा। लिहाज़ा अल्लाह पाक की जानिब से मुतवज्जह किए जाने के बाद और दिल में अमल का ख़्याल आ जाने के बाद यह ख़्याल कि फिर कर लेंगे, बाद में कर लेंगे, कल से करेंगे, समझ लेना चाहिए कि यह ख़्याल हमारे दुश्मन की तरफ से डाला गया है।

इस धोके से कैसे बचें

लिहाज़ा उस वक़्त उनकी बातों में आने और उनकी हाँ में हाँ मिलाने के बजाए कुछ देर तवक़्क़ुफ करना चाहिए और यह सोचना चाहिए कि एक तरफ तो अल्लाह पाक की जानिब से डाला गया ख़्याल है जो हमारे सब से बड़े ख़ैर ख़्वाह औरसब से बड़े हमदर्द हैं और दूसरी तरफ नफ्स और शैतान की तरफ से डाला गया ख़्याल है जो हमारे सब से बड़े बद ख़्वाह और सब से बड़े दुश्मन हैं। अगर हम उस वक़्त अपने ख़ैर ख़्वाह और हमदर्द की बात मानते हैं और यह भला काम कर ले जाते हैं तो हमें उस अमल के सबब नेकियाँ मिलेंगीं और यह नेकियाँ कल क़यामत के रोज़ हमें जन्नत तक पहुंचाने का ज़रिया बनेंगी। और अगर हम दुश्मन की बात मानते हैं और यह भला काम नहीं करते तो

नेकियों से महरूम रह जाऐंगे, कहीं ऐसा न हो कि कल क़यामत के रोज़ उन्ही नेकियों की कमी हमारे जहन्नम में दाख़िले का सबब बन जाए। लिहाज़ा ऐ दिल! अब तू ख़ूद फैसला कर कि तुझे किस की बात मानना चाहिए, अपने हम दर्द और ख़ैर ख़्वाह की जिसकी मानना तुझे जन्नत तक पहुंचाएगा या अपने दुश्मन और बद ख़्वाह की जिसकी मानना तुझे जहन्नम तक पहुंचाएगा?

अगर हो सके तो उस वक़्त एक काम यह भी करें कि जब वह अमल को मोअख़्ख़र करवाना चाहें तो हम उस वक़्त अल्लाह पाक को पुकारें और उन से कहें कि या अल्लाह! जिस तरह आप ने मुझे अपनी जानिब मुतवज्जह होने की तौफीक़ दी है इसी तरह आप मुझे नफ्स और शैतान के पैदा करदा उन वसाविस से बचाते हुए उस अमल को अंजाम देने की तौफीक़ भी अता फरमाइये। मुझे उम्मीद है कि उस वक़्त इन तदाबीर का इख़्तियार करना हमारे अंदर हिम्मत और कुव्वत पैदा करेगा और हमें अमल पर खड़ा कर देगा। अल ग़र्ज़ एक ख़्याल तो दिल में यह डालते हैं कि अमल को मोअख़्ख़र करवाते हैं।

एक और धोका

और कभी यह करते हैं कि अमल का इस्तिख़्फाफ दिल में पैदा करते हैं और यह समझते हैं कि यह अमल सुन्नत ही तो है, कोई फर्ज़ या वाजिब थोड़ी ही है, अगर न किया तो क्या हरज है। बस जहाँ यह ख़्याल आया और आदमी ने उस ख़्याल की ताईद करते हुए अपने हाथ पैर ढीले छोड़े तो वह धोका खा जाता है और अमल से हाथ धो बैठता है।

चुनान्चे एक मर्तबा ख़ुद मेरे साथ यह वाक़्या पेश आया कि

मैं एक मर्तबा अपनी किसी ज़रूरत से यूपी के इलाक़े में गया हुआ था। उस वक़्त सरदी का ज़माना था और मच्छर भी ख़ूब थे। जब रात हो गई तो मेज़बान ने मेरे लिए एक बड़ी मच्छरदानी का इंतिज़ाम किया। मैं अपनी सारी ज़रूरियात से फ़ारिग़ होने के बाद और अपने इल्म के मुताबिक़ सोने से पहले के तमाम आमाले मसनूना से फ़ारिग़ होकर सोने के लिए मच्छरदानी में चला गया। कुर्ता पहले ही बाहर हुक (खूंटी) पर टाँग चुका था। जब लेटा तो ख़्याल आया कि सोने से क़ब्ल मिसवाक करना रह गया। अभी यह ख़्याल आया ही था कि फ़ौरन नफ़्स ने एक तक़रीर शुरू कर दी कि देखो! तुम मच्छरदानी में आ चुके हो और मिसवाक बाहर कुर्ते में रखी हुई है, कमरे में मच्छर बहुत हैं, अगर मच्छरदानी से बाहर निकलोगे तो सारे मच्छर अंदर घुस आऐंगे, लिहाज़ा बाहर न निकलो और आज मिसवाक किए बिग़ैर ही सो जाओ। और तुम रोज़ाना मिसवाक कर ही लेते हो, अगर आज न किया तो क्या हरज है? और फिर उस वक़्त मिसवाक करना सुन्नत ही तो है, फ़र्ज़ या वाजिब तो है नहीं, सुन्नत पर अमल के सिलसिले में जो गुंजाइशें हैं वह सब उन्ही मजबूरी के मवाक़े के लिए हैं, लिहाज़ा आज रहने दो, कल कर लेना। मेरे ख़्याल पर नफ़्स ने एक लम्बी चौड़ी तक़रीर दी, लेकिन जैसा कि मैंने पहले अर्ज़ किया था कि जब आदमी को सुन्नत पर अमल की फ़िक्र लाहिक़ हो जाती है और वह हत्तल इम्कान उस का ऐहतिमाम करता है तो फिर ऐसे मवाक़े पर अल्लाह पाक ख़ुद उसकी रहबरी फ़रमाते हैं।

चुनान्चे जैसे ही उसकी तक़रीर ख़त्म हुई फ़ौरन अल्लाह पाक ने मेरी रहबरी फ़रमाई और मुझे एक बुज़ुर्ग का क़ौल याद

दिलाया। वह फरमाते हैं कि " मशक़्क़त के डर से नेकियाँ न छोड़, मशक़्क़त जाती रहेगी नेकियाँ बाक़ी रहेंगी। और लज़्ज़त के शौक़ में गुनाह न कर, लज़्ज़त जाती रहेगी गुनाह बाक़ी रहेगा।

देखिए! फौरन अल्लाह पाक की जानिब से रहबरी की गई या नहीं? फौरन की गई। बस फिर क्या था, उस क़ौल के याद आते ही बदन में बिजली सी दौड़ गई, सारी सुस्ती ख़त्म हो गई और मुझे अपने अंदर हिम्मत और कुव्वत महसूस हुई। मैं फौरन उठा, मच्छरदानी से बाहर निकला, कुर्ते के अंदर से मिसवाक निकाली और मिसवाक करके दोबरा मच्छरदानी के अंदर आया और अपने सिरहाने मिसवाक खड़ी कर दी। इस लिए कि सोते वक़्त मिसवाक का सिरहाने खड़ा रखना भी मसनून है। सोते वक़्त आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम के सिरहाने जो चीज़ें रहा करती थीं उन में एक चीज़ मिसवाक भी होती जिसे आप अपने सिरहाने खड़ी रखते थे।

मुत्तक़ियों के साथ रहने का हुक्म

देखिए! अल्लाह वालों की बात में कितनी तासीर होती है कि सिर्फ उनका क़ौल याद आ जाने पर आदमी अपने अंदर हिम्मत और कुव्वत महसूस करता है। जब उनका क़ौल याद आ जाने पर इतनी हिम्मत और कुव्वत पैदा हो जाती है जब कि कहने वाला सामने मौजूद भी नहीं होता, तो अगर हम किसी अल्लाह वाले की सोहबत इख़्तियार करें, इख़्लास के साथ बकसरत उनकी ख़िदमत में आया जाया करें और उन के साथ एक मज़बूत तअल्लुक़ और गहरा रब्त बना लें तो फिर हम ख़ुद सोचें कि उस वक़्त हमारी हिम्मत और कुव्वत का क्या हाल होगा और आमाल पर जमे रहना हमारे

लिए किस क़द्र आसान होगा।

इसी लिए अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने आम मोमिनीन को मुत्तक़ियों के साथ रहने का हुक्म दिया है। यह हुक्म इसी लिए दिया गया कि यह हज़रात अज़्म व हिम्मत के पहाड़ होते हैं। जब हम लोग उन के पास आते जाते रहेंगे तो उनके आमाल देख कर, उनके अख़्लाक़ देख कर, उनके अज़्म औ हौसला देख कर हमारे अंदर भी आमाल पर इस्तिक़ामत की हिम्मत और क़ुव्वत पैदा होगी। इसी लिए कहा जाता है कि "दिल को दिल से राह होती है''। इस दिल को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने ऐसा बनाया ही है कि वह बहुत जल्द चीज़ों का असर क़बूल करता है। अल ग़र्ज़ मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि नफ्स और शैतान कभी तो मुख़्तलिफ आज़ार दिखला कर अमल को मोअख़्ख़र करवाते हैं और कभी अमल का इस्तिख़्फाफ दिल में पैदा कर के आदमी को अमल से रोक देते हैं।

एक इश्काल और उसका जवाब

सुन्नत से मुतअल्लिक़ यह ख़्याल कि "यह सुन्नत ही तो है, फर्ज़ या वाजिब तो है नहीं'' हर एक के दिल में आता है। लेकिन मुझे कहना तो नहीं चाहिए और कहते हुए डर भी लग रहा है कि आमी आदमी जो हूँ, अल्लाह पाक मेरी उस गुस्ताख़ी को माफ फरमाऐं। वल्लाह मैं यह बात तनक़ीद के तौर पर नहीं बल्कि हमदर्दी के तौर पर कह रहा हूँ कि शायद किसी को यह बात लग जाए और वह अपने रवय्ये पर नज़रे सानी करे। वह यह कि सुन्नत पर मुदावमत के साथ अमल करने सिलसिले में अहले इल्म को यह इशकाल बहुत होता कि सुन्नत आख़िर सुन्नत है, कोई वुजूब के दर्जे की चीज़ तो है नहीं कि उस पर अमल का इस क़द्र

इलतिज़ाम किया जाए। सुन्नत पर अमल के सिलसिले में शरीअत ने बड़ी गुंजाइशें रखी हैं। अमल कर लिया तो बहुत अच्छा, बहुत ख़ूब, वरना कोई हरज की बात नहीं।

दोस्तो! बेशक सुन्नत सुन्नत ही है, फर्ज़ या वाजिब के दर्जे की चीज़ नहीं है। शरीअत की निगाह में उसका दर्जा बहरहाल फराइज़ और वाजिबात से कम है। यही वजह है कि उस पर फराइज़ और वाजिबात की तरह अमल करना ज़रूरी है और न उस पर इस दर्जा की शिद्दत के साथ अमल का मुतालबा ही दुरूस्त है, बल्कि शरीअत ने मुख़्तलिफ आमाल के जो मुख़्तलिफ दर्जात मुक़र्रर कर रखे हैं उन दर्जात व मरातिब के ऐतिक़ाद के साथ और उनके माबैन फर्क़े मरातिब को मलहूज़ रखते हुए ही उन आमाल पर अमल करना चाहिए। मसअलन फर्ज़ को फर्ज़ के दर्जे में रखते हुए, वाजिब को वाजिब के दर्जे में रखते हुए, सुन्नत को सुन्नत के दर्जे में रखते हुए, मुस्तहब को मुस्तहब के दर्जे में रखते हुए और आदाब को आदाब के दर्जे में रखते हुए ही उन पर अमल करना चाहिए। ताहम अगर कोई शख़्स अपने तौर पर किसी ग़ैर वाजिब अमल, मसलन सुन्नत या मुस्तहब पर बनिय्यत कुरबत इलल्लाह पाबंदी के साथ अमल करता हो और उस अमल के ग़ैर वाजिब होने के ऐतिक़ाद के साथ साथ उसके तारिक को लायक़े मज़म्मत भी न समझता हो तो फिर ऐसे शख़्स को ज़रूर उसका ऐहतिमाम करना चाहिए और ख़ूब ज़ौक़ व शौक़ के साथ करना चाहिए।

नीज़ अगर शराइते मज़कूरा की रिआयत के साथ कोई बाप अपने बेटे को, उसातज़ अपने शागिर्द को, शैख़ अपने मुरीद को सुनन व मुस्तहब्बात के ऐहतिमाम की तरग़ीब दे कि देखो बेटा!

सुनन व मुस्तहब्बात का भी ऐहतिमाम किया करो। इस लिए कि ऐहतिमाम करने में कुछ जाता तो है नहीं, कुछ न कुछ मिलता ही है, तो उसे ज़रूर उसकी तरग़ीब भी देना चाहिए, ताकि सुनन व मुस्तहब्बात की रिआयत व ऐहतिमाम उनका मिज़ाज बन जाए। जब उन्हें सुनन व मुस्तहब्बात के ऐहतिमाम पर दवाम हासिल हो जाएगा तो फिर फराइज़ व वाजिबात के ऐहतिमाम पर दर्जए औला दवाम हासिल होगा। जब शराइते मज़कूरा की रिआयत के साथ अवाम को सुनन व मुस्तहब्बात के ऐहतिमाम की तरग़ीब दी जा सकती है और उन्हें इस का ऐहतिमाम करना भी चाहिए तो फिर उलमा जो कि अवाम के आइडियल और मुक़तदा हैं और जिन के अख़्लाक़ व आमाल अवाम के लिए नमूना और मिसाल की हैसियत रखते हैं, उन्हें आख़िर सुनन व मुस्तहब्बात का किस दर्जा ऐहतिमाम करना चाहिए।

हाँ अलबत्ता जब कुछ लोग या कोई जमात किसी ग़ैर वाजिब अमल को वाजिब क़रार देने लगे और उसके तारिक को मतऊन करने लगे तो फिर उस वक़्त सुन्नत का तर्क कर देना ही अफ़ज़ल है ताकि आमाल के माबैन फ़र्क़े मरातिब वाज़ेह हो सके, उस वक़्त का दीन यही है और यही शरीअत का मिज़ाज भी है, लेकिन अगर यह बात न हो तो फिर सुन्नत को "सुन्नत ही तो है" कह कर नज़र अंदाज़ कर देना और उस पर अमल न करना बहुत बड़े नुक़सान और ख़सारे की बात है।

देखिए! जान बचाना फ़र्ज़ का दर्जा रखता है और उस फ़र्ज़ की बजा आवरी बक़द्रे ज़रूरत खाना खा कर भी हो सकती है। फिर यह कि कोई चीज़ भी खा लें तब भी यह फ़र्ज़ अदा हो सकता

है, लेकिन हम सोचें कि इस मामले में हमारा मिज़ाज क्या है? क्या हम सिर्फ बक़द्रे ज़रूरत खाने पर इकतिफा करते हैं? नहीं बल्कि अपनी भूक के बक़द्र खाते हैं। इसी तरह क्या जो भी मयस्सर आ जाए उसे खा लेते हैं? नहीं, बल्कि अपनी पसंद और अपनी चाहत का ख़्याल रखते हैं। इसी तरह कपड़ा पहनने का मामला भी है कि सत्र का छुपाना फर्ज़ है, अगर हम नाफ से लेकर घुटनों तक का हिस्सा ढाँप लें और किसी भी कपड़े से ढाँप लें तब भी यह फर्ज़ अदा हो जाएगा लेकिन क्या हम इसी क़द्र कपड़ा पहनने पर इकतिफा करते हैं? नहीं, बल्कि पूरे बदन को ढाँपना पसंद करते हैं और किसी भी कपड़े से नहीं ढाँपते, बल्कि उम्दा क़िस्म के कपड़े ज़ेबतन करते हैं।

ठीक इसी तरह सुन्नतों का मामला भी है कि फराइज़ की अदाएगी से नफ्से फराइज़ तो अदा हो जाते हैं, लेकिन उनकी तकमील सुन्नतों के ज़रिए ही होती है। बअलफाज़े दीगर यूँ कह सकते हैं कि सुन्नतें फराइज़ की पूरी क़ीमत दिलाते हैं और उन में रूह सुन्नतों के ऐहतिमाम की बदौलत पड़ती है। यह सारी बातें मैंने उलमाए किराम की ज़बानी सुनी और मालूम कर रखी हैं, इस लिए बयान कर दी, वरना तो मैं इस तरह के इल्मी मौज़ू को छेड़ता हूँ और न ही जानता हूँ।

सहाबए किराम की सोच और हमारी सोच

और फिर उन सब से बढ़ कर बात तो यह है कि सुन्नतें करने के लिए होती हैं, छोड़ने के लिए नहीं होतीं। सहाबए किराम सुन्नत पर इस लिए अमल करते थे कि यह सुन्नत है सुन्नत, इसे कैसे छोड़ें। और हम सुन्नत को इस लिए छोड़ देते हैं कि यह

सुन्नत ही तो है। देखिए! सहाबए किराम की सोच में और हमारी सोच में कितना बड़ा फ़र्क़ है। वह सुन्नत को इस लिए नहीं छोड़ते थे कि यह हमारे आक़ा की सुन्नत है, हमारे महबूब का तरीक़ा है। भला हम अपने महबूब के तरीक़े को कैसे छोड़ दें। और हम सुन्नत को इस लिए छोड़े रहते हैं कि यह सुन्नत ही तो है। अगर अमल न किया तब भी क्या हरज है, कोई गुनाह की बात तो है नहीं।

सुन्नत को हलका न समझें

दोस्तो! हम सुन्नत को हलका कहते तो नहीं, लेकिन उसका ऐहतिमाम न करना और उस से बेऐतेनाई बरतना यही बतलाता है कि हम उसे बहुत हलका समझते हैं। वरना क्या वजह है कि दुनिया के बहुत से मुश्किल तरीन काम हम कर ले जाते हैं और काम की तकमील में हारिज बनने वाली तमाम तर रोकवटों को दूर कर ले जाते हैं, लेकिन नहीं कर पाते तो सिर्फ सुन्नत पर अमल नहीं कर पाते। क्या सुन्नत पर अमल करना इस क़द्र मुश्किल काम है कि हम से हो नहीं पाता या फिर यह हमारे दिल में सुन्नत की अज़मत इंतिहाई दर्जे कम हो चुकी है जिसकी वजह से हम उसे लायक़े ऐतिना नहीं समझते। इस लिए कि जब किसी काम की अहमियत और अज़मत दिल में होती है तो फिर आदमी तमाम तर रोकावटों के बावजूद उस काम को कर ले जाता है, लेकिन जब किसी काम की अज़मत और अहमियत दिल में नहीं होती तो फिर वह काम ख़्वाह कितना ही आसान तरीन काम क्यों न हो, उसके बावजूद आदमी उस काम को नहीं कर पाता। वजह सिर्फ यह होती है कि दिल में उस काम की अज़मत नहीं है।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मुहब्बत बढ़ाने का अमल

और सिर्फ सुनन ही क्या, आदमी को तो मुस्तहब्बात और आदाब की भी रिआयत करना चाहिए कि उनकी रिआयत करने में भी कुछ न कुछ मिलता ही है। आप सोचेंगे कि अब तक सुन्नतों के ऐहतिमाम की बात कह रहे थे, अब मुस्तहब्बात के ऐहतिमाम को भी कह रहे हैं। हाँ दोस्तो! मुस्तहब्बात के ऐहतिमाम को भी कह रहा हूँ। क्योंकि जिस शख़्स को अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत होगी उसे सुनन तो छोड़िऐ मुस्तहब्बात का तर्क करना भी गवारा न होगा। इस लिए कि मुस्तहब्बात की रिआयत भी बहुत कुछ दिलाती है। क्या दिलाती है? अल्लाह की और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत दिलाती है। वह कैसे? वह इस तरह कि अहले इल्म की ज़बानी सुना है कि मुस्तहब 'हुब' से बना है जिस के माना मुहब्बत के हैं। पस जिसे अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से मुहब्बत होगी और वह उस मुहब्बत में ज़्यादती का तालिब होगा वह मुस्तहब की भी रिआयत किया करेगा।

लिहाज़ा मालूम हुआ कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त और उनके महबूब जनाब नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत को पाने और उसे बढ़ाने का एक आसान ज़रिया मुस्तहब्बात का ऐहतिमाम है। इस लिए कि मुस्तहब्बात की रिआयत ही आदमी को सुन्नतों के ऐहतिमाम तक पहुंचाती है और उनका तर्क करना सुन्नतों के तर्क तक पहुंचाता है।

डरने की बात

कुछ इसी तरह का मज़मून हज़रत शैखुल हीदस मौलाना जकरिया साहब रह० ने अपनी किताब 'ऐतिदालु फी मरातिबिर रिजाली' जोकि 'इस्लामी सियासत' के नाम से मशहूर व मारूफ है, उस में एक अरबी इबारत नक़ल की है जिस में तक़रीबन उसी मज़मून को बयान किया गया है। लिखा है:

"مَنْ تَهَاوَنَ بِالْاٰدَابِ عُوْقِبَ بِحِرْمَانِ السُّنَّةِ وَمَنْ تَهَاوَنَ بِالسُّنَّةِ عُوْقِبَ بِحِرْمَانِ الْفَرَائِضِ وَمَنْ تَهَاوَنَ بِالْفَرَائِضِ عُوْقِبَ بِحِرْمَانِ الْمَعْرِفَةِ"

कि जो शख़्स शरीअत के आदाब को ख़फीफ और हलका समझता है उसको सुन्नत से महरूमी का अज़ाब दिया जाता है। और जो शख़्स सुन्नत को हलका और ख़फीफ समझता है उसको फराइज़ की महरूमी की सज़ा दी जाती है। और जो फराइज़ को हलका समझता है वह मारफत की महरूमी में मुबतला होता है। यह बहुत ही सख़्त अंदेशा नाक बात है। शरीअत के मामूली आदाब को भी इस्तिख़्फाफ और फ़ुज़ूल समझ कर छोड़ना नहीं चाहिए कि इस सिससिले की हर कड़ी अपने से ऊपर की दौलत से महरूमी का सबब बनती है''।

लिहाज़ा सुन्नतों को मामूली समझें और न ही उन्हें "सुन्नत ही तो है'' कह कर नज़र अंदाज़ करें। कहीं ऐसा न हो कि सुन्नतों से हमारी यह बेऐतिनाई धीरे धीरे हमें फराइज़ के तर्क तक पहुंचा दे। اَللّٰهُمَّ احْفَظْنَا مِنْهُ.

ख़तरे की बात

अभी कुछ अरसा क़ब्ल मैंने एक किताब में एक वाक़या पढ़ा जिसे पढ़ कर मैं हद दर्जा ख़ौफज़दा हो गया हूँ और बात भी वाक़ई बहुत डरने की है। यह वाक़या इमाम औज़ाआी रहमतुल्लाह के ज़माने का है जो कि ताबअी हैं और इमामा अबू हनीफा रहमतुल्लाह अलैह के हम अस्र लोगों में हैं। यानी जिस ज़माने में यह वाक़या पेश आया है वह ज़माना हज़रत नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने से बहुत ज़्यादा क़रीब है। सुनें, ज़रा तवज्जुह से सुनें और इबरत हासिल करें।

अल्लामा ज़ैनुद्दीन इब्ने रजब ने लिखा है कि एक मर्तबा उनके पास एक ऐसा शख़्स आया जो कफन चोर था। मगर अब वह उस क़बीह हरकत से बाज़ आ चुका था और तौबा करके नेकी की ज़िंदगी गुज़ार रहा था। अल्लामा ज़ैनुद्दीन ने उस से पूछा कि तुम मुसलमानों के कफन चुराते रहे हो और तुम ने मरने के बाद उन की हालत देखी है। यह बताओ कि जब तुम ने उनके चेहरे खोले तो उनका रूख़ किस तरफ था? उस ने जवाब दिया कि अकसर चेहरे क़िब्ले के रूख़ से फिरे हुए थे। हज़रत ज़ैनुद्दीन को बड़ा तअज्जुब हुआ। क्योंकि दफन करते हुए तो मुसलमानों का चेहरा क़िब्ला रूख़ किया जाता है। उन्होंने इमाम औज़ाआी रहमतुल्लाह अलैह से इस बारे में पूछा तो इमाम औज़ाआी रह० ने पहले तो तीन बार : 'इन्ना लिल्लाही व इन्ना इलैही रजिऊन' पढ़ा। फिर फरमाया कि यह वह लाग होंगे जो अपनी ज़िंदगी में सुन्नतों से मुंह फेरने वाले थे।

सुना आप ने ! सुन्नत को सुन्नत समझ कर नज़र अंदाज़

कर देना कितने बड़े ख़तरे की बात है कि ईमान ही से हाथ धो बैठने का अंदेशा है। अल्लाह पाक हम सब की और पूरी उम्मते मुस्लिमा की हिफाज़त फरमाए और जिस क़द्र अज़मत व मुहब्बत के साथ सुन्नतों पर अमल करना उन्हें पसंद हो हम सब को उतनी अज़मत व मुहब्बत के साथ सुन्नतों पर अमल की तौफीक़ नसीब फरमाऐं।

सुन्नतों पर अमल के मवाक़े तलाश कीजिए

और जिसे सुन्नतों पर अमल की तौफीक़ हो जाती है वह सिर्फ सुन्नतों पर अमल नहीं करता बल्कि सुन्नतों पर अमल के मवाक़े तलाश करता रहता है और जहाँ मौक़ा मिलता है वह बसद शौक़ उस पर अमल करता है।

चुनान्चे एक आदमी जिन्हें मैं जानता हूँ, उनका मामूल है कि जब बाज़ार में कोई नया फल आता है तो वह मुख़्तलिफ निय्यतों के साथ उसे ख़रीद कर घर लाते हैं।

१. अव्वल अहले व अयाल के हुकूक़ की अदाएगी की निय्यत से।

२. दूसरे इस निय्यत से कि हदीस पाक में मौसम के नये फल के इस्तिमाल की तरग़ीब वारिद हुई हे और उसके मुख़्तलिफ फवाइद बतलाए गए हैं।

३. तीसरे इस निय्यत से कि जब आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़िदमत में मौसम का नया फल आता तो आप उसे बोसा देते, आँखों से लगाते, फिर यह दुआ पढ़ते:

اَللّٰھُمَّ كَمَا اَطْعَمْتَنَا اَوَّلَهٗ فَاَطْعِمْنَا اٰخِرَهٗ

(ऐ अल्लाह! जिस तरह आप ने हमें उसका शुरू खिलाया आप हमें उसका आख़िर भी खिलाइए) और फिर किसी बच्चे को दे देते। वह कहते हैं कि मैं मौसम का नया फल इसी लिए ख़रीद कर लाता हूँ ताकि उन सुन्नतों पर अमल क़र सकूँ।

दोस्तो! मौसम का नया फल हम भी ख़रीदते हैं और अपने घर ले जाते हैं, लेकिन क्या कभी हम ने भी इन निय्यतों के साथ फल खरीदा है? क्या नया फल खरीदते वक़्त हमारे दिल के किसी गोशे में इन सुन्नतों पर अमल का जज़्बा होता है? मियाँ! जज़्बा तो क्या होता हमें तो इसका इल्म ही नहीं है कि इस मौक़े के भी कुछ मसनून आमाल हैं जिन्हें हमारे आक़ा उस वक़्त अंजाम दिया करते थे इल्ला माशा अल्लाह। हमारी ग़फ़लत का यह आलम है कि जो सुन्नतें हम जानते हैं हम से उन्हीं सुन्नतों पर अमल नहीं हो पाता, फिर भला उन सुन्नतों पर अमल का मौक़ा क्यों कर मयस्सर आए जो हमारे इल्म ही में नहीं हैं। मालूम सुन्नतों पर अमल का जज़्बा है और न ही दीगर सुन्नतों के जानने की फ़िक्र और जुस्तजू है, जहाँ हैं और जिस हालत पर हैं बस उसी पर मुतमइन हैं। अल्लाह पाक हमारे हाल पर रहम फरमाऐं और हमारी उन तमाम ख़ताओं और कुसूरों को माफ फरमाऐं जिन की नुहूसतों के सबब हमारे दिलों में सुन्नतों की अहमियत और अज़मत कम से कम तर होती चली जा रही है और जिसकी सज़ा हमें उस सूरत में दी जा रही है कि हमें प्यारे आक़ा की उन प्यारी अदाओं की इत्तिबा ही से महरूम कर दिया गया है।

दोस्तो! कुछ तो समझें। सुन्नतों की इत्तिबा से महरूमी दर हक़ीक़त बहुत बड़ी सज़ा है जो हमें मिल रही है, लेकिन अफसोस

सद अफ़सोस! कि हामरी ग़फ़लत इस दर्जे को पहुंच चुकी है कि अब हमें इस सज़ा का ऐहसास भी नहीं होता।

वाए नाकामी मताअे कारवाँ जाता रहा
और कारवाँ के दिल से ऐहसासे ज़ेयाँ जाता रहा

इत्तिबाए सुन्नत की बरकतें

अल्लाह के बहुत से नेक बंदे अब भी दुनिया में ऐसे हैं जो हमा वक़्त आक़ा को याद रखते हैं, बल्कि याद करने और याद रखने के मवाक़े तलाश करते रहते हैं कि कोई तो मौक़ा मिले हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को याद रखने का। और जब कोई मौक़ा मयस्सर आ जाता है तो फिर अमल से नहीं चूकते। ज़रा सोचें कि जो आदमी अल्लाह के प्यारे की प्यारी अदाओं का इस तरह ख़्याल रखता होगा तो इस इत्तिबा की बरकत से उसके दिल में, उसके घर में और उसके घर की चीज़ों में किस क़द्र अनवार व बरकात होते होंगे।

चुनान्चे एक साहब जिनके मुतअल्लिक़ मैं जानता हूँ कि वह हत्तल इम्कान सुन्नतों का ऐहतिमाम करते हैं और सिर्फ ऐहतिमाम ही नहीं करते, बल्कि सुन्नतों के जानने और सीखने की फ़िक्र और जुस्तजू में लगे रहते हैं, किसी अमल को दानिस्ता तौर पर सुन्नत के ख़िलाफ अंजाम नहीं देते।

एक मर्तबा उनके घर नक़्शबंदी सिलसिले के एक बुज़ुर्ग तशरीफ लाए, अहले नज़र लोगों में से थे। हज़रत का क़याम तो कहीं और था, लेकिन यहाँ वह उन साहब की दावत पर तशरीफ लाए थे। कुछ देर के बाद हज़रत ने उन से फरमाया कि भई! मैं तुम्हारे घर में बड़ी नूरानियत महसूस कर रहा हूँ, आख़िर उसकी

वजह क्या है? वह साहब ख़ामोश रहे, कोई जवाब न दिया। जब खाने का वक़्त हो गय तो दस्तरख़्वान लगा दिया गया, हज़रत ने खाना खाया और कुछ देर के बाद तशरीफ ले गए।

तीन रोज़ के बाद हज़रत ने अज़ खुद उन्हें फोन किया और फरमाया कि भाई साहब! उस रोज़ मेरी आप से पहली मुलाक़ात हुई थी और आप ने मुझे खाना खिलाया था। हमारे दरमियान कोई ख़ास तअल्लुक़ न होने के बावजूद मैं आप से बिला तकल्लुफ यह दरख़्वास्त करना चाहता हूँ कि क्या आप मुझे एक मर्तबा और खाना खिलाऐंगे? वह साहब बड़े खुश हुए। कहने लगे कि हज़रत! इस में पूछने की क्या बात है, आप ज़रूर तशरीफ लाऐं, यह तो मेरे लिए सआदत की बात होगी कि मुझे दोबारा आप की ख़िदमत का मौक़ा मिले। हज़रत ने फरमाया कि भई! खाना खाना मक़सद नहीं है, खाना तो मैं ज़िंदगी भर खाता रहा हूँ और खा कर ही बूढ़ा हुआ हूँ, बल्कि बात कुछ और है। पूछा क्या बात है, फरमाया बात दर असल यह है कि आप के यहाँ खाना खाने के बाद से लेकर अब तक मैं अपने दिली कैफियत में बहुत तग़य्युर पा रहा हूँ और क़ल्ब में बड़ी नूरानियत महसूस कर रहा हूँ, अलावा अज़ीं इस दौरान आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़ियारत भी नसीब हो चुकी है। इस लिए जी चाहता है कि एक मर्तबा आपके घर का बा बरकत खाना और खा लूँ। देखिए! इत्तिबाए सुन्नत के अनवार व बरकात दिखलाए गए या नहीं?

क़ल्ब कब रोशन होता है?

याद रखें! जिस तरह हर गुनाह में एक ज़ुल्मत होती है इसी तरह हर सुन्नत में एक नूर होता है। ज़ुल्मत, तारीकी और अंधेरे

को कहते हैं जब कि नूर रोशनी और उजाले को कहा जाता है। और यह बात हम सभी जानते हैं कि किसी चीज़ को देखने के लिए रोशनी और उजाले का होना ज़रूरी होता है, तारीकी और अंधेरे में कोई भी चीज़ ख़्वाह नफा की हो या नुक़सान की, दिखाई नहीं देती।

जब आदमी सुबह से लेकर शाम तक के अपने तमाम आमाल को सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम देता है तो हर सुन्नत के अलग अलग अनवार उसके क़ल्ब में जमा होते जाते हैं जिनकी वजह से उसका क़ल्ब बहुत रोशन और नूरानी हो जाता है। क़ल्ब की उसी रोशनी और नूरानियत के सबब उसे भले और बुरे कामों के दरमियान तमीज़ होती है कि यह भला काम है, उसे करना चाहिए और बुरा काम है उसे छोड़ देना चाहिए। जब यह अनवार बढ़ते बढ़ते एक मख़्सूस सतह को पहुंच जाते हैं तो फिर उस शख़्स को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मारफत और पहचान नसीब होती है। और जिस क़द्र यह मारफत और पहचान बढ़ती जाती है उसी क़द्र अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की अज़मत व किबरियाई, क़ुदरत व जलालत भी उस पर आशकारा होती जाती है। फिर वह उस अज़मत व किबरियाई, क़ुदरत व जलालत के पेशे नज़र उनकी नाफरमानी करते हुए घबराता है। नीज़ अनवार के उस सतह तक पहुंचने के बाद फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त भले आमाल के फवाइद और उनकी हिक्मतें और बुरे आमाल की मुज़िर्रतें और उनके नुक़सानात भी उस पर खोलते जाते हैं। फिर उसे भले आमाल पर अल्लाह पाक की जानिब से होने वाली अताओं का भी ऐहसास होता है और बुरे आमाल पर दी जाने वाली सज़ाओं का भी इदराक और मुशाहेदा

होता है।

हम से गुनाहों का सुदूर क्यों होता है?

दोस्तो! यह बात हम सब जानते हैं कि हमें अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की नाफ़रमानी न करना चाहिए। हम यह भी जानते हैं कि मासीयत और नाफ़रमानी के सबब दुनिया और आख़िरत के बहुत से नुक़सानात हमें पहुंचते हैं, लेकिन क्या कभी हम ने सोचा कि यह सब जानते हुए भी हम अल्लाह पाक की नाफ़रमानी क्यों कर बैठते हैं? और उन नाफ़रमानियों के सबब पहुंचने वाले नुक़सान का हमें इदराक क्यों नहीं होता? उसकी वजह यही है कि हमारे क़ल्ब में वह नूर और रोशनी नहीं है जिस के सबब गुनाह की ज़ुल्मतें समझ में आती हैं, उस के नुक़सानात समझ में आते हैं, उसी नूर और रोशनी के न होने की बिना पर हम गुनाह कर बैठते हैं और यह समझ नहीं पाते कि उस मअसीयत और नाफ़रमानी के सबब हमारा किस क़द्र नुक़सान हो गया है।

गुनाह से सुन्नतो का नूर बुझ जाता है

लिहाज़ा ज़रूरी है कि हम जहाँ सुन्नतों की इत्तिबा का ऐहतिमाम करें वहीं उस इत्तिबा के सबब मिलने वाली नेकियाँ और उन नेकियों के अनवार की हिफाज़त भी करें जो हमारे क़ल्ब में जमा हो रहे हैं, उन्हें किसी गुनाह के इरतिकाब से ज़ाया न करें। इस लिए कि जिस तरह नेकियों के अनवार क़ल्ब में जमा होते हैं इसी तरह गुनाह और मासीयत के सबब वह अनवार सल्ब भी हो जाते हैं। हमारे पास यह अनवार इसी लिए जमा नहीं रह पाते कि हम अपनी मालूमात की हद तक कुछ सुन्नतों का ऐहतिमाम तो कर

लेते हैं, लेकिन उन सुन्नतों के अनवार को महफ़ूज़ रखने की फ़िक्र नहीं करते। कभी आँखों के ग़लत इस्तिमाल से, कभी कानों के ग़लत इस्तिमाल से, कभी ज़बान के ग़लत इस्तिमाल से और कभी दिल के ग़लत इस्तिमाल से उन अनवार को ज़ाया कर देते हैं।

क्या बातऊँ दोस्तो! हमें अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मारफ़त इसी लिए नहीं मिलती कि हम उन अनवार को बाक़ी और महफ़ूज़ रख कर उस मख़्सूस सतह तक नहीं पहुंचाते जहाँ पहुंच कर आदमी को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की पहचान नसीब होती है। यह कितनी बड़ी हिमाक़त की बात है कि आदमी दिन भर मुख़्तलिफ़ आमाल को अंजाम दे कर ढेर सारी नेकियाँ हासिल करे, लेकिन रात होते होते अपनी सारी नेकियाँ लूटा दे और जब घर लौटे तो बिल्कुल ख़ाली हाथ और कंगाल हो, यह तर्जे अमल तो इंतेहाई अहमक़ाना है। अक़लमंद और समझदार आदमी हरगिज़ ऐसा नहीं करता बल्कि वह अपनी कुव्वत और तवानाई को जिस क़द्र नेकियों के हासिल करने पर सर्फ करता है उस से कहीं ज़्यादा वह अपनी उन नेकियों को बचाने और महफ़ूज़ रखने की फ़िक्र किया करता है। और जो फ़िक्र करता है वह नेकियाँ बचा भी ले जाता है। किस तरह बचाता है, ज़रा यह भी सुन लीजिए।

उन्ही साहब का एक मामूल जो मैं ख़ुद भी जानता हूँ कि वह सिर्फ सुन्नतों का ऐहतिमाम नहीं करते बल्कि उन तमाम रास्तों से हत्तल इम्कान बचने का ऐहतिमाम करते हैं जिन रास्तों से नेकियाँ और उनके अनवार ज़ाय हो जाया करते हैं। चुनान्चे एक रोज़ मुझ से कहने लगे कि शकील भाई! मेरी अहलिया अल हम्दु लिल्लाह बहुत कम सोख़न हैं, फोज़ूल बातों से हत्तल इम्कान इजतिनाब

करती हैं हम ने आपस में तैय कर रखा है कि हम किसी की ग़ीबत करेंगे न किसी की ग़ीबत सुनेंगे, बल्कि मैंने अपनी अहलिया से कह रखा है कि हम किसी का ग़ायबाना तज़किरा ही न करेंगे, बस तुम मेरी बात करो और मैं तुम्हारी बात करूँ। उसके अलावा किसी तीसरे का तज़किरा हमारे दरमियान नहीं होगा। और अगर किसी का तज़किरा ख़ैर के साथ शुरू भी होगा तो हम जल्द से जल्द उसे बंद कर देंगे। कहने लगे कि जब घर में किसी का तज़किरा ही नहीं होता तो फिर अहलिया के पास बहुत सा वक़्त बचा रहता है जिस में वह कई कई हज़ार दुरूद पढ़ लेती हैं। खाना पकाती रहती हैं और दुरूद पढ़ती जाती हैं। सुना आप ने! करने वाले अपने नेकियों को और उनके अनवार व बरकात को महफ़ूज़ रखने का किस क़द्र ऐहतिमाम करते हैं। यह सब उसी की बरकत थी जो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने हज़रत पर मुनकशिफ फरमाई थी।

दोस्तो! क्या हम ऐसा ऐहतिमाम नहीं कर सकते? क्या हमारा घर नहीं बन सकता? क्या हम नहीं चाहते कि हमें अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मारफ़त और पहचान नसीब हो? क्या हम नहीं चाहते कि हमारे घर में और हमारे घर की चीज़ों में नेकियों के अनवार दिखाई दें? उस में आख़िर मशक़्क़त ही क्या है? जब हम सुन्नतों का ऐहतिमाम करने लगेंगे और उन सुन्नतों के अनवार व बरकात को सल्ब होने से बचाऐंगे तो फिर इंशा अल्लाह हमारा घर भी ऐसा घर बन जाएगा, बस थोड़ी फ़िक्र और कोशिश की ज़रूरत है। जब हम उसकी फ़िक्र और कोशिश करेंगे तो फिर ख़ुद अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त हमारी मदद फरमाऐंगे और उन सारी बातों का हुसूल हमारे लिए कुछ मुश्किल न होगा।

अपनी नमाज़ों को भी सुन्नतों से मुज़य्यन करें

मैं यह बात पहले अर्ज़ कर चुका हूँ कि इत्तिबाए सुन्नत एक आसान तरीन अमल है जिस में अलग से कोई काम करना नहीं होता, बल्कि अपने रोज़ मर्रा के कामों में नबी का तरीक़ा मालूम करके उन्हें आप के तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम देना होता है। फिर यह भी अर्ज़ किया गया था कि सुन्नत की इत्तिबा बहुत से दुनियवी व उख़रवी मुनाफे और समरात के हुसूल का ज़रिया होती है। उन्हें मुनाफे और समरात में से एक यह भी है कि मुत्तबए सुन्नत आदमी को नमाज़ की हक़ीक़त और उसकी लज़्ज़त नसीब हो जाती है।

दोस्तो! एक है नमाज़ का पढ़ना और एक है नमाज़ की हक़ीक़त और लज़्ज़त का पा जाना। यह नमाज़ हमें इस लिए दी गई थी कि उसके ज़रिए हम अपनी ज़रूरियात और मोतालबात को अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त से मनवा सकें। हमें नमाज़ पढ़ते हुए बरसों गुज़र गए, लेकिन अफसोस कि उस नमाज़ को पढ़ कर हम अपनी ज़रूरियात और मुतालबात तो क्या मनवाते आज तक हमें नमाज़ से नमाज़ ही न मिल सकी, बरसों के नमाज़ी हैं, लेकिन नमाज़ की हक़ीक़त और उसकी लज़्ज़त से ना आशना हैं।

जब आदमी सुन्नतों का ऐहतिमाम करता है और उस पर दवाम हासिल कर लेता है तो फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त इत्तिबाए सुन्नत की बरकत से उसे अच्छी नमाज़ की तौफीक़ अता फरमाते हैं और नमाज़ की हक़ीक़त उस पर मुनकशिफ फरमाते हैं। फिर उसे नमाज़ में इस क़द्र लज़्ज़त मिलती है कि नमाज़ से उसका जी ही नहीं भरता, पढ़ता जाता है, लज़्ज़त बढ़ती जाती है, पढ़ता जाता है शौक़ बढ़ता जाता है।

चुनान्चे एक मर्तबा रमज़ानुल मुबारक के महीने में एक नौजवान आलिम मेरे पास आए और कहने लगे कि हज़रत! आज कल मग़रिब और ईशा के दरमियान ज़्यादा फासला नहीं रहता। मैंने कहा नहीं भाई, कम तो नहीं होता, तक़रीबन डेढ़ घंटे का फासला होता है। कहने लगे कि हज़रत! डेढ़ घंटा बहुत कम मालूम होता है। मैंने कहा क्यों, क्या बात है? कहने लगे कि मग़रिब की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर जब अव्वाबीन पढ़ने खड़ा होता अभी जी भी नहीं भरता कि ईशा की अज़ान हो जाती है, इस क़द्र मज़ा आता है कि वक़्त का पता ही नहीं चलता। फिर कहने लगे कि हज़रत! सजदे की लज़्ज़त तो मैं बयान ही नहीं कर सकता, जी चाहता है कि बस सजदे में पड़ा रहूँ। दिल नहीं मानता कि सजदे से सर उठाऊँ, लेकिन क्या करूँ कि बाहें दुखने लगती हैं। मजबूरन सजदे से सर उठाना पड़ता है।

एक क़ाबिले रश्क बंदा

एक साहब मुझ से कहने लगे कि हज़रत! ५० रकआत नफ्ल रोज़ाना पढ़ता हूँ उसके बावजूद जी नहीं भरता जी चाहता है कि और पढ़ूँ। लेकिन मसरूफियत की बिना पर मज़ीद नहीं पढ़ पाता।

अगर आप उनकी नमाज़ देखें तो वाक़ई आपको बड़ा रश्क होगा, पूरी नमाज़ ऐन सुन्नत के मुताबिक़ होती है। और सिर्फ नमाज़ ही सुन्नत के मुताबिक़ नहीं होती, बल्कि चौबिस घंटे के सारे आमाल सुन्नत के मुताबिक़ होते हैं। सुन्नत की इत्तिबा और ऐहतिमाम की ऐसी फिक्र मैंने बहुत कम लोगों में देखी है। बल्कि सच कहूँ तो मुझे अपनी ज़िंदगी में बस यही एक शख़्स ऐसा मिला है जिस के अंदर मैं सुन्नतों का इस क़द्र ऐहतिमाम पाता हूँ। अब तो यह हाल है कि इत्तिबए सुन्नत उनकी तबीअते सानिया बन चुकी है, उसके बिग़ैर उन्हें अच्छा ही नहीं लगता। इत्तिबाए सुन्नत के ऐसे

हरीस हैं कि हर दम सुन्नतों के मालूम करने की फ़िक्र और जुस्तजू में लगे रहते हैं।

मैं यह बात उनके बारे में किसी हुस्ने ज़न की बुनियाद पर नहीं कह रहा हूँ और न ही सुनी सुनाई बात नक़ल कर रहा हूँ, बल्कि मैंने ख़ुद उनके साथ सफर किया है। तक़रीबन बीस साल क़ब्ल मेरा चार महीने की जमात में साउथ अफरीक़ा जाना हुआ, उस सफर में वह हमारे साथ थे। बीस साल क़ब्ल उनकी उम्र ही क्या थी, बिल्कुल नौजवानी का आलिम था। लेकिन उसी वक़्त से उनके अंदर इत्तिबाए सुन्नत का ऐसा जज़्बा था कि हमें देख कर हैरत होती थी और उसकी बरकत से वह ऐसी अच्छी नमाज़ पढ़ा करते थे कि हमें उन पर बड़ा रश्क आता था। दो अलग अलग आदमियों को ख़्वाब में आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़ियारत हुई, आप ने उनका नाम लेकर फरमाया कि उनकी नमाज़ देखो, कैसी अच्छी नमाज़ पढ़ते हैं, उन के जैसी नमाज़ पढ़ा करो।

देखिए! उनकी नमाज़ कितनी अच्छी और अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की बारगाह में कितनी मक़बूल होगी कि ख़ुद आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम उसे अच्छी नमाज़ फरमा रहे हैं और उनके जैसी नमाज़ पढ़ने की तरग़ीब दे रहे हैं। आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम को किसी अमल का पसंद आ जाना इस बात की अलामत है कि वह अमल अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की निगाह में भी मक़बूल और पसंदीदा है। इस लिए कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने वही चीज़ें अपने महबूब की पसंदीदा बनाऐं जो ख़ुद अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को महबूब और पसंदीदा थीं।

इत्तिबाए सुन्नत के ऐहतिमाम ही की बरकत है कि उम्र तो उनकी ४५ के आस पास है, लेकिन इस उम्र में पचास से ज़ायद मर्तबा उन्हें आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़ियारत नसीब हो

चुकी है और सिर्फ यही नहीं, बल्कि ऐहतिमामे सुन्नत की बरकत से उन्हें हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़ात बा बरकात से ऐसी मुहब्बत और ऐसा इश्क़ हो चुका है कि कसरत से दुरूद पाक पढ़ते रहते हैं। अभी गुज़िश्ता से पेवस्ता सफर उमरा में वह हमारे साथ थे, एक जगह उन की तस्बीह खो गई, बहुत तलाश किया लेकिन न मिली जिस के सबब वह बहुत अफसुरदा थे। मैंने अफसुरदगी की वजह पूछी तो कहने लगे कि हज़रत! तस्बीह के खोने का ग़म नहीं है। बात दरअसल यह है कि मैंने उस तस्बीह पर बीस लाख दुरूद पढ़े थे, इस लिए वह तस्बीह मेरे नज़दीक इंतिहाई अहमियत की हामिल थी।

देखिए! हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलामु के साथ कैसा इश्क़ और कैसी मुहब्बत है कि सिर्फ एक तस्बीह पर बीस लाख दुरूद पढ़ा है, उसके अलावा जो पढ़ा होगा वह न जाने कितना होगा। मियाँ! मुहब्बत इत्तिबा पर मजबूर करती है और जब इत्तिबा पर दवाम हासिल हो जाता है तो फिर हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की मुहब्बत दिल में रासिख़ होती चली जाती है और फिर यह बतलाने की ज़रूरत नहीं कि जिस के दिल में आप की मुहब्बत रासिख़ हो चुकी होगी उसे किस क़द्र दुरूद पाक के ऐहतिमाम की तौफीक़ होगी।

दोस्तो! आक़ा की ज़ियारत का जी किस का नहीं चाहता, कौन मुसलमान ऐसा है जो यह नहीं चाहता कि मुझे एक मर्तबा ही सही, लेकिन आप की ज़ियारत नसीब हो जाए, लेकिन क्या हर एक को यह सआदत नसीब होती है? किसी को उम्र भर में एक मर्तबा भी आप की ज़ियारत नसीब नहीं होती और जिसे दो एक मर्तबा हो

जाती है तो वह ख़ुशी से फूले नहीं समाता, अपनी क़िस्मत पर नाज़ करता फिरता है। और एक यह हैं जिन्हें पचास से ज़ायद मर्तबा आप की ज़ियारत नसीब हो चुकी है और सिर्फ ज़ियारत नहीं होती दोस्तो बल्कि बशारतों के साथ ज़ियारत होती है। ज़रा सोचें कि यह किस क़द्र सआदत की बात है।

यह एक ऐसे शख़्स का हाल है जो हाफिज़ है न आलिम, बल्कि दावत व तबलीग़ का एक सीधा सादा साथी है, लेकिन समझदार साथी। एक ऐसा साथी जो अपनी इस्लाह की सच्ची फिक्र के साथ दावत के काम में लगा हुआ है, उलमा से मसाइल पूछते हुए, हर अमल की सुन्नत मालूम करके उसके मुताबिक़ अमल करते हुए और अपने बातिन की इस्लाह और तज़किया कराते हुए ज़िंदगी गुज़ार रहा है और सौ फीसद दीन को अपनी अमली ज़िंदगी में दाख़िल करने की फिक्र में लगा हुआ है।

यह उनकी दो एक बातें थीं जो मैंने आपके सामने बयान कर दीं, वरना तो इत्तिबाए सुन्नत के ऐहतिमाम की बरकत से जो इनामात और बशारतें उन्हें मिलीं और अब भी मिल रही हैं वह उस से बहुत ज़ायद हैं, जिन में बहुत सी बातों से मैं वाक़िफ भी हूँ, लेकिन क़सदन नक़ल नहीं करता, कहीं ऐसा न हो कि ज़ाहिर बीनों को उनकी सदाक़त ही में शक होने लगे।

आक़ा अपने घर बुलाते हैं

दोस्तो! आज भी दुनिया में ऐसे लोग हैं जो इसी दुनिया में जीते हैं, हमारे और आप के दरमियान ही रहते हैं, लेकिन इस दुनिया में रहते हुए वह एक अलग ही दुनिया का मज़ा पा रहे हैं। मैं एक बुज़ुर्ग को जानता हूँ जो बड़े अल्लाह वाले हैं, उनकी ज़िंदगी

में इत्तिबाए सुन्नत का इस क़द्र ऐहतिमाम है कि उन का कोई अमल ख़िलाफ़े सुन्नत नहीं देखता। जब वह हर दम हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को याद रखते हैं तो भला हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) उन्हें कैसे फरामोश कर देंगे। आक़ा भी उन्हें याद रखते हैं, उन्हें आक़ा की तरफ से सलाम आता है, मदीना बुलाए जाते हैं।

दोस्तो! ज़रा तसव्वुर करें कि कौन दावत दे रहा है? कौन बुला रहा है? हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम दावत दे रहे हैं, वह बुला रहे हैं, कहाँ बुला रहे हैं? अपने दरबार में मदीना बुला रहे हैं कि आओ मेरे मदीना में आओ। ज़रा सोचें तो सही कि आक़ा का बुलाना, प्यार से बुलाना कितने बड़े शर्फ और कितने बड़े ऐज़ाज़ की बात है।

तअल्लुक़ बनाने से बनता है

अगर हम में से किसी को चीफ मिनिस्टर साहब बुलाऐं, अपने घर आने की दावत दें तो वह कितना ख़ुश होगा। कोई पूछे न पूछे सब से कहता फिरेगा कि मुझे चीफ मिनिस्ट साहब ने अपने घर बुलाया है। और जाकर आने के बाद बड़े फख़्रिया अंदाज़ में लोगों को जतलाएगा कि मैं चीफ मिनिस्टर साहब के घर होकर आया हूँ, मेरे उनके साथ घरेलू तअल्लुक़ात हैं।

दोस्तो! अव्वल तो हर एक का चीफ मिनिस्टर के साथ तअल्लुक़ नहीं होता और जिसका होता भी है तो वह तअल्लुक़ यूँही नहीं बन जाता, उस तअल्लुक़ को बनाने और फिर उसे निबहने के लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। कभी उनके घर मिठाई का डब्बा पहुंचा दिया, किसी रोज़ घर में बहुत अच्छी बिरयानी बनी तो वह

पहुंचा दी, कभी ईदुल अज़हा के मौक़े पर गोश्त पहुंचा दिया, उनके घर किसी बच्चा की पैदाइश हुई या और कोई ख़ुशी का मौक़ा हुआ तो सोने का ज़ेवर पहुंचा दिया।

ग़र्ज़ यह कि पहले तो बड़ी कोशिशों के बाद उन के साथ तअल्लुक़ बनाया, फिर उस तअल्लुक़ को बाक़ी रखने और मज़ीद मज़बूत करने के लिए उनके घर हदिए और तोहफे भेजते रहे। हदिए और तोहफे भेजने का यह सिलसिला क्यों जारी रखा गया? इसी लिए तो कि चीफ मिनिस्टर साहब के साथ हमारे तअल्लुक़ात मज़बूत हों, वह हमें अपना समझने लगें और ज़रूरत के वक़्त हमारे काम आ सकें।

दुनियवी तअल्लुक़ात का महदूद नफा

दोस्तो! अगर हम ने कोशिशें के बाद चीफ मिनिस्टर साहब के साथ तअल्लुक़ बना भी लिया और वह तअल्लुक़ मज़बूत भी हो गया तब भी यह कोई ज़रूरी नहीं है कि चीफ मिनिस्टर साहब ज़रूरत के मौक़े पर हमारे काम आ ही जाऐं। इस लिए कि जब हमें ज़रूरत पड़ी और हम ने उन से राब्ता करना चाहा तो पता चला कि साहब का फोन बंद है। या फोन तो आन मिला लेकिन उनके पी ऐ (PA) ने फोन उठाया और कहा कि "साहब" उस वक़्त मीटिंग में मसरूफ हैं, आप किसी और वक़्त फोन कीजिए।

देखिए! चीफ मिनिस्टर साहब के साथ तअल्लुक़ है और वह तअल्लुक़ मज़बूत भी है और हम उस तअल्लुक़ को निबाहने की हर मुम्किन तदबीर भी करते रहते हैं, उसके बावजूद जब हमें उनकी ज़रूरत पड़ी और हम ने उन से राब्ता किया तो इख़्तियार और पावर के होते हुए भी वह हमारे काम न आ सके। बताइए! चीफ

मिनिस्टर के साथ बनाया गया तअल्लुक़ हमारे किस काम आया?

और बिलफ़र्ज़ उनके साथ गहरा तअल्लुक़ हो भी गया और ज़रूरत के वक़्त वह हमारे काम आने भी लगे तो आप मुझे बताइये कि आख़िर उस तअल्लुक़ से हम कितने दिनों तक नफ़ा उठा सकेंगे? जितने दिनों तक चीफ मिनिस्टर साहब की कुर्सी सलामत है इतने दिनों तक यह नफ़ा उठाया जा सकता है, उसके बाद फिर ख़त्म। इस लिए कि आज कल की सियासत से हम सभी वाक़िफ़ हैं, आज कुर्सी पर नज़र आने वाला कल नीचे नज़र आता है, कल बैठने वाला परसों नीचे नज़र आता है, जब तक ओहदा बाक़ी है, कुर्सी सलामत है, उस वक़्त तक पावर बाक़ी है, उस वक़्त तक लोग बड़ी इज़्ज़त करते हैं, बड़ी आओ भगत होती है, लेकिन जहाँ ओहदा ख़त्म हुआ कि सारा पावर ख़त्म हो जाता है, उसके बाद कोई पूछने को तैयार नहीं होता।

एक ओहदेदार के साथ तअल्लुक़ बनाने को जो कि बड़ी मुश्किलों से बनता है और बन जाने के बावजूद उस से उठाया जाने वाला नफ़ा मौहूम होता है और अगर नफ़ा होता भी है तो वह एक महदूद मुद्दत के लिए होता है, उसे बनाने और निबाहने के लिए तो हम बहुत कुछ करते हैं, लेकिन अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की ज़ात आली के साथ तअल्लुक़ बनाने की हम कोई फ़िक्र नहीं करते जिनके साथ बहुत आसानी के साथ तअल्लुक़ बन जाता है और फिर बड़ी आसानी के साथ उसे निभाया भी जा सकता है और उस तअल्लुक़ की बिना पर मिलने वाला नफ़ा भी ऐसा है जो सिर्फ दुनिया तक महदूद नहीं रहता, बल्कि दुनिया के अलावा आख़िरत में भी मिलता है।

याद रखें! उन के साथ तअल्लुक सिर्फ और सिर्फ इत्तिबाए सुन्नत की बुनियाद पर बनता है। फिर जूँ जूँ बंदा इत्तिबाए सुन्नत पर दवाम हासिल करता जाता है यह तअल्लुक़ मज़ीद मज़बूत और मुस्तहकम होता जाता है। और तअल्लुक़ भी कैसा? महबूबियत का तअल्लुक़, कुरबत का तअल्लुक़, विलायत और दोस्ती का तअल्लुक़।

हम भी अल्लाह के वली बनने का इरादा करें

दोस्तो! नुबुव्वत का दरवाज़ा बंद हो चुका, अब अगर कोई नबी बनना चाहे तो नहीं बन सकता। इसी तरह अगर कोई सहाबी बनना चाहे तो लाख मुजाहिदों और रियाज़तों के बावजूद उसे शर्फे सहाबियत नहीं मिल सकता। लेकिन अगर कोई वली बनना चाहे, अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का दोस्त बनना चाहे तो वह आज भी उनका दोस्त और वली बन सकता है। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने विलायत का दरवाज़ा बंद नहीं किया है, बल्कि वली और दोस्त बनने का बहुत ही आसान नुसख़ा बंदों को बताया है इस नुसख़े पर अमल कर के आज भी बहुत से लोग उनके वली बन रहे हैं और विलायत के सबब मिलने वाले मज़े लूट रहे हैं।

दोस्तो! जब लोग अल्लाह के वली बन सकते हैं और आज भी बहुत से बन रहे हैं तो क्या हम उनके वली और दोस्त नहीं बन सकते? क्या विलायत के सबब मिलने वाले मज़े हम नहीं लूट सकते? नहीं नहीं, ऐसा नहीं है। हम भी अल्लाह के वली और दोस्त बन सकते हैं, वली बनना कोई ऐसा काम नहीं है जो मुश्किल और कठिन हो, बल्कि बहुत ही आसान काम है और वह आसान काम इत्तिबाए सुन्नत है। हमें बस यही एक काम करना है और कुछ नहीं करना, जो कुछ मिलेगा बस उसी रास्ते से मिलेगा,

अल्लाह तक पहुंचने का और उनकी बारगाह में मक्बूलियत और महबूबियत पाने का कोई दूसरा रास्ता उसके अलावा है ही नहीं।

चंद अक्वाले ज़र्री

यह मैं अपने घर की बात नहीं कह रहा हूँ, बल्कि बुजुर्गों के अक्वाल और उनके मकतूबात इस मफ्हूम की बातों से भरे पड़े हैं। नमूना के तौर पर चंद इर्शादात पेश करता हूँ, मुलाहिज़ा फरमाऐं।

१. हज़रत इब्ने अता रहमतुल्लाह अलैह इर्शाद फरमाते हैं कि "जिस क्द्र रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इत्तिबा करोगे उसी क्द्र भलाई की तरफ चलोगे और उनकी इत्तिबा से जिस क्द्र दूरी होगी उतनी ही हलाकत होगी''

२. आप ही का एक इर्शाद है कि "आज अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के नज़दीक कुबूलियत के दरवाज़े बंद हैं, बजुज़ इत्तिबाए रसूल के कोई निजात नहीं पा सकता''।

३. हज़रत ख़्वाजा मासूम रहमतुल्लाह अलैह इर्शाद फरमाते हैं कि "हुसूले निजात और वसूले बरकात मुताबिअते नबी अलैहिस्सलाम के साथ वाबस्ता है। औलियाए किराम ने विलायत, मुहब्बत, मारफ्त और कुर्बे इलाही से जो कुछ भी हिस्सा पाया है वह बतुफेल हज़रत नबीए करीम अलैहिस्सलातु वस्सलाम पाया है। राहे वसूल, नबी अलैहिस्सलाम की इत्तिबा ही पर मौकूफ और मुनहसिर है''

४. हज़रत ख़्वाजा मासूम ही का एक मकतूब है जिस में आप तहरीर फरमाते हैं कि "जो शख़्स इत्तिबाए सुन्नत, अमल बिश्शरिअया और इजतिनाबे बिदअत में जितनी ज़्यादा कोशिश करने वाला होगा उतना ही ज़्यादा उसे नूरे बातिन हासिल होगा और उसी

क़द्र जल्ल मजदहू की राह उस पर मुनकशिफ होगी। बिलाशुबहा इत्तिबाए सुन्नत ही निजात देने वाली है।

५. हज़रत सय्यदना रिफाअी रहमतुल्लाह अलैह का इर्शाद है कि "दरवेश उसी वक़्त तक तरीक़त पर है जब तक वह सुन्नत पर जमा हुआ है। जिस वक़्त वह सुन्नत से हटेगा तरीक़त से अलग हो जाएगा''।

६. हजरत अक़दस मौलाना महमूदुल हसन गंगोही रह० एक आयते करीमा की तफ्सीर करते हुए इर्शाद फरमाते हैं कि "अल्लाह तआला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नमूना बनाकर भेजा है और यूँ फरमाया है कि अमल के लिए उन की ज़िंदगी को नमूना बनाओ। हमें वही ज़िंदगी मतलूब है जो ज़िंदगी हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की है। हमारी मरज़ी है कि सारे लोग उन्हीं के नक़्शेक़दम पर चलें और उन्ही के तरीक़े को अपनाऐं, पस जिस क़द्र लोग उनके तरीक़े पर चलेंगे उसी क़द्र वह हमारे महबूब बनते चले जाऐंगे''

यह बुज़ुर्गों के चंद अक़वाल थे जो मुश्ते नमूना अज़ ख़रवारे के तौर मैंने आप हज़रात के सामने नक़ल किए हैं। वरना तो सुन्नत की अहमियत से मुतअल्लिक़ हज़रात अकाबिर के ढेर सारे इर्शादात मुख़्तलिफ किताबों में मुनतशिर हैं। और सिर्फ इर्शादात ही नहीं बल्कि मुस्तक़िल मज़ामीन, मुस्तक़िल रिसाले और मुस्तक़िल तसानीफ हैं जो सुन्नत की अहमियत और उसकी इफादियत पर लिखी गई हैं।

अकाबिर के इन इर्शादात को नक़ल कर देने के बाद अब मैं नहीं समझता कि सुन्नत की अहमियत और उसकी इफादियत मज़ीद

बयान करने की ज़रूरत बाक़ी रह गई होगी। ताहम अपनी गुफ्तगू की मुनसिबत से उस वक़्त हज़रत मजद्दिदे अलिफे सानी रहमतुल्लाह अलैह का एक इर्शाद जो बड़ा ही अजीब बल्कि यूँ कह लीजिए कि इस पूरी गुफ्तगू का लुब्बे लुबाब है, यहाँ नक़ल करना मुनासिब समझता हूँ। मेरे ख़्याल में यह एक ऐसा क़ौल है कि अगर उसे दिल के कानों से सुना जाए तो शायद सुन्नत की अहमियत समझने और समझाने के लिए काफी और शाफी है। इस लिए कि जिस शख़्स का यह क़ौल है वह कोई मामूली आदमी नहीं, बल्कि एक ऐसा शख़्स है जिसे सिर्फ एक सदी का नहीं बल्कि पूरे हज़ारे का मुजद्दिद तस्लीम किया गया है। और सल्फ से लेकर ख़ल्फ तक सारे उलमा और अकाबिर जिनके इल्मी और रूहानी मुक़ाम के आगे सरे तस्लीम ख़म करते हैं और जिनके साथ फक़त निस्बत हो जाने को अपने हक़ में बहुत बड़ी सआदत समझते हैं। हज़रत का यह इर्शाद सुनें और दिल के कानों से सुनें।

हज़रत फरमाते हैं कि "अल्लाह तआला ने मुझे इल्मे ज़ाहिरी से सरफराज़ फरमाया। मैंने तफ्सीर पढ़ी, हदीस पढ़ी, फिक़्ह पढ़ा, यह तमाम उलूमे ज़हिरा अल्लाह तआला ने मुझे अता फरमाए और उन पर मुझे कमाल बख़्शा। फिर मुझे सूफियाए किराम का ख़्याल हुआ कि देखें सूफियाए किराम क्या कहते हैं।

चुनान्चे में उनकी तरफ मुतवज्जह हुआ और उनके उलूम हासिल किए। सूफियाए किराम के सलासिले अरबा जो सहरवरदिया, क़ादिरिया, चिश्तिया और नक़्शबंदीया के नाम से मौसूम हैं, मुझे उनके बारे में जुस्तजू पैदा हुई कि कौनसा सिलसिला क्या तरीक़ए तालीम करता है? फिर मैंने चारों सिलसिलों में जितने आमाल,

अज़कार, अशग़ाल और मोराक़बात होते हैं वह सब अंजाम दिए। उसके बाद अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने मुझे ऐसा मुक़ाम बख़्शा कि खुद सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे अपने दस्ते मुबारक से खुलअत पहनाया। फिर अल्लाह तआला ने मुझे इतना ऊँचा मुक़ाम अता फरमाया कि मैं असल को पहुंचा। फिर असल से ज़िल को पहुंचा। हत्ताकि मैं ऐसे मुक़ाम पर पहुंचा कि अगर इस ज़बान से ज़ाहिर करूँ तो उलमाए ज़ाहिर मुझ पर कुफ्र का फतवा लगा देंगे और उलमाए बातिन मुझ पर ज़ंदीक़ियत का फतवा लगा देंगे। लेकिन मैं क्या करूँ कि अल्लाह तआला ने मुझ को अपने फज़्ल से यह सारे मुक़ामात अता फरमाए। यह सारे मुक़ामात हासिल करने के बाद अब मैं एक दुआ करता हूँ और जो शख़्स इस दुआ पर आमीन कहेगा इंशा अल्लाह उसकी भी मग़्फिरत हो जाएगी। वह दुआ यह है कि:

या अल्लाह! मुझे नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इत्तिबा की तौफीक़ अता फरमा। (आमीन)

या अल्लाह! मुझे नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत पर ज़िन्दा रख। (आमीन)

या अल्लाह! मुझे नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत पर मौत अता फरमा। (आमीन)

देखिए! इतने सारे मुक़ामात तैय करने के बावजूद क्या दुआ मांग रहे हैं? क्या तमन्ना कर रहे हैं? इत्तिबए सुन्नत की तौफीक़ माँग रहे हैं, इत्तिबाए सुन्नत की तमन्ना कर रहे हैं। उसी सुन्नत की इत्तिाबा की तौफीक़ मांग रहे हैं जिसे हम लोग याद आजाने के बावजूद "सुन्नत ही तो है" कह कर नज़र अंदाज़ कर देते हैं।

इस लिए कि वह जानते हैं कि हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम की मुहब्बत, अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की महबूबियत और उनकी बारगाह में मक़बूलियत बस इत्तिबाए सुन्नत के रास्ते से मिलेगी। महबूबियत और मक़बूलियत के पाने का कोई दूसरा रास्ता उसके अलावा है ही नहीं।

मैं वह दर्द कहाँ से लाऊँ

मेरे दोस्तो! आप गरचे मेरी बात न सुनें, मुझे कोई परवाह नहीं, मेरी बात न मानें मुझे कोई ग़म नहीं, लेकिन उन हज़रात की बात तो मान लें, उनकी बात सुन कर तो अमल का इरादा कर लें, अब तो अपनी ज़िंदगियों को सुन्नतों से आरास्ता करने की फ़िक्र करें। अगर उन मक़बूल बंदगाने ख़ुदा के इर्शादात सुनने के बावजूद हम ने सुन्नत की अहमियत को न समझा और हमारे दिल में सुन्नत पर अमल का जज़्बा और दाअिया पैदा न हुआ और हम ने अपने अंदर उसकी सच्ची फ़िक्र पैदा न की तो शायद हम से बड़ा बद नसीब और महरूम कोई नहीं होगा।

दोस्तो! मैं कैसे कहूँ, कैसे समझाऊँ। काश! मुझे समझाने का ढंग आता, काश! मेरे पास वह दर्द होता कि जिस दर्द के साथ निकली हुई बात असर किए बिग़ैर नहीं रहती। और फिर आप हज़रात को क्या समझाऊँ, पहले तो शकील ख़ुद समझे और उसे इत्तिबाए सुन्नत की तौफ़ीक़ हो जाए और ज़िंदगी के जितने साल उस ने सुन्नत की इत्तिबा के बिग़ैर गुज़ार दिए उस पर सच्चे दिल से नादिम और शर्मिन्दा हो और सिद्क़ दिल से तौबा इस्तिग़फ़ार करे कि आक़ा को भूल कर ज़िंदगी गुज़ारने की वजह से उस ने अपना कितना बड़ा नुक़सान कर लिया। ख़ैर, अब जो हुआ सो

हुआ, अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त मेरे इस कुसूर को माफ फरमाऐं और आइन्दा मुझे इस की तौफीक़ दें कि मैं आक़ा को याद रखा करूँ, अब उन्हें फरामोश करके ज़िंदगी न गुज़ारूँ।

काश! हम सुन्नतों की हक़ीक़त समझ पाते

दोस्तो! हम ने सुन्नतों की हक़ीक़त को जाना नहीं, यह सुन्नतें दर हक़ीक़त बंदों पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की बहुत बड़ी मेहरबानियाँ ही नहीं, बल्कि बंदों से उनके प्यार की अलामत और उसका मज़हर हैं। आप कहेंगे वह कैसे? तो सुनिए और ज़रा तवज्जुह से सुनिए।

अगर यह सुन्नतें न होतीं और नेकियों के हासिल करने को सिर्फ फराइज़ और वाजिबात की हद तक महदूद कर दिया जाता तो फिर बंदों को नेकियों के हासिल के लिए बड़ा इंतिज़ार करना पड़ता। रोज़ा के लिए साल फिर इंतिज़ार करें, हज के लिए साल भर इंतिज़ार करें, ज़कात के लिए साल भर इंतिज़ार करें, कुरबानी के लिए साल भर इंतिज़ार करें वग़ैरह वग़ैरह। बस एक नमाज़ रह जाती है, वह भी दिन भर में सिर्फ पाँच मर्तबा। फज्र का वक़्त गया तो अब नेकियाँ हासिल करने के लिए ज़ोहर की नमाज़ का इंतिज़ार करें, ज़ोहर में नेकियाँ हासिल कर लें तो अब अस्र की नमाज़. का इंतिज़ार करें, अस्र में नेकियाँ हासिल कर ली तो अब मग़्रिब की नमाज़ का इंतिज़ार करें, फिर इशा की नमाज़ का इंतिज़ार करें।

ग़र्ज़ यह कि नेकियाँ हासिल करने के लिए हमें बड़ा इंतिज़ार करना पड़ता और इंतिज़ार के बाद अगर वक़्त मिलता भी तो बहुत महदूद सा वक़्त मयस्सर आता। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मुहब्बत ने यह गवारा न किया कि मेरे बंदों को माल कमाने के लिए तो

बहुत सा वक़्त मिले लेकिन नेकियाँ हासिल करने के लिए बस मादूदे आमाल और महदूद सा वक़्त मिले, अगर ऐसा होता तो फिर हमारे लिए बड़ी मुश्किल होती। आख़िर उस सूरत में हम नेकियों की ज़ख़ीरा अंदोज़ी कैसे कर सकते थे?

लेकिन चूँकि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने बंदों पर निहायत मेहरबान हैं, उन से बेइन्तिहा प्यार और मुहब्बत करते हैं और फिर बंदों के मिज़ाज से वाक़िफ भी हैं कि वह कमाई की हिर्स के साथ साथ उसके लिए ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त के तालिब भी होते हैं, इस लिए अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने उनके लिए नेकियों के हासिल करने का एक ऐसा निज़ाम बनाया जिसके ज़रिए उन्हें नेकियाँ हासिल करने के लिए इंतिज़ार न करना पड़े, बल्कि नेकियाँ हासिल करने का रास्ता उनके लिए हमा वक़्त खुला रहे।

नेकियाँ हासिल करने का खुला बाज़ार

दोस्तो! यह ज़िंदगी सुन्नतों के ज़रिए नेकियाँ हासिल करने का एक ऐसा बाज़ार है जो हमा वक़्त खुला रहता है, कभी बंद नहीं होता। सुन्नतों के ज़रिए जितनी चाहे नेकियाँ हासिल कर लें कोई रोक टोक नहीं। किसी चोर उचक्के का अंदेशा और न ही किसी डाकू के डाका डालने का ख़ौफ। माल अगर ज़्यादा कमा लिया जाए तो दिल में खटका लगा रहता है कि कहीं चोर न आ जाऐं, कहीं डाकू डाका न डाल दें। अगर चोरों और डाकूओं से माल महफ़ूज़ भी रह गया तो इनकम टेक्स (income tax) वालों की गिरिफ्त से बचने की फ़िक्र खाई जाती है।

लेकिन नेकियों के साथ यह मामला नहीं है। अगर किसी ने ढेर सारी नेकियाँ हासिल कर ली और मुसलसल हासिल किए जा

रहा है तब भी कोई फ़िक्र की बात नहीं है। यह एक ऐसी करन्सी है जो बज़ाहिर नज़र नहीं आती और बहुत ज़्यादा मिक्दार में होने के बावजूद पूरी तरह महफ़ूज़ होती है। उस करन्सी का इनकम टेक्स वालों को हिसाब देना है और न ही कोई ज़ाहिरी दुश्मन ऐसा है जो उसे लूट सकता है, बल्कि जब तक बंदा मआसी के ज़रिये अज़ खुद उन नेकियों को ज़ाया और बरबाद न कर दे उस वक़्त तक यह सारी की सारी नेकियाँ महफ़ूज़ रहती हैं।

अब यह बात कि यह बाज़ार हमा वक़्त खुला रहता है, और उस में जितनी चाहे नेकियाँ कमा लें, कोई रोक टोक नहीं है। वह किस तरह? तो उसे भी सुनते चलें। देखिए! हम लोग हर वक़्त किसी न किसी अमल में मशगूल होते हैं। कभी खा रहे हैं, कभी पी रहे हैं, कभी वुज़ू कर रहे हैं, कभी गुस्ल कर रहे हैं, कभी कपड़ा पहन रहे हैं, कभी घर से निकल रहे हैं, कभी मस्जिद में दाख़िल हो रहे हैं, कभी मस्जिद से निकल रहे हैं, कभी कोई चीज़ फरोख़्त कर रहे हैं, कभी कोई चीज़ ख़रीद रहे हैं वग़ैरह वग़ैरह। अगर नेकियाँ हासिल करने के ज़राए को इबादात की क़बील से अंजाम दिए जाने वाले चंद आमाल मसलन नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात, कुरबानी वग़ैरह में मुनहसिर कर दिया जाता है तो फिर हमारे यह आम मामूलात में नेकियाँ हासिल करने का कोई मौक़ा मयस्सर न आता।

अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मुहब्बत और उनकी शानें रहीमी ने यह पसंद न किया कि उनके बंदों को नेकियाँ हासिल करने के लिए महदूद मवाक़े दिए जाऐं, जबकि नेकियाँ इतनी क़ीमती और उनके हक़ में इस क़दर नाफे और कार आमद हैं कि उनके ज़रिए

न सिर्फ उनकी दुनियवी ज़िंदगी संवरेगी, बल्कि उनकी क़ब्र, उनका हश्र, उनकी आख़िरत के सारे मराहिल और उनकी जन्नत सभी कुछ संवर जाएगी। तो जब यह नेकियाँ उनके हक़ में इतनी नाफे और कार आमद हैं तो फिर क्यों न मैं उनके लिए नेकियों के हासिल करने के ज़्यादा से ज़्यादा मवाक़े फराहम करूँ और कुछ ऐसा नज़्म करूँ कि यह अपने तमाम मामूलात में कोई नेकियाँ हासिल कर सकें। पस अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने अपने बंदों से मुहब्बत की ख़ातिर उन्हें सुन्नतों के ज़रिए नेकियों के हासिल करने का एक ऐसा निज़ाम अता फरमाया कि वह अपने आम मामूलात में भी नेकियाँ हासिल कर सकें। इसी ग़र्ज़ से उन्हें हज़रत नबीए पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उसवा और उनके तरीक़े की पैरवी का हुक्म दिया गया कि अपनी ज़िंदगी के तमाम शोबों में और अपने रोज़मर्रा के तमाम आमाल में मेरे महबूब के तरीक़े की इत्तिबा किया करो। खाओ तो मेरे महबूब के तरीक़े के मुताबिक़, पीयो तो मेरे महबूब के तरीक़े के मुताबिक़, कपड़ा पहनो तो मेरे महबूब के तरीक़े के तुमाबिक़, उतारो तो मेरे महबूब के तरीक़े के मुताबिक़, गुस्ल करो तो मेरे महबूब के तरीक़े के मुताबिक़, लेन देन करो तो मेरे महबूब के तरीक़े के मुताबिक़। जब तुम अपने हर अमल में उनकी इत्तिबा करोगे तो तुम्हारी ज़िंदगी का कोई पल और कोई लम्हा नेकी से ख़ाली न रहेगा।

सुन्नतों के ज़रिए लेता जा

मियाँ! खाना पीना, पहनना उतारना, वुज़ू करना, गुस्ल करना, घर में आना, घर से निकलना, मस्जिद में आना, मस्जिद से निकलना, बेचना, ख़रीदना वग़ैरह, यह सारे आमाल तो वह थे

जिन्हें हम बेदारी के आलम में अंजाम देते हैं। कुरबान जाईए अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की मुहब्बत पर कि उन्होंने यह भी गवारा न किया कि मेरे बंदे सिर्फ बेदारी के आलम में नेकी हासिल कर सकें और उनके सोने की हालत नेकी से ख़ाली रहे। हालाँकि माल कमाने के लिए ज़रूरी है कि बंदा जाग रहा हो, उसकी दूकान खुली हुई हो, ऑफिस खुली हुई हो, कारोबार चल रहा हो तभी माल कमाया जा सकता है, लेकिन नेकी हसिल करने के सिलसिले में अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने उस ज़ाब्ते को ज़रूरी क़रार नहीं दिया, बल्कि ऐसा इंतिज़ाम किया कि बंदे सोने की हालत में भी नेकियाँ हासिल कर सकें।

अल्लाह पाक! क्या हम सोने की हालत में भी नेकियाँ हासिल कर सकते हैं?

हाँ मेरे बंदो! तुम सोने की हालत में भी नेकियाँ हासिल कर सकते हो।

अल्लाह पाक! वह कैसे?

मेरे बंदो! बस तुम्हें यह करना है कि सोने से पहले मेरा महबूब जिन आमल को किया करता था तुम भी सोने से क़ब्ल मेरे महबूब की इत्तिबा की निय्यत से उन आमाल को कर लिया करो और फिर यह निय्यत करके सो जाओ कि हम इस लिए सोते हैं कि यह हमारे परवरदिगार का हुक्म है, हमारे नफ्स का हक़ है और हमारे आक़ा जनाब मुहम्मदुर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत है। जब तुम मेरे महबूब के आमाल की इत्तिबा करके इन निय्यतों के साथ सोओगे तो मैं तुम्हारा सोना भी इबादत में शुमार करूंगा और तुम्हें इस पर भी अज्र व सवाब अता करूंगा।

और उस इत्तिबा का सिला सिर्फ यह नहीं दूंगा कि अज्र से नवाज़ूंगा, बल्कि मज़ीद फज़ल यह करूंगा कि अगर सोने की हालत में तुम्हारा इंतिक़ाल हो गया तो तुम्हें शहादत का दर्जा भी नसीब करूंगा।

दोस्तो! यह है अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का प्यार, उनकी मुहब्बत, उनका फज़ल और उनकी मेहरबानी। अल्लाह के बंदो! अल्लाह की तरफ बढ़ो तो सही, उन से माँगो तो सही, उनके ख़ज़ाने में कोई कमी नहीं है, वह ऐसा लामहदूद ख़ज़ानों का मालिक हैं कि हम लेते लेते थक जाऐंगे, लेकिन वह देते देते नहीं थकेंगे।

तू वह दाता है कि देने के लिए
दर तेरी रहमत के हर दम हैं खुले

बेग़र्ज़ मुहब्बत करने वाले

बुज़ुर्गो और दोस्तो! आमाले मसनूना अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का प्यार तो है ही, साथ ही हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम के अपने उम्मतियों के साथ हमदर्दाना तअल्लुक़ और आपकी बेग़र्ज़ और बेलौस मुहब्बत की अलामत भी हैं। दुनिया में कोई किसी के साथ बेग़र्ज़ मुहब्बत नहीं करता। दोस्त की मुहब्बत ग़र्ज़ पर मबनी होती है, पड़ोसी की मुहब्बत ग़र्ज़ पर मबनी होती है, रिश्तेदार की मुहब्बत ग़र्ज़ पर मबनी होती है, भाई बहन की मुहब्बत ग़र्ज़ पर मबनी होती है, मियाँ बीवी की मुहब्बत ग़र्ज़ पर मबनी होती है, हत्ताकि माँ बाप भी अपनी औलाद से बिग़ैर किसी ग़र्ज़ के मुहब्बत नहीं करते, उनकी मुहब्बत भी किसी ग़र्ज़ पर मबनी होती है।

अगर किसी की मुहब्बत ऐसी है जो अग़राज़ व मफादात से पाक है तो वह सिर्फ और सिर्फ अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त और उनके महबूब जनाब नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत है, बस यही दो ज़ात ऐसी हैं जो हम से किसी ग़र्ज़ की बुनियाद पर मुहब्बत नहीं रखतीं। उनकी मुहब्बत में उनकी अपनी ग़र्ज़ और अपने मफाद का कोई उनसुर नहीं होता। वह सिर्फ और सिर्फ हमारे नफा की ख़ातिर हम से मुहब्बत करते हैं।

उम्मतियों के साथ बेग़र्ज़ मुहब्बत की चंद छलकियाँ

अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने बंदों से कितना प्यार करते हैं, उसका कुछ तज़किरा तो मैंने अभी आप हज़रात के सामने किया। अब हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम के अपने उम्मतियों के साथ उलफत व मुहब्बत के चंद नमूने भी सुनते चलें कि आक़ा ने हमारे साथ कितनी मुहब्बत फरमाई, हमारे राहत का कितना ख़्याल रखा, हमें नुक़सान से बचाने की कैसी कैसी तदबीरें बतलाईं और हमारे नफे की ख़ातिर न जाने कितनी ऐसी बातें हमें बतलाईं जो बज़ाहिर देखने में बहुत छोटी मालूम होती हैं, लेकिन नतीजे के ऐतेबार से बहुत ही नाफे और कार आमद हैं। ज़िंदगी का कोई गोशा, कोई मामला और कोई हाल ऐसा नहीं छोड़ा जिस के मुतअल्लिक आप ने अपने उम्मतियों की रहबरी न फरमाई हो। आप की हमदर्दी और रहबरी के चंद नमूने मुलाहेज़ा करते चलें।

१. हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम रात में सोने से क़ब्ल कपड़े तबदील कर लिया करते थे, यह आप का आम मामूल था। लेकिन कभी कभी उसके बरख़िलाफ उसी कपड़े में भी सो जाया करते थे, रिवायात में उसका सबूत भी मिलता है।

अब कहने को तो यह एक आम सी बात है, लेकिन अगर ग़ौर करें तो आप का अपने मामूल के बरख़िलाफ अमल करना, दर हक़ीक़त अपनी उम्मत के साथ मुहब्बत और शफक़त की बिना पर था। इस लिए कि उम्मत में हर तरह के लोग होंगे। कुछ ऐसे होंगे जिनके पास कई जोड़े होंगे, वह तो आप के आम मामूल की इत्तिबा करके नेकियाँ हासिल कर लेंगे, लेकिन कुछ ऐसे भी होंगे जिनके पास फक़त दो जोड़े होंगे, एक को पहनेंगे और दूसरा धुलने के लिए रखा होगा। ऐसी हालत में आप के यह उम्मती किस तरह कपड़ा तबदील कर सकेंगे? क्या इन्हें इस सुन्नत पर अमल का मौक़ा नहीं मिलेगा? और क्या वह इस अमल में आप की इत्तिबा से महरूम रहने की बिना पर नेकियों से महरूम रह जाऐंगे?

आप सोचते होंगे कि क्या ऐसे भी लोग हैं जिनके पास सिर्फ दो जोड़े होते हैं? हाँ दोस्तो! ऐसे भी लोग हैं। जब ढूढेंगे और मालूम करेंगे तो ऐसे बहुत से लोग मिलेंगे, लेकिन हमें ऐसे लोगों की तलाश की, उन से रब्त बढ़ाने की और उनके अहवाल मालूम करने की फुरसत कहाँ है? मेरा ऐसे लोगों से तअल्लुक़ है और मैं ऐसे लोगों को जानता हूँ जिनके पास सिर्फ दो जोड़े कपड़े रहते हैं और बाज़ों के पास तो सिर्फ एक जोड़ा कपड़ा और एक लुंगी होती है। दिन में उस जोड़े को पहने रहते हैं और रात के वक़्त लुंगी पहन कर उस जोड़े को धोकर सुखा लेते हैं, अगली सुबह फिर उसी को पहेन लेते हैं।

दोस्तो! हमें उनके बारे में इल्म हो या न हो और हमें उनका ख़्याल हो कि न हो, लेकिन चौदह सौ बरस पहले आक़ा ने ऐसे उम्मतियों के बारे में सोचा था और क़यामत तक आने वाले अपने

तमाम उम्मतियों की और हर हर तबक़े से तअल्लुक़ रखने वाले उम्मतियों की फ़िक्र की थी। अगर आप का उम्मती ख़ुश हाल हो और उस के पास ज़ायद कपड़े मौजूद हों तो वह रोज़ाना सोने से क़ब्ल अपने कपड़े तबदील कर ले और आप के आम मामूल की इत्तिबा की निय्यत कर ले तो उसे उस पर अज्र व सवाब मिलेगा, लेकिन आप का वह उम्मती जो बेचारा तंग दस्त और नादार है और उसके पास सिर्फ एक जोड़ा है तो क्या वह उस अमल में आप की इत्तिबा से और उस पर मिलने वाले अज्र व सवाब से महरूम रह जाए? नहीं नहीं, ऐसा नहीं है। उसे उस हाल में भी मायूस होने की ज़रूरत नहीं है, आप ने ऐसे हाल वालों के लिए भी अमल की राह खुली रखी है। अगर उसके पास सिर्फ एक जोड़ा है तो वह अपने उसी कपड़े में सो जाए और आप की उस अदा की नक़ल कर ले जो आप कभी कभी किया करते थे तो उसे भी सुन्नत की अदाएगी का सवाब मिल जाएगा और उसकी नेकियों का नुक़सान न होगा। बताइए! क्या हम इस सुन्नत को छोड़ देंगे? अगर छोड़ेंगे तो फिर किस का नुक़सान होगा?

२. इसी तरह आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम का एक मामूल यह था कि जब आप सोने के लिए अपने बिस्तर मुबारक पर तशरीफ लाते तो लेटने से क़ब्ल उसे तीन मर्तबा झाड़ लेते थे। यह सिर्फ आप का एक अमल नहीं था कि आप ऐसा किया करते थे, बल्कि उस अमल के ज़रिए आप ने अपने उम्मतियो को यह हिदायत दी है कि जब तुम सोने के लिए अपने बिस्तर पर जाओ तो उसे तीन मर्तबा झाड़ लिया करो।

अब बताइए! बिस्तर हमारा है, हमारे ही कमरे में बिछा हुआ

है, हमारे घर से निकलने के बाद रोज़ाना कमरे की सफाई की जाती है, बिस्तर झाड़ा जाता है, खिड़कियाँ बंद कर दी जाती हैं। और अगर खिड़कियाँ खुली भी रह जाएं तो उन खिड़कियों से ऐसी कौन सी मूज़ी चीज़ हमारे कमरे में और हमारे बिस्तर पर आ सकती है जिस की वजह से आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम हमें बिस्तर झाड़ने की हिदायत दे रहे हैं? क्या कोई साँप या बिच्छू कमरे में आ जाएगा? नहीं, ज़्यादा से ज़्यादा यही तो होगा कि कोई कीड़ा या चियुंटी बिस्तर पर आ जाएगी और अगर हम ने बिस्तर न झाड़ा तो सोने की हालत में वह कीड़ा या वह चियुंटी हमें काट लेगी।

दोस्तो! आक़ा की मुहब्बत और उनकी हमदर्दी देखिए कि आप को यह भी गवारा नहीं है कि हमें कोई कीड़ा या चियुंटी काट ले। हालाँकि उस कीड़े या चियुंटी का आना यक़ीनी नहीं है, सिर्फ इम्कान है। उसी इम्कान की बिना पर आप हमें यह हिदायत दे रहे हैं कि सोने से क़ब्ल अपने बिस्तर को झाड़ लिया करो, ताकि कोई कीड़ा या चियुंटी तुम्हें नुक़सान न पहुंचा सके। बताइए! क्या हम उस सुन्नत को भी छोड़ देंगे? अगर छोड़ देंगे तो फिर किसे नुक़सान पहुंचेगा?

३. इसी तरह आप का एक मामूल यह था कि जब आप जूता पहनते तो पहनने से क़ब्ल उसे झटक लिया करते थे। उस मामूल में भी यही मसलहत कारफरमा है कि कहीं ऐसा न हो कि कोई कीड़ा या चियुंटी जूते के अंदर जा चुकी हो जिस का हमें पता न हो और पहेनने के बाद वह हमें काट ले। लिहाज़ा आप ने अपने मामूल के ज़रिए यहाँ भी हमारी हिफाज़त की तदबीर बतला दी, क्या हम उस अमल को भी सुन्नत समझ कर छोड़ देंगे?

४. इसी तरह आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपने उम्मतियों को यह हिदायत दी कि खाने की इबतिदा में 'बिस्मिल्लह' कह लिया करो। जब अल्लाह का नाम लेकर खाओगे तो फिर उस खाने में शैतान शरीक न हो सकेगा।

इसी तरह एक हिदायत यह दी कि घर का दरवाज़ा 'बिस्मिल्लाह' कह कर बंद किया करो। जब बिस्मिल्लाह कह कर दरवाज़ा बंद करोगे तो फिर शैतान तुम्हारे घर में दाख़िल नहीं हो पाएगा।

इसी तरह एक हिदायत यह दी कि जब कपड़ा उतार कर कहीं टाँगो तो बिस्मिल्लाह कह कर टाँगा करो, उसका फायदा यह होगा कि शैतान तुम्हारे कपड़ों को इस्तिमाल न कर सकेगा।

दोस्तो! ज़रा ग़ौर करें कि आख़िर हमें यह हिदायात क्यों दी गईं? उन हिदायात का मक़सद क्या है? यह हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम की मुहब्बत और आप की हमदर्दी नहीं तो और क्या है कि आप ने सिर्फ ज़ाहिरी नुक़सानदेह चीज़ों से हमारी हिफाज़त का इंतिज़ाम किया, बल्कि नज़र न आने वाले दुश्मन यानी शैतान से भी हमारी हिफाज़त का इंतिज़ाम फरमाया। शैतान हमें नज़र नहीं आता और न उसकी जानिब से पहुंचने वाला नुक़सान हमें दिखाई देता है, उसके बावजूद आप ने हमें वह तरीक़े और वह तदाबीर बतालाईं जिन्हें इख़्तियार करके हम हर तरह के नुक़सान से महफ़ूज़ रह सकते हैं। नज़र आने वाले नुक़सान से भी और नज़र न आने वाले नुक़सान से भी। अब अगर कोई कहे कि यह आमाल सुन्नत ही तो हैं, फर्ज़ या वाजिब तो है नहीं कि उन पर अमल करना ज़रूरी हो, तो फिर आप बताऐं उसे नुक़सान पहुंचेगा

या नहीं पहुंचेगा? अगर किसी को यह नुक़सान गवारा हो तो फिर वह सुन्नात को छोड़े।

५. इसी तरह पानी पीने से मुतअल्लिक़ आप का यह मामूल था कि आप पानी पीने से पहले उसे देख लिया करते थे। उस मामूल के ज़रिए भी आप ने अपने उम्मतियों को यह हिदायत दी है कि पानी पीने से पहले उसे देख लिया करो। कहीं ऐसा न हो कि उस बरतन में कुछ धूल मौजूद हो या मिट्टी के कुछ ज़र्रात हों और बिग़ैर देखे पीने की सूरत में पानी के साथ साथ वह ज़र्रात भी पेट में चले जाऐं, या पानी में कोई कीड़ा या चियुंटी मौजूद हो और बिग़ैर देखे पीने की सूरत में वह पानी के ज़रिऐ पेट में चली जाए और तकलीफ का बाइस बने।

दोस्तो! यह सारी हिफाज़ती तदाबीर सिर्फ अपनी ज़ात की हिफाज़त के लिए नहीं थीं, बल्कि उम्मतियों की हिफाज़त और उनकी राहत की ख़ातिर इख़्तियार की गई थीं। क्या हम उस अमल को भी 'सुन्नत ही तो है' कह कर छोड़ देंगे? अगर हाँ, तो फिर छोड़ दीजिए और उसके नताइज भुगतने के लिए तैयार रहें।

६. इसी तरह पानी पीने से मुतअल्लिक़ आप का एक मामूल यह भी था कि आप पानी जल्दी जल्दी न पीते थे, बल्कि बैठ कर इतमिनान के साथ तीन साँस में पीया करते थे। इस मामूल के ज़रिये उम्मतियों को यह हिदायत देनी मक़सूद थी कि जब कभी पानी पीना हो तो एक साँस में ग़ट ग़ट करते हुए न पीओ। इस तरह पीने की सूरत में ठसका लग सकता है और मैं नहीं चाहता कि मेरे किसी उम्मती को पानी पीते वक़्त ठसका लग जाए, लिहाज़ा आप ने पानी पीने से मुतअल्लिक़ अपना मामूल यही रखा कि आप

बैठ कर इतमिनान के साथ तीन साँस में पानी पीया करते थे और चाहत यह थी कि जब मेरा उम्मती पानी पीते वक़्त मेरे उस मामूल की इत्तिबा करेगा तो वह नुक़सान से तो महफ़ूज़ रहेगा ही, साथ ही मेरी इत्तिबा के सबब उसे उस अमल पर नेकियाँ भी मिलेंगी। देखिए! यह है सुन्नत और उसकी इत्तिबा के फ़वाइद कि नुक़सान से भी हिफ़ाज़त हो और मुफ़्त की नेकियाँ भी मिलें। क्या हम उसे भी "सुन्नत ही तो है'' कह कर छोड़ देंगे? और मियाँ छोड़ ही दिया है, कहने की क्या ज़रूरत है।

७. इसी तरह आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम का एक मामूल यह था कि आप पानी पीते वक़्त कभी बरतन में साँस नहीं लेते थे। उस मामूल में भी उम्मतियों की हिफ़ाज़त और उनकी राहत का ख़्याल ही कारफ़रमा है। इस लिए कि नाक के ज़रिए जो हवा अंदर से बाहर की तरफ़ आती है उस में मूज़ी जरासीम होते हैं जिनका बाहर निकलना ज़रूरी होता है। अब अगर बरतन ही में साँस ली जाए तो वह जरासीम उस पानी के साथ मिल कर दोबारा पेट में चले जाऐंगे और नुक़सान का बाइस बनेंगे। लिहाज़ा आप ने अपने अमल के ज़रिया उम्मतियों को यह हिदायत दी कि पानी तीन साँस में तो पीयो लेकिन साँस बरतन के अंदर न लो बल्कि साँस लेते वक़्त बरतन को मुंह से अलाहिदा कर लो। इस मामूल पर अमल करने में भी हमारा दोहरा नफ़ा है, जिस्मानी हिफ़ाज़त भी और मुफ़्त का अज्र भी। क्या हम उस अमल को भी सुन्नत होने की वजह से छोड़ देंगे? तो फिर छोड़िए और जिस्मानी अमराज़ को दावत दीजिए।

८. इसी तरह आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपने उम्मतियों

को एक हिदायत यह दी कि जब कभी कपड़ा फट जाए तो उसे पहने हुए न सिलो, बल्कि उतार कर सिलो। कहीं ऐसा न हो कि पहने हुए सिलने में सुई तुम्हारे बदन में चुभे और तुम्हें तकलीफ हो।

देखिए! उम्मती के बदन में सूई न चुभ जाए इस लिए आक़ा कपड़ा सिलने से मुतअल्लिक़ भी हिदायत दे रहे हैं। उन्हें तो हमेशा हमारा ख़्याल रहा और हमें किसी मौक़े पर उनका ख़्याल नहीं आता, अगर कभी आता भी है और किसी मौक़े पर अल्लाह पाक कोई मसनून अमल याद दिलाते भी है तो हम उसे "सुन्नत ही तो है" कह कर नज़र अंदाज़ कर जाते हैं। आक़ा को तो हम से मुहब्बत थी इस लिए आप ने हर हर मौक़े पर और हर हर अमल में हमारी रहनुमाई की और हमें नुक़सान से बचाने की हर मुम्किन तदबीर बतलाई, लेकिन हमें उन से कितनी मुहब्बत है, यह हमारी ज़बान नहीं, बल्कि हमारा अमल बतलाएगा, बताईए! क्या हम इस अमल को भी सुन्नत समझ कर छोड़ देंगे?

९. आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की हिदायत यह भी है कि किसी ऐसी छत पर न साओ जिस पर मुंडेर न हो। मुम्किन है नींद की ग़फ़लत में उठो और गिर जाओ। बताऐं दोस्तो हमारे गिरने से किसे तकलीफ होगी? हमें तो होगी लेकिन हमारी तकलीफ से उन्हें तकलीफ होती है और वह बेचैन हो जाती है। लिहाज़ा आप ने हमें इस तकलीफ से बचाने के लिए चौदह सौ बरस पहले यह हिदायत दी थी कि बिग़ैर मुंडेर वाली छत पर न सोना, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें तकलीफ पहुंच जाए। क्या अहले दानिश उसे भी "सुन्नत ही तो है" कह कर छोड़ देंगे?

१०. आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने एक हिदायत यह भी दी कि जब रात को सोने लगो तो सोने से क़ब्ल अपने घर का चिराग़ बुझा दिया करो। ज़रा सोचें! कि हमें यह हिदायत क्यों दी गई? उस का मक़सद क्या था? उसका मक़सद सिर्फ और सिर्फ हमारी हिफाज़त और हमें नुक़सान से बचाना था। इस लिए कि अगर चिराग़ न बुझाया गया और उसी हालत में हम सो गए तो इस बात का इमकान है कि चिराग़ की लौ किसी कपड़े में या बिस्तर में लगे और किसी बड़ी तबाही का ज़रिया बन जाए। जिस ज़ात को यह गवारा न था कि उसके किसी उम्मती को चियुंटी काट ले, वह मुशफ़िक़ ज़ात भला यह कब गवारा कर सकती थी कि उसके किसी उम्मती के घर में आग लग जाए। क्या अब भी हमें हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की हमदर्दीयाँ समझ में नहीं आऐंगी? क्या हम अब भी उनके आमाल को "सुन्नत ही तो है" कह कर छोड़ते रहेंगे।

११. आप की हिदायात में एक हिदायत यह भी है कि सोने से क़ब्ल अपने बरतनों को ढाँक दो। और अगर बरतन ख़ाली हों तो उन्हें पलट कर रख दो। आप जानते हैं कि यह हिदायत क्यों दी गई? यह हिदायत इस लिए दी गई कि साल भर में एक रात ऐसी आती है जिस में एक ऐसी हवा चलती है कि अगर वह हवा किसी खुली बरतन में दाख़िल हो जाए और वह बरतन बिग़ैर धुले इस्तिमाल किया जाए तो एक ऐसी बीमारी लाहिक़ होती है जो लाइलाज होती है। बताइए! क्या हम इस अमल को भी "सुन्नत ही तो है" कह कर छोड़ने की जुरअत करेंगे? अगर जवाब "हाँ" में है तो फिर छोड़िए और लाइलाज मरीज़ बनने के लिए तैयार रहें।

दोस्तो! ज़रा ग़ौर करें कि यह हवा रोज़ाना नहीं चलती, बल्कि साल भर में सिर्फ एक मर्तबा चलती है, आप का उम्मती साल में सिर्फ एक मर्तबा नुक़सान उठाए यह भी आप को गवारा नहीं है। जिस नबी को उम्मती का साल भर में एक मर्तबा नुक़सान उठाना गवारा नहीं है, उस नबी को यह कब गवारा हो सकता है कि उनका उम्मती रोज़ाना नुक़सान उठाए। हमारी और हमारे घरों की तो उन्हें इतनी फ़िक्र है, क्या कभी हम ने सोचा कि हम ने उनकी फ़िक्रों का कितना ख़्याल रखा?

आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की मुहब्बत और उम्मतियों पर आप की शफ़क़त की यह चंद छलकियाँ और चंद मुज़ाहिर थे जो मैंने नमूने के तौर पर आप हज़रात के सामने बयान किए। वरना तो आप की पूरी ज़िंदगी और ज़िंदगी का हर हर दिन उम्मतियों की फ़िक्र में गुज़रता और आप बस उसी ग़म में घुले जाते कि मेरे उम्मती किस तरह नुक़सान से बचें और उन्हें किस तरह दुनिया और आख़िरत में राहत और सुकून नसीब हो।

दोस्तो! जितना उन्होंने हमारा ख़्याल रखा उतना ख़्याल तो माँ बाप भी अपनी औलाद का नहीं रखते और हमारे नफा और नुक़सान के बारे में जितनी फ़िक्र उन्होंने की है उतनी फ़िक्र तो माँ बाप भी नहीं करते। हमारे लिए जितना वह रोये हैं इतना तो किसी के माँ बाप भी उस के लिए न रोये होंगे, लेकिन हम ऐसे नालायक़, निकम्मे और ऐहसान फरामोश हैं कि जिस क़द्र उन्होंने हमें याद रखा उसी क़द्र हम ने उन्हें भुला दिया है।

नबी की मुहब्बत में ऊँटों का अमल

दोस्तो! अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने अपने महबूब को सारे

जहानों के लिए रहमत बनाकर भेजा था और وَرَفَعْنَا لَكَ ذِكْرَكَ के ज़रिए आपकी अज़मत व रफ़अत का सारे जहाँ में ऐलान कर दिया था। यही वजह थी कि आप के मुक़ाम व मर्तबे को सिर्फ इंसान व जिन्नात ही नहीं, बल्कि दीगर मख़्लूक़ात भी जानती थीं और आपकी मुहब्बत में जान तक देने को तैयार रहती थीं।

चुनान्चे मैंने एक आलिम के बयान में सुना कि हज के मौके पर आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने १०० ऊँटों की कुरबानी की थी, जिस में ६३ ऊँट तो आप ने खुद अपने हाथों से ज़बह किए थे। और बाक़ी ऊँट हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु के सुपुर्द फरमा दिए थे कि वह ज़बह करें। सारे ऊँट कुरबानगाह में मौजूद थे। तरतीब यह थी कि ऊँटों के रेवड़ में से पाँच पाँच ऊँट ज़बह करने के लिए लाए जाते। मौलाना ने फरमाया था कि जब पहला ऊँट ज़बह करने के लिए लाया जाता तो बक़िया चारों ऊँट भी दोड़ पड़ते कि पहले मुझे आप के हाथों ज़बह होने की सआदत मिले।

दोस्तो! ऊँट एक बेज़बान जानवर होकर आप की अज़मत को समझें और आपकी मुहब्बत में जान देने के लिए मुसाबक़त करें और हम आप के उम्मती होकर, आप से इश्क़ व मुहब्बत के मुद्दई होकर जज़बात की कुरबानी देने को भी तैयार न हों तो फिर हम खुद सोचें कि यह कितनी बड़ी बेग़ैरती और कितनी बेशर्मी की बात है।

एक ग़ैर मुस्लिम योगा मास्टर

मैंने अपनी जवानी के दिनों में कुछ अरसा तक योगा (एक ख़ास क़िस्म की जिस्मानी वरज़िश) की ट्रेनिंग ली है। एक ग़ैर मुस्लिम शख़्स जिनकी उम्र तक़रीबन ७० साल रही होगी, मुझे योगा

सिखाने मेरे घर आया करते थे। वह मुझे योगा सिखाते और मैं उन्हें बातों ही बातों में रोज़मर्रा के ज़रूरी आमाल मसलन खाने पीने, सोने जागने की सुन्नतें बताता जाता। तक़रीबन रोज़ का यही मामूल था। चूंकि वह योगा के मास्टर थे और लोगों को उसकी ट्रेनिंग देने के लिए उन्होंने बाक़ायदा एक इंस्टिट्यूट institute) भी खोल रखा था इस लिए उन्हें बहुत जल्द मसनून तरीक़ों पर अमल के जिस्मानी फवाइद समझ में आने लगे।

एक रोज़ मुझ से कहने लगे कि शकील! तुम मेरे गुरू हो या मैं तुम्हारा गुरू हूँ? कहने लगे कि जो बातें तुम मुझे रोज़ाना बताते रहते हो कि हम खाना खाने के लिए ऐसे बैठते हैं, पानी इस तरह पीते हैं, सोते इस तरह हैं, उठते इस तरह हैं, गुस्ल इस तरह करते हैं, ज़रूरत से फारिग़ होने के लिए इस तरह बैठते हैं वग़ैरह वग़ैरह। तो मैं इन सारी बातों को सिर्फ सरसरी तौर पर नहीं सुनता, बल्कि घर जाकर बहुत संजीदगी के साथ उन पर ग़ौर करता हूँ। क्योंकि मैं एक योगा मास्टर हूँ, जिस्मानी सेहत की हिफाज़त और बक़ा के सिलसिले से जो तरीक़े और तदाबीर मेरी अपनी फिल्ड से तअल्लुक़ रखती हैं, उनका मुझे बख़ूबी इल्म है। तुम्हारे बताए गए तरीक़ों पर जब मैंने ग़ौर किया तो उन तमाम तरीक़ों को सेहत के उसूलों के ऐन मुताबिक़ ही नहीं, बल्कि निहायत मुफीद और कारआमद पाया, इस लिए मैंने उन तमाम तरीक़ों को अपना लिया है और उन पर पाबंदी के साथ अमल भी करता हूँ। मेरी बहू ने जब मुझे उन तरीक़ों पर अमल करते देखा तो एक रोज़ मुझ से कहने लगी कि डैडी ! आज कल आप को हुआ क्या है कि आप के तमाम कामों को एक ख़ास ढंग से अंजाम दे रहे

हैं, इस से पहले तो आप कभी ऐसा नहीं करते थे। मैंने कहा कि बेटा! मुझे एक मुसलमान मिला है। कहने लगी कि डैडी! मुसलमान तो आप को रोज़ाना मिलते हैं और बहुत से मिलते हैं। मैंने कहा नहीं बेटा! यह कुछ अलग तरह का मुसलमान है, यह अपने प्रोफिट (Prophet) के बताए गए तरीक़ों के मुताबिक़ खुद भी अमल करता है और मुझे भी रोज़ाना उनके एक एक दो दो तरीक़े बताता रहता है और अब तक बहुत से तरीक़े बता चुका है। जब मैंने उन तरीक़ों पर ग़ौर किया तो वह सारे तरीक़े इंसानी सेहत की हिफाज़त के सिलसिले से इतने नेचरल Natural) और परफेक्ट (Perfect) थे कि मैंने खुद अपनी सेहत की हिफाज़त की ख़ातिर उन तमाम तरीक़ों को अपना लिया है और उन पर बहुत ऐहतिमाम के साथ अमल करता हूँ और आइन्दा भी करता रहूंगा।

देखिए! एक ग़ैर मुस्लिम योगा मास्टर जो न तो खुदा की वहदानियत पर ईमान रखता है और न ही हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की रिसालत पर ईमान रखता है, वह तो सुन्नतों के फवाइद को जान कर उन पर अमल करने को तैयार है और हम अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की वहदानियत पर ईमान लाने के बावजूद, हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अपना नबी और रसूल मानने के बावजूद और उनके साथ इश्क़ व मुहब्बत का दावा करने के बावजूद सुन्नतों पर अमल करने को तैयार नहीं हैं। क्या यह हमारे लिए लम्हए फिक्रिया नहीं है?

हमारी निय्यत तो सिर्फ नबी की इत्तिबा है

और फिर आज कल तो सुन्नत के फवायद पर साइंसी तजरबा गाहों में ख़ूब रिसर्च हो रही है और उन तजरबा गाहों से

अकसर व बेश्तर सुन्नत के नित नये फवाइद सामने आते रहते हैं। खुद हमारे मुहक़्क़िक़ीन ने भी इस मौजू पर साइंसी नुक़्तए नज़र से खुब तहक़ीक़ की है और मुख़्तलिफ ज़ावियों से सुन्नत के फवायद उम्मत के सामने बयान किए हैं। उन्ही लोगों में एक नाम हकीम मुहम्मद तारिक़ महमूद चोग़ताई साहब का भी है जिनकी तहक़ीक़ी काविश "सुन्नते नबवी और जदीद साइंस" के नाम से दो जिल्दों पर छप कर मंज़रे आम पर आ चुकी है और बाज़ार में दस्तयाब भी है।

यह और बात है कि हम मुसलमान किसी साइंसी और दुनियवी फवायद के पेशे नज़र सुन्नतों पर अमल नहीं करते, बल्कि सिर्फ और सिर्फ इस लिए अमल करते हैं कि यह हमारे नबी की सुन्नत है, यह हमारे आक़ा का तरीक़ा है। इस लिए कि सुन्नत का फैज़ान किसी साइंसी तहक़ीक़ और वज़ाहत का मुहताज नहीं है। साइंसी तजरबा गाहें सुन्नत की इफादियत बयान करें न करें, उसकी अहमियत को तस्लीम करें या न करें, हमें उस से कोई सरोकार नहीं है। हमारे अमल के लिए तो बस इतना ही काफी है कि यह "सुन्नतें" हमारे महबूब के तरीक़े हैं, उनकी अदाऐं हैं, उन आमाल पर उनकी निस्बत का लग जाना ही उनकी इफादियत के लिए बहुत बड़ी सनद और शहादत है जिस के बाद किसी और सनद और शहादत की ज़रूरत बाक़ी नहीं रहती।

महबूब की हर अदा क़ाबिले अमल हुआ करती है

दोस्तो! मुझे इल्म की रोशनी में सुन्नत की शरई हैसियत बसर व चश्म क़बूल है। यह मैंने कब कहा कि सुन्नत पर फर्ज़ या वाजिब की तरह अमल करना ज़रूरी है। उसकी वज़ाहत तो मैं

पहले भी कर चुका हूँ और अकसर करता रहता हूँ कि शरीअत ने आमाल के जो दर्जात मुक़र्रर किए हैं उन दर्जात को मद्दे नज़र रखते हुए ही उन आमाल पर अमल किया जाएगा। यह हरगिज़ नहीं होगा कि किसी अमल को उसके शरई दर्जे से घटा कर या बढ़ा कर उस पर अमल किया जाए, लेकिन ख़ुदारा, सुन्नत की शरई हैसियत के पेशे नज़र उसे हल्का बिल्कुल न समझें, आमाले मसनूना से मुतअल्लिक़ अपनी रविश और अपना ज़ावियए निगाह ज़रा तबदील करें। यह जो सुन्नत की शरई हैसियत हम जानते हैं, क्या सहाबाए किराम सुन्नत की उस शरई हैसियत पर मुत्तलअ नहीं थे? क्या उन्हें पता न था कि सुन्नत पर फ़र्ज़ या वाजिब की तरह अमल करना ज़रूरी नहीं है? फिर आख़िर क्या वजह है कि सहाबए किराम "सुन्नत'' को हत्तल इम्कान क़ाबिले अमल समझते थे। उनके नज़दीक सुन्नत कोई मामूली चीज़ न थी, बल्कि बहुत बड़ी चीज़ थी। इसी लिए उन्हें हर हर शोबे की सुन्नतों का बड़ा ख़्याल रहता था और वह अपनी बेसात भर तमाम सुन्नतों पर निहायत ऐहतिमाम के साथ अमल किया करते थे। आख़िर क्यों? उसकी वजह क्या थी?

सो उसका सीधा और साफ़ जवाब यही है कि उन्हें अपने महबूब जनाब नबीए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बेइन्तिहा मुहब्बत थी, वह दीवानगी की हद तक आप को चाहते थे, उनकी यही मुहब्बत उन्हें आपकी इत्तिबा पर मजबूर करती थी। इसी लिए उनके नज़दीक अपने महबूब की हर अदा, आप का हर क़ौल, हर फ़ेअल, हर अमल लायक़े अमल था, वह आपके आमाल की इत्तिबा करना और आपकी अदाओं की नक़ल करना अपने लिए

फ़ख्र और सआदत की बात समझते थे।

इश्क़ की चंद मिसालें

हज़रात सहाबए किराम रज़ि अल्लाहु अन्हुम अजमईन के नज़दीक "सुन्नत" कितनी अहमियत की हामिल थी और वह कितने ऐहतिमाम के साथ उस पर अमल किया करते थे, उसकी चंद मिसालें मैं आप हज़रात के सामने बयान करता हूँ। ज़रा तवज्जुह से सुनें और "इत्तिबाए सुन्नत" से मुतअल्लिक़ अपनी सोच और अपने रवय्ये का जायज़ा भी लेते जाऐं।

१. हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु का एक वाक़या किताबों में लिखा हुआ है कि एक मर्तबा आप सफर के इरादा से ऊँट पर सवार हुए। जब सवार हो गए तो आप ने चंद कलिमात कहे:

سُبْحَانَ اللّٰہِ اَلْحَمْدُلِلّٰہِ لَااِلٰـہَ اِلَّااللّٰہُ اَللّٰہُ اَکْبَرُ.

सुबहानल्लाही अल हम्दु लिल्लाही ला इलाह इल्लल्लाहु अल्लाहु अकबर।

फिर ऊँट को कुमची मारी और हंसे। किसी ने पूछा कि आप ने यह क्यों किया? फरमाया कि मैंने हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आप इसी तरह ऊँट पर सवार हुए, इसी तरह यह कलिमात कहे, इसी तरह कुमची मारी और हंसे। देखिए! सहाबए किराम इतनी छोटी छोटी बातों में भी आप की इत्तिबा का ऐहतिमाम किया करते थे।

२. इसी तरह के दो वाक़या हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा के मुतअल्लिक़ भी मनकूल हैं।

पहला वाक़या तो यह कि एक मर्तबा आप मदीना तय्यबा और मक्का मुकर्रमा के रास्तों में सफर कर रहे थे। एक जगह पहुंच

कर आप ऊँट से उतरे और एक दरख़्त के नीचे ज़रा देर लेटे, आराम किया, उस के बाद सवार हुए और चल दिए। किसी ने पूछा कि आप ने ऐसा क्यों किया? फरमाया कि मैंने देखा है कि हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यहाँ से गुज़रते हुए इस जगह इतनी देर आराम फरमाया।

ग़ौर करें! कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा ने उस जगह पहुंच कर उस दरख़्त के नीचे सिर्फ आराम नहं किया, बल्कि उतनी ही देर आराम किया जितनी देर हुज़ूर अरकम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आराम फरमाया था। यह है हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इत्तिबा और आपकी इताअत जिसे हम लोग "सुन्नत ही तो है" कह कर छोड़ते जाते हैं।

३. हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा ही का एक और वाक़्या किताबों में मज़कूर है कि आप एक मर्तबा ऊँट पर सवार होकर कहीं तशरीफ लेजा रहे थे। एक जगह पहुंच कर ऊँट को बिठाया, नीचे उतरे और एक जगह जाकर इस तरह बैठ गए जैसे आदमी पेशाब करने के लिए बैठता है, लेकिन पेशाब न किया, सिर्फ हैयत बनाकर बैठे और वापस तशरीफ ले आए। किसी ने पूछा कि यह क्या बात है? फरमाया कि इस रास्ते से गुज़रते हुए आप ने उस जगह पेशाब किया था।

देखिए ! उन्हें पेशाब की हाजत नहीं थी, लेकिन उस जगह से गुज़रते हुए उन्हें अपने महबूब का अमल याद आ गया। महबूब का अमल याद आ जाए और एक आशिक़ उस अमल को छोड़ कर वहाँ से गुज़र जाए, यह कैसे हो सकता है? महबूब की मुहब्बत ने

मजबूर किया कि यहाँ से गुज़रते हुए उस अमल की नक़ल करते हुए चलो। हालाँकि हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह अमल इबादत के तौर पर अंजाम नहीं दिया था, बल्कि अपनी एक बशरी ज़रूरत को पूरा करने के लिए अंजाम दिया था, लेकिन हज़रात सहाबाए किराम रिज़वानुल्लाह अलैहिम अजमईन की मुहब्बत पर कुरबान जाऐं कि वह हज़रात उन आमाल में भी आप की इत्तिबा को अपने लिए लायक़े सआदत समझते थे।

४. एक और वाक़या मुलाहिज़ा फरमाऐं। हज़रत हुज़ैफा रज़ि अल्लाहु अन्हु से किसी ने पूछा कि हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दिन रात में क्या अमल किया करते थे? फरमाया कि सुबह उठो और हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु के पास आ जाओ। जिस तरह उन्हें वुज़ू करते देखो, समझ लो कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इसी तरह वुज़ू किया करते थे। जिस तरह उन्हें नमाज़ पढ़ता देखो और नमाज़ में क़याम, रूकू, सजदा और क़अदा करते देखो, समझ लो कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ के सारे अरकान इसी तरह अदा किया करते थे, जिस तरह वह चलते हैं समझ लो कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इसी तरह चला करते थे। जिस तरह वह किसी के सलाम का जवाब देते हैं, समझ लो कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इसी तरह सलाम का जवाब दिया करते थे। जिस तरह वह मुसाफा करते हैं, समझ लो कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इसी तरह मुसाफा किया करते थे। जिस तरह वह बैठते हैं, समझ लो कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उसी तरह बैठा करते थे। जिस तरह वह किसी के

सवाल का जवाब देते हैं, समझ लो कि हुज़ूर अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उसी तरह लोगों के सवालात के जवाबात दिया करते थे।

५. गुफ्तगू की मुनासिबत से यहाँ वह रिवायत नक्ल करना मुनासिब मालूम होती है जिसे हज़रत शैखुल हदीस मुहम्मद ज़करिया रह० ने अपने रिसाला "फज़ाइले नमाज़" में ज़िक्र किया है। वह रिवायत यह है।

हज़रत अबू उसमान फरमाते हैं कि मैं एक मर्तबा हज़रत सलमान फारसी के साथ एक दरख़्त के नीचे था। उन्होंने एक दरख़्त की एक खुश्क टेहनी पकड़ कर उसे हरकत दी जिस से उसके पत्ते गिर गए। फिर मुझ से कहने लगे कि अबू उसमान! तुम ने मुझ से यह न पूछा कि मैंने यह क्यों किया? मैंने कहा आप ही बता दीजिए क्यों किया। फरमाया कि मैं एक दफा नबीए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ एक दरख़्त के नीचे था। आप ने भी दरख़्त की एक खुश्क टेहनी पकड़ कर इसी तरह किया था जिस से इस टेहनी के पत्ते झड़ गए थे। फिर हुज़ूर अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फरमाया था कि सलमान! पूछते नहीं कि मैंने इस तरह क्यों किया? मैंने अर्ज़ किया कि आप ही बता दीजिए क्यों किया। आप ने इर्शाद फरमाया था कि जब मुसलमान, अच्छी तरह वुज़ू करता है, फिर पाँचों नमाज़ें पढ़ता है तो उसकी ख़ताऐं उस से ऐसी ही गिर जाती हैं जैसे यह पत्ते गिरते हैं।

इस हदीस को नक्ल करने के बाद हज़रत शैख़ रह० फायदा के ज़ेल में लिखते हैं कि "हज़रत सलमान रज़ि अल्लाहु अन्हु ने जो

अमल करके दिखलाया, यह सहाबए किराम रज़ि अल्लाहु अन्हुम अजमईन के तअश्शुक़ की अदना मिसाल है। जब किसी शख़्स को किसी से इश्क़ होता है तो उसकी हर अदा उसे भाती है और इसी तरह हर काम के करने को जी चाहा करता है जिस तरह महबूब को करते देखता है। जो लोग मुहब्बत का ज़ायक़ा चख चुके हैं वह इस हक़ीक़त से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं। इसी तरह सहाबए किराम रज़ि अल्लाहु अन्हुम अजमईन नबिए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इर्शादात नक़ल करने में अकसर उन अफ़आल की भी नक़ल करते थे जो उस इर्शाद के वक़्त हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने किए थे''।

६. इसी तरह मैंने एक किताब में पढ़ा कि एक सहाबी हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए। देखा कि आप के कुर्ते के बटन खुले हुए हैं। बस फिर क्या था, उन्होंने उसके बाद सारी ज़िंदगी कभी बटन नहीं लगाया। उसका मतलब हरगिज़ यह नहीं कि आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने बटन नहीं लगाया था, बल्कि आप से बटन का लगाना भी साबित है, लेकिन यह उनकी इश्क़ की बात थी कि जिस हाल में आप को देखा उसी हाल में अपनी पूरी ज़िंदगी गुज़ार दी।

देखिए! यह हैं सहाबए किराम जिन्होंने हर हर चीज़ में अपने आप को हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रंग में रंग लिया था। यह चंद वाक़यात तो सहाबए किराम के थे जिन्होंने हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम के साथ ऐसी मुहब्बत करके दिखलाई कि इश्क़ व मुहब्बत की दास्तान उन्ही पर ख़त्म हो गई, उनके जैसी मुहब्बत की मिसाल उस से पहले कभी मिली और

न क़यामत तक मिल सकेगी, लेकिन ऐसा नहीं है कि उनके बाद मुहब्बत करने वाले और आप की इत्तिबा करने वाले दुनिया से ख़त्म हो गए, करने वालों ने उसके बाद भी अपनी अपनी बिसात भर इस राह में बहुत कोशिश की है और हर दौर के लोगों के लिए अमल की राह खोल गए हैं। अब आप हज़रात के सामने हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उन्ही मतवालों के चंद वाक़्यात पेश करता हूँ, मुलाहिज़ा फरमाऐं।

६. हज़रत बिश्र हाफी रहमतुल्लाह अलैह फरमाते हैं कि मैंने एक मर्तबा ख़्वाब में आप अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़ियारत की। आप ने फरमाया ऐ बिश्र! तुम जानते हो कि तुम्हें हक़ तआला ने तमाम हम अस्र लोगों पर फौक़ियत व फज़ीलत किस लिए दी है? मैंने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) मैं वाक़िफ नहीं। आप ने फरमाया उस फज़ीलत का सबब यह है कि तुम मेरी सुन्नत की इत्तिबा करते हो और नेक लोगों की इज़्ज़त करते हो और अपने भाईयों की ख़ैर ख़्वाही करते हो।

७. दारूल उलूम देवबंद के बानी हुज्जतुल इसलाम हजरत मौलाना मुहम्मद क़ासिम नानौतवी रह० जब मदीना मुनौव्वरा में दाख़िल हुए तो उन पर जज़्ब व कैफ का एक अजीब आलम तारी हुआ, जूते उतार दिए और नंगे पावँ चलने लगे, रास्ते के कंकरों और पत्थरों से पावँ लहूलोहान हो गए, लेकिन उन्हें उसका होश न था। एक तरफ अदब व ऐहतेराम में उनका यह मुक़ाम था और दूसरी तरफ इत्तिबए सुन्नत का इस क़द्र ख़्याल था कि जब जिहादे आजादी में उनकी गिरिफ्तारी का वारंट जारी हुआ तो तीन दिन तक रूपोश रहे और फिर बरसरे आम फिरने लगे। अक़ीदतमंदों ने

बड़ी मिन्नत समाजत की कि हज़रत! सरकारी अहलकार आप को तलाश करते फिर रहे हैं, बेहतर था कि आप रूपोश ही रहते। फरमाने लगे कि मैं उस से ज़्यादा रूपोश नहीं रह सकता। क्योंकि हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ग़ारे सौर में तीन ही दिन रूपोश रहे थे। अल हम्दु लिल्लाह मुझे इस सुन्नत पर अमल का मौक़ा नसीब हो गया, पता नहीं इस सुन्नत पर अमल का मौक़ा हाथ आता भी या नहीं।

देखिए! इत्तिबाए सुन्नत का किस दर्जा ऐहतिमाम था कि सुन्नत पर अमल की ख़ातिर गिरिफ्तारी का ख़तरा मोल लेना तो गवारा था लेकिन तीन से ज़्यादा रूपोश रहना गवारा न था।

८. हज़रत गंगोही रह० के एक अक़ीदतमंद की हजरत ख़लील अहमद सहारनपूरी रह० से मुलाक़ात हुई। उस ने हज़रत से पूछा कि हजरत! फ्लाँ अमल का सुन्नत तरीक़ा क्या है? हज़रत मौलाना को यह बात मालूम थी कि यह साहब हजरत गंगोही रह० की सोहबत में रहे हैं। लिहाज़ा उन्ही से पूछा कि आप ने हज़रत गंगोही रह० को यह अमल किस तरह करते देखा है? अर्ज़ किया कि हजरत तो इस तरह किया करते थे। फरमाया बस यही सुन्नत है।

देखिए! हजरत मौलाना खलील अहमद साहब रह० को हजरत गंगोही रह० की ज़िंदगी के बारे में किस क़द्र ऐतिमाद था कि किताब देखने की ज़रूरत भी महसूस न की, बल्कि फरमा दिया कि जिस तरह हजरत को करते देखा है, समझ लो कि उस अमल का वही मसनून तरीक़ा है।

हकीमुल उम्मत हजरत मौलाना अशरफ अली थानवी रह० को कौन नहीं जातना। आप की तसनीफ से आज पूरी दुनिया

फैजयाब हो रही है। इतने बड़े आलिम और फक़ीह हैं, लेकिन क्या कह रहे हैं जरा तवज्जुह से सुनें। एक रोज़ फरमाने लगे कि एक दिन मुझे ख़्याल आया कि हम लोग इत्तिबाए सुन्नत का तो बहुत ज़िक्र करते हैं मगर हमें यह देखना चाहिए कि उसका कुछ हिस्सा हमारे आमाल में है भी या नहीं?

चुनान्चे मैंने तीन रोज़ के लिए अपने सारे मामूलात बंद कर दिए और अपने तमाम आमाल का बग़ौर जायज़ा लेता रहा। देखना यह था कि कितनी इत्तिबाए सुन्नत हम लोग आदतन करते हैं, कितनी इत्तिबाए सुन्नत की तौफीक़ इल्म हासिल करने के बाद हुई और कितनी बातों में अब तक महरूमी है। तीन दिन तक तमाम उमूर ज़िंदगी और मामूलात रोज़ व शब का जायज़ा लेने के बाद इतमिनान हो गया कि अलहम्दु लिल्लाह मामूलात में कोई अमल ख़िलाफे सुन्नत नहीं है।

१०. हज़रत मदनी रह० के ज़माने में एक शख़्स था जिस ने हाथ सीधा रखने की एक मुद्दत तक मश्क़ की थी। चुनान्चे उस ने आधा घंटा तक हाथ सीधा रखने में कामियाबी हासिल कर ली थी। एक रोज़ शैखुल इस्लाम हजरत मौलाना हुसैन अहमद मदनी रह० की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और आप से मुसाफहा किया। मुसाफहा करते हुए उस ने अपना हाथ हजरत के हाथ ही में रखा, अलाहिदा न किया।

चूंकि हदीस पाक में आता है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब किसी से मुसाफहा करते तो अपना हाथ उस वक़्त तक अलाहिदा न करते जब तक कि वह ख़ुद अपना हाथ न खींच ले। चुनान्चे उन साहब ने मुसाफहा में हजरत मदनी का हाथ पकड़े

रखा, हज़रत ने भी अपना हाथ अलाहिदा न किया, यहाँ तक कि आधा घंटा गुज़र गया। उसके बाद उन साहब ने खुद ही अपना हाथ खींच लिया और कहने लगे कि देखो उसे कहते हैं इत्तिबाए सुन्नत।

११. बानी तबलीग़ हज़रत मौलाना मुहम्मद इलियास साहब रह० को भी इत्तिबाए सुन्नत का ऐसा ही ज़ौक़ था और यह जौक तो हर अल्लाह वाले का हुआ करता है, उसी शौक़ पर अमल करने की बिना पर वह अल्लाह वाला बना करता है। आप का एक वाक़्या विसाल से बिल्कुल क़रीब का है। उस वक़्त ज़ोअफ व नक़ाहत का यह आलम था कि आप बिल्कुल बिस्तर के हो चुके थे, जबान भारी हो गई थी, बोलने तक की कुदरत नहीं थी, इशारों से बात हो रही थी। इसी दौरान हजरत ने आँखों से कुछ इशारा किया, खुद्दाम ने समझा कि हज़रत अपने पावँ से मोज़े उतरवाना चाहते हैं, लिहाज़ा उन्होंने उतारना शुरू किया, मगर हजरत ने अपने पावँ खींच लिया। कुछ देर बाद आँखों से फिर इशारा फरमाया, खुद्दाम फिर वही समझे और मोज़े उतारने लगे, मगर हजरत ने फिर पावँ खींच लिया। ऐसा चंद मर्तबा हुआ। जब खुद्दाम किसी नतीजे पर न पहुंच सके तो हजरत जी मौलाना यूसुफ रह० को बुलाया गया। हजरत जी तशरीफ लाए, उन्होंने भी इशारे से वही समझा जो खुद्दाम समझ रहे थे। फरमाया कि मोज़े उतार दो। खुद्दाम नें फिर एक बार मोज़े उतारने शुरू किए। हजरत ने अपने पावँ की हरकत से फिर मना फरमाया। हजरत जी मौलाना यूसुफ सहाब रह० ने फरमाया कि अब्बा जी मोज़े ही उतरवाना चाहते हैं, लेकिन बात यह है कि तुम सुन्नत के ख़िलाफ उतार रहे हो, इस

लिए मना फरमा रहे हैं। मोज़ा पहनते वक़्त पहले दाऐं पावँ में पहना जाता है फिर बाऐं पावँ में, और उतारते वक़्त पहले बाऐं पावँ से उतारा जाता है फिर दाऐं पावँ से। आप लोग बाऐं पावँ से शुरू करने के बजाए दाऐं पावँ से शुरू कर रहे हैं। इस लिए अब्बा जी रोक रहे हैं। अल्लाहु अकब्बर। देखिए! किस हालत में हैं, उसके बावजूद इत्तिबाए सुन्नत का किस क़द्र ख़्याल है।

१२. सुन्नत की इत्तिबा और उसके हद दर्जा ऐहतिमाम से मुतअल्लिक़ शैख़ुल हदीस मौलाना मुहम्मद जकरीया रह० का एक वाक़्या भी सुनते चलें। इंतेक़ाल से कुछ ही देर पहले की बात है। हजरत के ख़ुद्दाम हज़रत को वुज़ू करा रहे थे और यह वुज़ू हजरत की ज़िंदगी का ग़ालिबन आख़िरी वुजू था। वुज़ू कराते हुए ख़ुद्दाम ने हजरत का हाथ पहुंचों तक धुलवाने के बाद कुल्ली कराई और उसके बाद सीधे नाक में पानी डालना शुरू कर दिया, मिसवाक कराना भूल गए। मगर उस शख़्स को देखिए जिसकी ज़िंदगी का एक एक लम्हा इत्तिबाए सुन्नत में गुज़ारा था और जो चंद ही लम्हों के बाद अल्लाह से मुलाक़ात करने वाला था इस हाल में भी इतना बाहोश था कि फौरन अपने ख़ुद्दाम को मुतवज्जह किया कि भाई, मिसवाक की सुन्नत रह गई है।

१३. हजरत मौलाना मुहम्मद शफी साहब रह० के मुतअल्लिक़ लिखा हुआ है कि जब आप रौज़ए अक़दस पर हाज़िर होते तो कभी रौज़ए अक़दस की जाली तक पहुंच नहीं पाते थे, बल्कि हमेशा यह देखा गया कि जाली के सामने जो सुतून है उस सुतून से लग कर खड़े हो जाते और जाली का बिल्कुल सामना नहीं करते थे। और अगर कोई आदमी वहाँ ख़ड़ा होता तो उसके पीछे जा खड़े होते

और वहीं से सलाम अर्ज़ करते।

एक रोज़ फरमाने लगे कि एक मर्तबा रौज़ए अक्दस के पास खड़े खड़े मेरे दिल में यह ख़्याल आया कि शफी! तू शायद बड़ा शक़ीयुल क़ल्ब है। देख! यह अल्लाह के बंदे जाली के बिल्कुल क़रीब तक पहुंच जाते हैं और कुर्ब हासिल करने की कोशिश करते हैं। सरकारे दोआलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जितना कुर्ब भी नसीब हो जाए वह नेमत ही नेमत है, लेकिन तू क़रीब ही नहीं आता, तेरा क़दम आगे बढ़ता ही नहीं है, शायद यह शक़ावते क़ल्ब है। फरमाते हैं कि वहाँ खड़े खड़े मेरे दिल में यह ख़्याल पैदा हुआ। मगर उसके फौरन बाद यह महसूस हुआ कि जैसे रौज़ए अक़दस से यह आवाज़ आ रही हो कि "जो शख़्स हमारी सुन्नतों पर अमल करता है वह हम से क़रीब है ख़्वाह वह हज़ारों मील दूर हो। और जो शख़्स हमारी सुन्नतों पर अमल नहीं करता वह हम से बहुत दूर है चाहे वह हमारी जालियों से चिमटा हुआ हो।

हम अपना जायज़ा लें

इन वाक़यात की रोशनी में हमें अपनी हालत का जायज़ा लेना चाहिए कि हम किस दर्जा आप के अफ़आल व आमाल और आप की हरकात व सक़नात की इत्तिबा करते हैं। हमें जिस क़द्र आप से मुहब्बत होगी उसी क़द्र हमारी ज़िंदगी में आप की इत्तिबा होगी। बअलफाज़े दीगर यही इत्तिबा दर हक़ीक़त हमारी मुहब्बत की अलामत और पहचान होगी। आज जो हम से आप की इताअत नहीं हो पाती उसकी वजह यही है कि हमारे अंदर उस मुहब्बत की शिद्दत का फुक़दान है, हमें आप से मुहब्बत तो है, लेकिन यह मुहब्बत अभी बहुत मामूली सी चिनगारी की शकल में है। जिस

दिन यह चिनगारी शोला बन कर भड़क उठेगी उस दिन हमारे नज़दीक भी आप का हर फेअल, हर अमल और आपकी हर अदा लायके अमल होगी और हम किसी हाल में भी उन्हें छोड़ना गवारा नहीं करेंगे।

इताअत में कमी क्यों?

इसी बात को आरिफ बिल्लाह हजरत अकदस मौलाना मुहम्मद अहमद साहब रह० ने इस तरह इर्शाद फरमाया है कि "जिस को खुदावन्दे कुद्दूस से और उनके रसूल हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत होगी उसे अल्लाह पाक की शरीअत और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत से ज़रूर मुहब्बत होगी और यह मुहब्बत उसे शरीअत और सुन्नत पर अमल और उसकी इताअत पर मजबूर करेगी। इस लिए कि मुहिब अपने महबूब की ज़रूर इताअत किया करता है''

आगे फरमाते हैं कि "बस आज कल बावजूद दावए मुहब्बत के इत्तिबा और इताअत में जो कमी नज़र आ रही है, यह दर हकीकत उसी मुहब्बत की कमी का नतीजा है।

सुना आप ने! कि जिसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत होगी वह ज़रूर सुन्नत पर अमल करेगा। दानिस्ता तौर पर सुन्नत के ख़िलाफ अमल का सुदूर उस से हो ही नहीं सकता।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मुहब्बत का पैमाना

दोस्तो! सुन्नतों पर अमल दर हकीकत हुज़ूर अकरम

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मुहब्बत का एक पैमाना है। जिसे हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से जिस क़द्र मुहब्बत होगी वह उसी क़द्र आपकी सुन्नतों पर आमिल होगा। अगर सुन्नतों पर अमल का ऐहतिमाम है तो उस का मतलब यह है कि उस शख़्स को हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत है और यह मुहब्बत उसके दिल में घर कर गई है। ख़्वाह यह शख़्स ज़बान से कभी सुन्नतों के फवायद बयान न करे, लेकिन उसका यह अमल बतला रहा है कि उसे आप से और आपकी सुन्नतों से प्यार है। और अगर ज़िंदगी में सुन्नतों का ऐहतिमाम नहीं है तो फिर ख़्वाह घंटों सुन्नतों के फवायद बयान करता हो, लेकिन उसका साफ मतलब यह है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत सिर्फ ज़बान की हद तक है, यह मुहब्बत अभी दिल में पूरी तरह उतरी नहीं है। अब उस पैमाने को सामने रख कर हर शख़्स को यह जायज़ा लेना चाहिए कि वह किस दर्जा हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत करता है।

याद रखने वाले याद रखे जा रहे हैं

दोस्तो! करने वाले कर रहे हैं और पूरे ऐहतिमाम के साथ सुन्नतों पर अमल कर रहे हैं। अब इत्तिबाए सुन्नत उनके लिए मुश्किल नहीं रही। बल्कि यह उनकी तबीयते सानिया बन चुकी है और हाल यह हो गया है कि उन्हें कोई अमल ख़िलाफे सुन्नत अच्छा ही नहीं लगता। जहाँ सुन्नत के ख़िलाफ अमल हुआ कि उनकी तबीयत अंदर से बेचैन हो जाती है कि हाए यह क्या हो गया? हम से ख़िलाफे सुन्नत अमल का सुदूर कैसे हो गया?

मैं ऐसे लोगों को जानता हूँ कि इत्तिबाए सुन्नत जिन की घुट्टी

में पड़ चुकी है, आमाले मसनूना की तलाश और ततब्बु की उन्हें सिर्फ फ़िक्र ही नहीं होती, बल्कि अब यह उनकी आदत और उनका ज़ौक़ बन चुका है। इस ऐहतिमाम पर उन्हें मिलता क्या है? ज़रा यह भी सुनते चलें। जब वह हरदम आक़ा को याद रखते हैं तो वह करीम ज़ात जिस ने अपनी हयाते मुबारका में ऐहसान करने वालों के ऐहसान का बदला पूरा पूरा दिया है और अपनी शान के मुताबिक़ कई गुना बढ़ा कर दिया है, वह भला उन्हें कैसे फरामोश कर सकते हैं, वह भी उन्हें याद रखते हैं। आप की तरफ से उन्हें बशारतें मिलती हैं, सलाम व प्याम आता है, आप मुहब्बत के साथ उन्हें अपने घर मदीना बुलाते हैं कि मेरे प्यारो! मेरे यहाँ आओ। जब कभी किसी परेशानी के सबब आप के यह उम्मती ग़मज़दा और परेशान होते है तो आक़ा की तरफ से उन्हें तसल्ली दी जाती है कि प्यारो! ग़म न करो, परेशान न होओ, अनक़रीब तुम्हें राहत हो जाएगी।

ज़रा सोचें तो सही, किस की तरफ से तसल्ली दी जा रही है? कौन तसल्ली दे रहा है? दोजहाँ के सरदार तसल्ली दे रहे हैं, महबूबे रब्बुल आलमीन तसल्ली दे रहे हैं, इमामुल अंबिया वल मुरसलीन तसल्ली दे रहे हैं, सय्यदुल अव्वलीन वल आख़िरीन तसल्ली दे रहे हैं, जिनके सदक़े में कायनात को वुजूद बख़्शा गया, वह ज़ात तसल्ली दे रही है कि हालात से न घबराओ, ग़मज़दा न हो, बस अब राहत होने ही को है।

बताइए! आक़ा की जानिब से तसल्ली मिलने के बाद आदमी कितना ख़ुश होता होगा और उसके दिल को कितना सुकून और इतमिनान होता होगा कि आक़ा की तरफ से तसल्ली दी गई है, वहाँ

से बशारत आ गई है। यह है इत्तिबाए सुन्नत का और आक़ा को हर दम याद रखने का सिला। ऐसा नहीं है कि याद रखने का तमाम सिला आख़िरत के दिन ही मिलेगा, बल्कि याद रखने वाले तो दुनिया में भी याद रखे जाते हैं और याद रखे जा रहे हैं, उन्हें दुनिया में भी भुलाया नहीं जाता।

आप के नाम पर जान देकर
ज़िंदगी ज़िंदगी पा गई है
चल के नक़्शे क़दम पर नबी के
बंदगी बंदगी पा गई है

मुहब्बत का तक़ाज़ा

मैं यह बात पहले अर्ज़ कर चुका हूँ कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपने बंदों पर हद दर्जा मेहरबान हैं और उन से बेइंतिहा प्यार और मुहब्बत करते हैं। इस मुहब्बत और प्यार का तक़ाज़ा ही यह है कि वह अपने बंदों को ऐसा रास्ता बताऐं जिन पर चलना बंदों के लिए आसान हो। जब वह अपने बंदों से सत्तर माओं और सौ माओं से ज़्यादा प्यार करते हैं तो फिर वह उन्हें ऐसा रास्ता क्यों कर बतलाऐंगे जिस पर बंदे चल ही न सकें। यह काम तो हम और आप भी नहीं करते। हम भी जिस से मुहब्बत करते हैं उसकी राहत का पूरा ख़्याल रखते हैं और उसे आसान और सोहूलत वाला रास्ता बताते हैं ताकि उसे कोई दिक़्क़त और परेशानी न हो।

देखिए! हम अपने बेटे से मुहब्बत करते हैं। जब उसे किसी काम से कहीं भेजते हैं तो घर से निकलने से लेकर घर वापसी तक की हर बात समझाते हैं। देखो बेटा! बड़ी नोटें अंदर वाली जेब में रख लेना, खुल्ले पैसे ऊपर की जेब में रखना, रेलवे स्टेशन

पहुंचने के बाद जब टिकट की लाइन में खड़े होना तो मोबाइल अपने हाथ में रखना, लाइन में जेब कतरे भी खड़े होते हैं जो जेब काट लेते हैं, पैसे और मोबाइल चुरा लेते हैं, लिहाज़ा बहुत ख़्याल रखना, कहीं ऐसा न हो कि नुक़सान हो जाए।

और सुनो! इतने बजे की लोकल ट्रेन जो फलाँ जगह से आती है उसी में बैठना, उस में भीड़ कम होती है। उसके अलावा दूसरी ट्रेनें बहुत दूर से आती हैं, उन में भीड़ भी बहुत होती है और जेब कतरे भी बहुत होते हैं। लिहाज़ा जो ट्रेन बता रहा हूँ उसी में बैठना, अगर वह ट्रेन छूट गई तो फिर बड़ी दुशवारी होगी।

दोस्तो! रोज़ाना लाखों लोग ट्रेन से सफर करते हैं, लेकिन हम ने आज तक किसी को इस तरह नहीं समझाया जिस तरह अपने बेटे को समझाते हैं। क्यों? इसी लिए कि तो कि वह हमारा अपना है, हमें उस से मुहब्बत है, यही मुहब्बत हमें उसको समझाने पर और उसकी राहत का ख़्याल रखने पर मजबूर करती है।

अल्लाह के प्यारे की प्यारी अदाऐं

जब हम अपने बेटे को अपना समझते हैं और उस से मुहब्बत करते हैं तो उसे राहत और सोहूलत वाला रास्ता बताते हैं। तो क्या अल्लाह पाक हमें अपना नहीं समझते? हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमें अपना नहीं समझते? वह भी तो हमें अपना समझते हैं और हम से बेइंतिहा प्यार करते है।

ज़रा ग़ौर करें कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें किस तरह अपना समझा और हम से किस दर्जे मुहब्बत की कि हमारे नफे की और हमारी राहत और सोहूलत की हर छोटी बड़ी

बात हमें बताई और हमें नुक़सान पहुंचाने वाली हर छोटी बड़ी बात से आगाह किया। ज़िंदगी का कोई शोबा और कोई गोशा ऐसा नहीं छोड़ा जिस में आप ने हमारी रहनुमाई न की हो। हत्ताकि बैतुल ख़ला में जाने, वहाँ क़दम रखने, वहाँ बैठने, फारिग़ होने के बाद वहाँ से क़दम हटाने और फिर वहाँ से बाहर निकलने तक की हर बात हमें बताई। आक़ा की उन हिदायात को सुन कर मदीना के यहूदी, सहाबए किराम से कहने लगे कि यह तुम्हारे कैसे नबी हैं जो तुम्हें पेशाब और पाख़ाना करने का तरीक़ा भी बताते हैं। यह सुन कर सहाबए किराम शर्मिंदा नहीं हुए बल्कि बड़े फख़्र के साथ कहा कि हाँ हाँ, हमारे नबी हम से इतनी मुहब्बत करते हैं कि हमें पेशाब और पाख़ाना करने का तरीक़ा भी सिखाते हैं।

मेरे भाइयो! सुन्नत की शरई हैसियत से धोका में न आएं कि सुन्नत पर अमल कर लिया तो बहुत अच्छा और न किया तो कोई गुनाह न होगा। नहीं नहीं, ऐसा नहीं है। सुन्नत छोड़ने की चीज़ है ही नहीं, और हो भी कैसे? इस लिए कि सुन्नतें दर हक़ीक़त अल्लाह के प्यारे की प्यारी अदाऐं हैं जो अल्लाह रब्बुल इ़ज़्ज़त को बेइंतेहा महबूब हैं। वह कब यह गवारा कर सकते हैं कि उन के महबूब की अदाओं को फरामोश कर दिया जाए।

देखिए! जब आदमी को किसी से मुहब्बत होती है तो उसकी हर अदा उसे भाती है, उसका हर अमल उसे पसंद आता है और वह उसकी नक़ल करने की कोशिश किया करता है। चूंकि हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम भी अल्लाह के महबूब और लाडले हैं, इस लिए अल्लाह रब्बुल इ़ज़्ज़त के नज़दीक उनके महबूब की अदाऐं भी प्यारी और पसंदीदा क़रार पाई हैं जिनका क़सदन

तर्क किया जाना उन्हें किसी सूरत गवारा नहीं है।

दोस्तो! सुन्नतें करने के लिए दी गई थीं कि उनके ज़रिए हम हर दम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को याद रख सकें, उन्हें कभी फरामोश न करें। हर अमल में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तरीके की इत्तिबा का मुतालबा, दरहक़ीक़त बंदों को एक ऐसे निज़ाम से वाबस्ता करना है कि जिस से वाबस्ता होकर बंदे हर वक़्त अपने नबी को याद रख सकें। सुन्नत पर अमल के मुतालबे का यह एक बड़ा मक़सद था जो अब हमारी नज़रों से ओझल हो गया है।

आमाले मसनूना को सुन्नत क़रार दिए जाने की हिक्मत

रही यह बात कि जब सुन्नतें इस क़द्र अहमियत की हामिल हैं तो फिर तर्के सुन्नत को शरअन मअसियत क्यों क़रार नहीं दिया गया? तो उसका जवाब मैं पहले अर्ज़ कर चुका हूँ कि तर्के सुन्नत को मअसियत क़रार न देना, दर हक़ीक़त बंदों पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का ख़ास फ़ज़्ल और उनकी बहुत बड़ी मेहरबानी है। इस लिए कि अगर हर अमल को मसनून तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम देना फ़र्ज़ या वाजिब क़रार दे दिया जाता तो फिर हमें बड़ी दिक़्क़त और परेशानी लाहिक़ होती। इस लिए कि भूल चूक हमारे साथ लगी रहती है। उस भूल चूक के साथ हर वक़्त की सुन्नतों का इस्तिहज़ार एक मुश्किल अमर था जिसकी सकत हमारे अंदर न थी, लिहाज़ा जब कोई सुन्नत तर्क होती तो उस तर्के सुन्नत के बाइस हम गुनहगार क़रार दिए जाते। जबकि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को

यह गवारा न था कि उनके बंदे हर दम गुनहगार लिखे जाऐं, इस लिए आमाले मसनूना को फ़र्ज़ या वाजिब क़रार नहीं दिया, बल्कि सुन्नत ही रहने दिया, ताकि हम हर वक़्त गुनाह में मुबतला न हों।

लेकिन साथ ही यह भी बता दिया कि मुझे पसंद तो यही है कि मेरे बंदे अपने तमाम कामों को मेरे हबीब के तरीक़े के मुताबिक़ ही अंजाम दें और हत्तल इम्कान उस पर अमल की कोशिश करें। हाँ अगर किसी शरई उज़्र की बिना पर उन्हें इस तरीक़े के मुताबिक़ अमल का मौक़ा न मिल सका तो मैं इस अमल को छूट जाने पर उनकी गिरिफ्त न करूंगा, बल्कि इस अमल के तर्क हो जाने पर अगर उन्हें हसरत और अफ़सोस होगा तो मैं उस हसरत व अफ़सोस पर भी उन्हें बहुत कुछ अता करूंगा।

देखिए! यह है हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम के आमाल व अफ़आल को सुन्नत क़रार दिए जाने की वजह, ताकि बंदे तर्के सुन्नत के बाइस हर दम गुनाह के मुरतकिब न हों। वरना तो क़सदन सुन्नत का तर्क कर दिया जाना उन्हें किसी सूरत गवारा नहीं है, बल्कि इंतिहाई ख़तरे की बात है।

असल मक़सूद अमल है

अब तक की तमाम तर गुफ्तगू सुन्नात की अहमियत, उसकी इफ़ादियत, उस पर मुरत्तब होने वाले दुनियवी व उख़रवी फ़वायद व समरात पर मुश्तमिल थी जिसे मैंने बतौफ़ीक़े इलाही किसी क़द्र वज़ाहत के साथ आप हज़रात के सामने बयान किया। चूंकि हम ईमान वाले हैं और हमें अपने नबी से मुहब्बत भी है इस लिए मुझे उम्मीद ही नहीं, बल्कि यक़ीन है कि उस गुफ्तगू को सुन कर

हमारे दिलों में सुन्नत पर अमल का दाइया और जज़्बा पैदा हुआ होगा कि इंशा अल्लाह आज से हम भी सुन्नतों पर अमल करेंगे, ग़फ़लत वाली ज़िंदगी से तौबा करेंगे, अपनी और अपने घर वालों की ज़िंदगी को सुन्नतों से आरास्ता करने की फ़िक्र और कोशिश करेंगे, अब तक जो ज़िंदगी गुज़री सो गुज़री, लेकिन आइंदा ऐसे नहीं जिऐंगे, बल्कि आक़ा को याद रख कर ज़िंदगी गुज़ारेंगे।

लेकिन सुन्नतों पर अमल कैसे किया जाए, उसकी आसान सूरत और उसका आसान तरीक़ा क्या हो, यह जानना इंतेहाई ज़रूरी है। इस लिए कि अब तक की सारी गुफ्तगू तो एक बयान थां, सिर्फ बयान कर दिया जाए और बयान के बाद मैं अपने घर चला जाऊँ और आप हज़रात अपने अपने घरों को चले जाऐं और मेरी ख़ूब तारीफ करें कि माशा अल्लाह आज शकील भाई ने सुन्नत की अहमियत पर बड़ा अच्छा बयान किया तो भला उस से क्या फायदा होगा? मक़सूदे असली बयान नहीं, अमल है। बयान तो कर दिया जाए, लेकिन मक़सूद तक पहुंचने की सबील और तदबीर न बताई जाए तो फिर लोग मक़सूद तक कैसे पहुंचेगे? फिर बयान का असल नफा भी यही है कि कही जाने वाली बातें हमारी अमली ज़िंदगी में दाख़िल हों और कहने वाला और सुनने वाले सिर्फ कहने और सुनने तक महदूद न रहें बल्कि सब के सब अमल करने वाले बन जाऐं, लिहाज़ा मुनासिब मालूम होता है कि अमल को वजूद में लाने के सिलसिले से भी कुछ बातें मुख़्तसर तौर पर अर्ज़ कर दी जाऐं ताकि लोगों को अमल का तरीक़ा मालूम हो सके।

सुन्नतें कैसे सीखें?

देखिए! हम अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में जितने आमाल

अंजाम देते हैं, मसलन सोना, सो कर उठना, क़ज़ाए हाजत के लिए जाना, फ़ारिग़ होकर निकलना, वुज़ू करना, कपड़ा पहनना, मस्जिद में दाख़िल होना, मस्जिद से निकलना, खाना, पीना, गुस्ल करना, घर में दाख़िल होना, घर से निकलना, वग़ैरह वग़ैरह। यह सारे आमाल वह हैं जिन्हें हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम भी अंजाम दिया करते थे, लेकिन एक ख़ास हैयत और एक ख़ास तरीक़े के मुताबिक़। नीज़ उन्हें अंजाम देते वक़्त कुछ दुआऐं भी पढ़ा करते थे। तक़रीबन सभी जगह यह नज़र आएगा कि आप ने फलाँ अमल इस तरह अंजाम दिया और अमल करते वक़्त यह दुआ भी पढ़ी। यानी एक आप का अमल है और एक उस अमल से मुतअल्लिक़ आप की दुआ है।

हमें सिर्फ यह करना है कि हम जो भी काम करें उस में हज़रत नबीए पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तरीक़ा मालूम करें कि आक़ा उस अमल को किस तरह अंजाम दिया करते थे और उस अमल को अंजाम देते वक़्त क्या दुआ पढ़ा करते थे। पस जिस अमल का मसनून तरीक़ा और उस अमल से मुतअल्लिक़ आप की दुआ हमारे इल्म में हो उसे तो हम मसनून तरीक़े के मुताबिक़ और मसनून दुआ के ऐहतिमाम के साथ ही अंजाम दें। अलबत्ता जिस अमल का मसनून तरीक़ा और इस अमल से मुतअल्लिक़ आप की दुआ हमें मालूम न हो तो इस बात को उसी वक़्त लिख लें कि मुझे उस अमल की सुन्नत मालूम करना है या उस अमल की दुआ मालूम करना है। इस काम के लिए कागज़ क़लम हमेशा जेब में रखें और फौरन लिख लिया करें, फिर या तो अज़ खुद किताब में देख कर मालूम कर लें या फिर वक़्त निकाल कर किसी आलिम या

मुफ्ती के पास जाकर मालूम करें और उसी वक़्त से उस पर अमल शुरू कर दें।

अब सुन्नतें मालूम करना मुश्किल नहीं

मसनून आमाल और मसनून दुआओं का जानना और सीखना पहले किसी ज़माने में मुश्किल रहा होगा, लेकिन अब यह कोई मुश्किल काम नहीं रहा। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त हमारे अकाबिर और उलमाए किराम को जज़ाए ख़ैर दे कि उन्होंने रोज़मर्रा के सारे मसनून आमाल और उन से मुतअल्लिक़ा दुआओं को हदीस की बड़ी किताबों से मुन्तख़ब करके छोटे छोटे किताबचों और रिसालों में जमा फरमा दिया है जो अब बाज़ारों में निहायत मामूली कीमतों पर दस्तयाब हैं। ताकि उम्मत बआसानी उन आमाल और दुआओं को अपना मामूल बना सके और उसे उन बातों पर मुत्तलअ होने के लिए हदीस की बड़ी बड़ी किताबों खगालने की ज़हमत न हो। यह हमारे आकाबिर की उम्मत पर शफक़त ही थी कि उन्होंने उम्मत के नफा की ख़ातिर यह ख़िदमात अंजाम दीं। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त उनकी ख़िदमात को क़बूल फरमाऐं और अपनी शान के मुताबिक़ उन्हें उसका बेहतर बदला अता फरमाऐं।

चंद मुफीद किताबें

मैं इस सिलसिले में आप हज़रात को उन चंद किताबों के नाम बता दूँ जो खुद मेरे घर में भी मौजूद हैं और जिन्हें मैं एक अरसे से देखता और पलटता रहता हूँ और उसी में से देख देख कर सुन्नतें सीखता और दुआऐं याद करता रहता हूँ। वह किताबें

यह हैं:

मसनून दुआऐं, हिस्न हसीन, ज़ादे मोमिन, अमलुल यौम वल लैल, अद्दुआउल मसनून, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नतें, गुलदस्तए सुन्नत, उसवए रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, शमाइले कुबरा।

मसनून आमाल और मसनून दुआओं के जानने और सीखने के सिलसिले से यह सारी किताबें बहुत मुफीद हैं जो बाज़ार में दस्तयाब हैं और बआसानी मिल भी जाती है। अव्वलुज़्ज़िक्र पाँच किताबें दुआऐं याद करने के सिलसिले से और आख़िरूज़्ज़िक्र पाँच किताबें सुन्नतें सीखने के सिलसिले से बहुत ही मुफीद और नाफे हैं। उन किताबों को ख़रीद कर घर लाऐं, उन्हें पढ़ने का एक वक़्त तैय करें। मैं आप से ज़्यादा नहीं, सिर्फ पाँच मिनट मांगता हूँ कि आप अपनी मसरूफियात में से सिर्फ पाँच मिनट निकालें। लेकिन रोज़ाना पाबंदी के साथ निकालें। दो मिनट सुन्नत सीखने के लिए दें और तीन मिनट दुआ याद करने में लगाऐं। और अगर किसी को उस से ज़्यादा मौक़ा मयस्सर हो तो वह हस्बे गुंजाइश उस से ज़्यादा वक़्त निकाले, लकिन जो तैय करे फिर उस पर पाबंदी के साथ अमल करे।

दोस्तो! हम और आप करके देखें। इंशा अल्लाह कुछ ही दिनों के अंदर बहुत से आमाल का मसनून तरीक़ा और उन से मुतअल्लिक़ दुआऐं हमें याद हो जाऐंगी। अल्लाह पाक मुझे भी उसकी तौफीक़ अता फरमाऐं और आप हज़रात को भी।

एक धोका

यहाँ पहुंच कर कुछ लोगों को एक धोका लगता है जिस का

बताना इंतेहाई ज़रूरी है। वह यह कि कुछ लोग दुआ तो याद करना शुरू कर देते हैं और ख़ूब मेहनत से याद करते हैं, लेकिन जब तक उन्हें पूरी दुआ याद नहीं हो जाती उस वक़्त तक वह उस दुआ को पढ़ना मोअख़्ख़र किए रहते हैं। यहाँ उनका नफ़्स उन्हें उचक ले जाता है और वह धोका खा जाते हैं। वह यह समझता है कि अभी तो तुम दुआ याद कर रहे हो, जब पूरी दुआ याद हो जाएगी तब पढ़ना शुरू करना।

याद रखें! यह नफ़्स का धोका है। वह दुआ के पढ़ने को दुआ के याद हो जाने तक मोअख़्ख़र करवाना चाहता है। हमें ऐसा न करना चाहिए, बल्कि जब तक ज़बानी याद न हो उस वक़्त तक उस दुआ को देख कर पढ़ने की सूरत में भी हासिल हो रहा है, लिहाज़ा याद हो जाने तक देख कर पढ़ने के अमल को मौक़ूफ़ न करें। देख कर पढ़ते रहें, पढ़ते पढ़ते इंशा अल्लाह कुछ दिनों के अंदर वह दुआ ज़बानी भी याद हो जाएगी।

घर वालों की भी फ़िक्र करें

अपने साथ साथ घर वालों की भी फ़िक्र करें, उन्हें भी अपने साथ ले कर बैठें। हमारे सारे कामों के लिए हमारा वक़्त तैय होता है, लेकिन घर की तालीम का कोई वक़्त तैय नहीं होता, बल्कि इस की फ़िक्र ही नहीं की जाती इल्ला माशा अल्लाह। हमें अपने घर के साज़ व सामान की ख़ूब फ़िक्र होती है कि हमारे घर में यह होना चाहिए, हमारे घर में वह होना चाहिए। घर वाली से पूछते हैं, उस से मशवरा करते हैं कि और क्या क्या लाना है, और क्या क्या ज़रूरतें हैं।

दोस्तो! सुन्नतें भी तो हमारी ज़रूरत हैं, बल्कि बहुत बड़ी

ज़रूरत हैं। फिर आख़िर हम उन्हें अपने घर में लाने की फ़िक्र क्यों नहीं करते? घर के दीगर साज़ व सामान की तरह सुन्नतों को भी अपनी ज़िंदगी में और अपने घर वालों में लाने की फ़िक्र की जानी चाहिए। लेकिन हम ख़ुद सोचें कि क्या हम उन सुन्नतों को अपनी ज़रूरत समझते हैं? और उन्हें अपनी और अपने घर वालों के ज़िंदगी में लाने की वैसी फ़िक्र करते हैं जैसी फ़िक्र घर के साज़ व सामान के लाने की करते हैं?

अमल थोड़ा हो लेकिन पाबंदी के साथ

ख़ैर, अब तक जो हुआ सो हुआ, लेकिन अब ऐसा न करें, बल्कि घर वालों से मशवरा करके घर की तालीम का एक वक़्त फ़ौरन तैय करें, जिस में बीवी भी मौजूद हो, बच्चे भी मौजूद हों, अम्माँ अब्बा भी मौजूद हों, दीगर अफ़रादे ख़ाना भी मौजूद हों। कुछ देर फ़ज़ाइले आमाल की तालीम कर लें, बहिश्ती ज़ेवर से एक आध मसअला सीख लें, फिर मज़कूरा किताबों में से किसी एक किताब का इंतिख़ाब करके कुछ देर दुआओं और सुन्नतों का मुज़ाकेरा किया करें।

ताहम यह ज़रूरी है कि घर की तालीम का वक़्त इतना ही रखा जाए जिस में सारे घर वाले बशाशत के साथ बैठ सकें। यह न हो कि इबतिदाई दिनों में तो ख़ूब जोश और जज़बा का मुज़ाहिरा हो और ख़ूब देर देर तक तालीम होती रहे, फिर रफ़्ता रफ़्ता यह सिलसिला ही बंद हो जाए, ऐसा न करें, बल्कि घर वालों के साथ मशवरा करके कुछ मुख़्तसर वक़्त तैय कर लें और उस पर मुदावमत के साथ अमल जारी रखें।

दुआओं और सुन्नतों पर अमल की तरतीब

मज़कूरा किताबों से सुन्नतें सीखने और दुआऐं याद करने की तरतीब यह हो कि सब से पहले उन किताबों के मज़ामीन की फेहरिस्त देखें। फेहरिस्त में दर्ज शुदा उन आमाल को निशान ज़द करें जिन से हमें रोज़ाना साबक़ा पड़ता है। फिर उन आमाल का मसनून तरीक़ा और उन से मुतअल्लिक़ा दुआऐं देखें।

उसका एक बेहतर तरीक़ा यह है कि फेहरिस्त में दर्ज शुदा आमाल में से जिन आमाल से रोज़ाना साबक़ा बड़ता है, अगर उन आमाल में से किसी अमल का मसनून तरीक़ा मालूम न हो या उस की दुआ याद न हो तो किताब के बिल्कुल शुरू में उस अमल का उनवान डाल कर उसे सफहा नम्बर समेत लिख लें। मसलन :

सोने से पहले के मसनून आमाल या दुआ, सफहा नम्बर १२

सो कर उठने के बाद के मसनून आमाल या दुआ, सफहा नम्बर १३।

कपड़ा पहनने का मसनून तरीक़ा या दुआ, सफहा न० २५।

कपड़ा उतारने का मसनून तरीक़ा या दुआ, सफहा न० २६।

वुज़ू का मसनून तरीक़ा या उस से मुतअल्लिक़ा दुआऐं, सफहा नम्बर ३५।

पस जब सोने का वक़्त हुआ तो किताब ले लें और इशारात में देख कर वह सफहा खोल लें जिस पर सोने से पहले के आमाले मसनूना और उस से मुतअल्लिक़ा दुआ लिखी हुई है। किताब देख कर वह मसनून आमाल अंजाम दे लें और सोने से पहले की दुआ देख कर पढ़ लें। सोकर उठें तो फिर उसी तरह किताब खोल लें और सो कर उठने के बाद की दुआ देख कर पढ़ लें। इसी तरह

मसनून तरीक़े के मुताबिक़ कपड़ा पहन लिया और पहेनने के बाद किताब खोल कर कपड़ा पहनने की दुआ देख कर पढ़ लें। फिर जब कपड़ा उतारा तो फिर किताब खोलें और कपड़ा उतारने के बाद की दुआ देख कर पढ़ लें। वुज़ू करके आऐं तो किताब खोल कर वुज़ू के बाद की दुआ देख कर पढ़ लें। इसी तरह जिस जिस अमल से साबक़ा पड़ता जाए उस वक़्त उस अमल को मसनून तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम देने के साथ साथ उस अमल की दुआ को देख कर पढ़ने का मामूल बनाया जाए।

इसी तरह किताब के शुरू में लिख लेने की सूरत में यह आसानी रहेगी कि जिस अमल की दुआ पढ़नी है उसे रोज़ाना फेहरिस्त में तलाश करने की ज़हमत न होगी, बल्कि उन इशारात के ज़रिए बआसानी उन सफहात तक पहुंचा जा सकेगा जिन पर मतलूबा दुआऐं लिखी हुई हैं।

या फिर यह कर लें कि आज कल बाज़ार में बुक मार्क (bookmark) के नाम से मुख़्तलिफ रंगों पर मुश्तमिल ऐसे पेपर्स दस्तयाब हैं जिन्हें इशारात के तौर पर इस्तिमाल किया जाता है। वह पेपर्स ऐसे होते हैं जो उस सफहा पर चिपक जाते हैं, गिरते नहीं है। उन्हें ख़रीद कर ले आऐं और मतलूबा सफहात के दरमियान रख लें। बस इस तरह देखते रहें और पढ़ते रहें, इंशा अल्लाह कुछ दिनों के अंदर रोज़मर्रा के सारे आमाल का मसनून तरीक़ा भी मालूम हो जाएगा और उन से मुतअल्लिक़ा दुआऐं भी याद हो जावेंगी।

बच्चों की तरबीयत कैसे करें?

इस तरह ख़ुद भी अमल करें और सुन्नत की अहमियत और

इफादियत बच्चों को भी ज़ेहन नशीन कराऐं और उन्हें भी सुन्नत पर अमल के ऐहतिमाम की तरग़ीब दें। उसकी एक आसान तरतीब भी घर की तालीम ही है। उस तालीम के ज़रिए अपने साथ साथ अपने घर वालों की ज़िंदगियों में दीन लाना और सब को सुन्नत के साँचे में ढालना आसान होगा। तालीम के दौरान ज़्यादा न सही तो कम अज़ कम एक मसअला बहिश्ती ज़ेवर से रोज़ाना सीखें और सिखाऐं, मज़कूरा किताबों से एक सुन्नत खुद भी सीखें और घर वालों को भी बताऐं, अगर मुम्किन हो तो एक दुआ रोज़ाना याद करें और उन्हें भी याद कराऐं। तालीम की इबतिदा में पहले गुज़िश्ता दिन के आमाल का ऐआदा करें कि गुज़िश्ता कल यह मसअला बताया गया था, यह सुन्नत बताई गई थी, यह दुआ याद कराई गई थी, बताओ उस पर अमल हुआ या नहीं? फरदन फरदन सब से पूछें। अगर याद हो गया और उस पर अमल हो गया हो तो उनकी हौसला अफज़ाई करें, अपनी हैसियत के मुताबिक़ कभी कभी इनाम भी दिया करें, फिर आगे बढ़ें। और अगर सुन्नत पर अमल न हो सका या दुआ याद न हो सकी या याद तो हो गई थी, लेकिन उस पर अमल न हो सका तो डाँट डपट ने करें कि क्यों याद न किया? क्यों भूल गए? अमल क्यों न किया? इस तरह की डाँट डपट से उनकी हौसला शिकनी होगी और फिर अंदर से सीखने की रग़बत भी ख़त्म हो जाएगी, बल्कि प्यार से कहें कि कोई बात नहीं बेटा, यह तुम थोड़ा ही भूले हो, तुम्हें तो नफ्स और शैतान ने भूला दिया, वरना तुम तो माशा अल्लाह बहुत बा अमल हो, लेकिन देखो! आइन्दा ख़्याल रखना, आइन्दा धोका न खाना।

अपने साथ साथ घर वालों के अमल की निगरानी भी किया

करें। जब कभी घर वाली को जगाऐं या बच्चों को जगाऐं तो प्यार से जगाऐं, बच्चों के सर पर शफ़क़त से हाथ फेरें और उन से कहें कि देखो बेटा! आखों को मल लो, तीन बार अल हम्दु लिल्लाह पढ़ लो, एक बार कलिमाए तय्यबा पढ़ लो, और देखो! दुआ पढ़ना मत भूल जाना, सोकर उठने के बाद की दुआ भी पढ़ लो। जब वह बेड (Bed) से नीचे उतरने लगें तो उन से कहें कि बेटा! बायाँ पैर पहले नीचे रखो, इस लिए कि आप ऊपर से नीचे की तरफ़ आ रहे हो और जब हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ऊपर से नीचे की तरफ आते तो बायाँ क़दम पहले नीचे रखा करते थे। और अगर वह बेड के बजाए नीचे बिस्तर बिछा कर सोए हों तो उन से कहें कि बेटा! बिस्तर से उठने के बाद जब ख़ाली फर्श पर क़दम रखो तो हमेशा बायाँ क़दम पहले रखा करो, इस लिए कि बिस्तर फर्श के मुक़ाबले में आला है और हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब आला से अदना की तरफ आते तो बायाँ क़दम पहले बढ़ाया करते थे। फिर जब वह इस्तिंजे के लिए बैतुल ख़ला जाने लगें तो उस वक़्त भी उनकी निगरानी करें और उनसे कहें कि बेटा! सर ढाँक लो, चप्पल पहन लो, बैतुल ख़ला जाने से पहले की दुआ पढ़ लो, बायाँ क़दम पहले अंदर रखो, उसके बाद पहले दाऐं क़दमचे पर सीधा पैर रखो, फिर बाऐं क़दमचे पर बायाँ पैर रखो, इस लिए कि यह हमारे नबी के तरीक़े हैं, आप जब बैतुल ख़ला जाते तो यह सब आमाल अंजाम दिया करते थे। इसी तरह जब वह फारिग़ होकर बाहर आने लगें तो फिर तलक़ीन करें कि बेटा! पहले बाऐं क़दमचे से बायाँ क़दम हटाओ, फिर दाऐं क़दमचे से दायाँ क़दम हटाओ, अब दायाँ क़दम पहले बाहर निकालो, अब निकलने

के बाद की दुआ पढ़ लो। जब वह ऐसा कर ले जाएं तो उन्हें ख़ूब शाबाशी दें, ख़ूब तारीफ़ करें कि माशा अल्लाह, माशा अल्लाह, देखो मेरा बेटा कितना अच्छा है, हर काम सुन्नत के मुताबिक़ करता है, अल्लाह पाक उस से कितने खुश हो गए होंगे, हमारे नबी कितने खुश हो गए होंगे। बस कुछ रोज़ इस तरह निगरानी करनी होगी, इस तरह समझाना पड़ेगा, फिर इंशा अल्लाह उन्हें उन आमाल को इसी तरह अंजाम देने की आदत हो जाएगी।

ग़र्ज़ यह कि अपनी बिसात भर बच्चों के तमाम आमाल की निगरानी करें। यह ख़्याल न करें कि यह बच्चे हैं, अभी बहुत छोटे हैं, अभी यह क्या सीखेंगे, उन्हें बच्चा समझ कर हरगिज़ न छोड़ें। यह गरचे अभी कम उम्र और ना समझ हैं, लेकिन जब इसी उम्र से उनकी फ़िक्र की जाएगी और इस तरह उन्हें सिखाया और बताया जाता रहेगा और उनके अमल की निगरानी की जाती रहेगी तो फिर इंशा अल्लाह यही बच्चे शोऊर की उम्र को पहुंचते पहुंचते बहुत कुछ सीख जाएंगे, हर अमल को मसनून तरीक़े के मुताबिक़ अंजाम देना और उस अमल से मुतअल्लिक़ दुआ का ऐहतिमाम करना उनकी तबीयत में ऐसा रच बस चुका हो कि फिर उन्हें उसके ख़िलाफ अमल करना अच्छा ही नहीं लगेगा।

उसे मामूली न समझें

इस तरह निगरानी का एक फायदा तो यह होगा कि खुद हमें मसनून आमाल के इत्तिबा की फ़िक्र रहेगी और सुन्नतों का ख़्याल रहने लगेगा और दूसरा फायदा यह होगा कि हमारे बच्चों की ज़िंदगियाँ बचपन ही से मसनून आमाल से आरास्ता होती चली जाएंगी।

दोस्तो! इन बातों को मामूली न समझें, कर के देखें, रोज़ाना दस पाँच मिनट ही सही, घर वालों के लिए ज़रूर निकालें, उन्हें अपने साथ लेकर बैठें, एक मसअला सिखा दें, एक सुन्नत बता दें, एक दुआ याद करा दें, निगरानी रखें, वक़्तन फवक़्तन याद दहानी करते रहें, फिर सोने से क़ब्ल अपने दिन भर के आमाल का भी जायज़ा लें कि कितने आमाल सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम पाए और कितने आमाल की सुन्नतें मतरूक हो गईं और बच्चों से भी दरियाफ्त करें। इस तरह करके देखें, धीरे धीरे घर में दीन न आए और घर वालों की ज़िंदगी सुन्नत व शरीअत के साँचे में न ढल जाए तो मुझ से कहें।

जो करना हो आज कर लो

लेकिन हमें इसका मौक़ नहीं है, हमारे मशाग़िल और हमारी मसरूफ़ियात हमारे लिए बहुत बड़ा उज़्र हैं, अपनी और अपने घर वालों की दीनी तरक़्क़ी कैसे हो, यह सोचने के लिए हमारे पास वक़्त नहीं है। जबकि करने वाले अपने मशाग़िल और अपनी मसरूफ़ियात के साथ उन कामों के लिए भी वक़्त निकाल लेते हैं और बिहम्दिल्लाह ख़ूब अमल कर रहे हैं। इस लिए कि वह उन आमाल की क़द्र व क़ीमत को जानते हैं, वह यह भी जानते हैं कि उन आमाल को इसी दुनिया में सीखना है और उन्हे मसरूफ़ियात व मशाग़िल के साथ उन पर अमल करना है, उस काम के लिए कोई अलाहिदा वक़्त नहीं मिलेगा। इस लिए वह उम्र अज़ीज़ के औक़ात को ज़ाऐ नहीं करते, बल्कि उन्हें पूरा पूरा वसूल करने की कोशिश करते हैं।

रहे मशाग़िल और मसरूफ़ियात तो वह कभी पीछा नहीं

छोड़ेंगी, जब तक आँख खुली है उस वक़्त तक यह सारे छमेले साथ लगे रहेंगे, उन से छुटकारा तो बस आँख बंद होने पर ही मिलेगा। और फिर आज कल कौन शख़्स मशगूल और मसरूफ नहीं है, हर आदमी मशगूल है, हत्ताकि बेकार आदमी जिस के पास कोई काम नहीं है वह भी यही कहता है कि मेरे पास टाइम नहीं है।

दोस्तो! वक़्त किसी के पास नहीं होता, वक़्त तो निकालने से निकला करता है, लिहाज़ा अपनी ज़िंदगी की क़द्र करें और अपने औक़ात की तरतीब बनाऐं, उन्हें लग़वियात में लग कर ज़ाए करने से बचाऐं, जब फ़िक्र करेंगे और तरतीब बनाऐंगे तो इंशा अल्लाह सारे कामों के लिए वक़्त निकल आएगा।

तहदीसे नेमत

अपनी बातें और अपने मामूलात नक़ल करते हुए मुझे ग़ैरत बहुत आती है, लेकिन यह सोच कर कि मेरे किसी अमल में इख़्लास तो है नहीं, लिहाज़ा कभी दौराने गुफ़्तगू उस क़बील से कोई ऐसी बात ज़बान पर आ जाती है जिस के नक़ल कर देने से नफा की उम्मीद हो तो फिर नक़ल भी कर देता हूँ कि शायद किसी को नफा जो जाए और कोई अमल करने वाला बन जाए। अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त के फ़ज़ल और अपने बुज़ुर्गों की सोहबत के तुफेल अपनी मालूमात की हद तक सुन्नतों पर अमल की तौफीक़ होती है और बिहम्दिल्लाह मज़ीद सुन्नतों के जानने और मालूम करने की फ़िक्र और जुस्तजू भी लगी रहती है। कोशिश यही करता हूँ कि मसनून आमाल और मसनून दुआओं का जिस क़द्र ऐहतिमाम हो सके कर लूँ और सुन्नत पर अमल का कोई मौका दानिस्ता तौर पर हाथ से जाने न दूँ।

चुनान्चे जब खाना खाने के लिए बैठता हूँ तो "अद्दुआउल मसनून" नामी किताब मेरे क़रीब रखी होती है, खाने से पहले की जितनी दुआऐं मुझे ज़बानी याद होती हैं उन्हें तो ज़बानी पढ़ लेता हूँ, उसके बाद जितनी देर में दस्तरख़्वान पर खाना लगता रहता है मैं इतनी देर भी ज़ाय जाने नहीं देता बल्कि किताब खोल कर उन दुआओं को जो ज़बानी याद नहीं हैं देख कर पढ़ता रहता हूँ। इसी तरह जब खाने से फ़ारिग़ होता हूँ तो खाना खाने के बाद की जो दुआयें याद होती हैं उन्हें ज़बानी पढ़ लेता हूँ और जो दुआऐं याद नहीं होतीं उन्हें देख कर पढ़ने की कोशिश करता हूँ। रोज़ नहीं पढ़ पाता तो कम अज़ कम जिस रोज़ फ़ुरसत होती है, मौक़ा होता है, उस रोज़ पढ़ने की कोशिश करता हूँ।

अब जब कि बात ज़बान पर आही गई है तो इस सिलसिले की दो तीन बातें और भी सुनते चलें। तहदीसे नेमत के तौर पर कहता हूँ कि रास्ता चलते हुए जब Speed breaker आता है तो मैं अपनी रफ़्तार कुछ धीमी कर लेता हूँ और जबSpeed breaker के बिल्कुल क़रीब पहुंच जाता हूँ और क़दम बढ़ाने का मौक़ा आता है तो अगर उस वक़्त बायाँ क़दम बढ़ाने की नौबत आती है तो मैं रूक जाता हूँ, और ठहर कर पहले उस पर दायाँ क़दम रखता हूँ और फिर 'अललाहु अकबर' कहता हूँ। फिर उसी पर बस नहीं करता, बल्कि उस के बाद बायाँ क़दम भी उस पर रख लेता हूँ, उसके बाद जब स्पीड ब्रेकर से नीचे उतरना होता है तो उस वक़्त पहले बायाँ क़दम आगे बढ़ाता हूँ और 'सुबहानल्लाह' कहता हूँ। क्यों? इस लिए कि स्पीड ब्रेकर $peed breaker) रोड (road) की सतह से कुछ ऊँचा होता है। और सुन्नत यह है

कि जब नीचे से ऊपर की तरफ़ जाना हो तो पहले दायाँ क़दम बढ़ाए और 'अल्लाहु अकबर' कहे और जब ऊपर से नीचे की तरफ आना हो तो पहले बायाँ क़दम बढ़ाए और 'सुबहानल्लाह' कहे।

यह जो पस्ती से बलंदी की तरफ और बलंदी से पस्ती की तरफ आने का सुन्नत तरीक़ा किताबों में मज़कूर है, यह सिर्फ उस वक़्त के लिए नहीं है जब कि बहुत ज़्यादा बलंदी की तरफ जाना और वहाँ से नीचे उतरना हो, बल्कि मुतलक़ बलंदी और पस्ती का त.किरा है ख़्वाह वह बलंदी और पस्ती मामूली दर्जे की ही क्यों न हो। तो आख़िर स्पीड ब्रेकर भी तो रोड की सतह से कुछ ऊँचा होता है, फिर भला हम स्पीड ब्रेकर पर उस सुन्नत को क्यों न ज़िंदा करें, वहाँ से भी ग़फलत के साथ क्यों गुज़र जाएं?

दोस्तो! अगर हम ने उस वक़्त उस अमल को ज़िंदा किया और उस सुन्नत पर अमल कर लिया तो बताओ उस अमल के सबब हमें कुछ नेकियाँ मिलेंगी या नहीं? ज़ाहिर है कि मिलेंगी और यह नेकियाँ कल क़यामत के रोज़ हमारे काम आऐंगी या नहीं? ज़ाहिर है कि काम आऐंगी, फिर आख़िर उस वक़्त उस सुन्नत को जो कि अमल के ऐतिबार से बहुत आसान भी है, तर्क करके अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की महबूबियत और उस अमल पर मिलने वाली नेकियों से क्यों कर महरूम रहा जाए?

काश! हम नेकियों की क़द्र पहचानते

देखिए! यह सुन्नत बज़ाहिर तो एक सुन्नत मालूम होती है, लेकिन फिलहक़ीक़त कई सुन्नतों पर मुशतमिल है। वह इस तरह कि जब स्पीड ब्रेकर (Speed breaker) पर चढ़ते हुए हम ने पहले दायाँ क़दम उस पर रखा तो पस्ती से बलंदी की तरफ आने

की सुन्नत अदा हुई जो कि पहली सुन्नत है। फिर 'अल्लाहु अकबर' कहा तो यह बलंदी पर चढ़ने की दूसरी सुन्नत अदा हुई, उसके बाद जब स्पीड ब्रेकर (Speed breaker) से नीचे उतरे तो उतरते हुए पहले बायाँ क़दम नीचे रखा जो कि बलंदी से पस्ती की तरफ आने का मसनून तरीक़ा, यह उस वक़्त की तीसरी सुन्नत हुई और जब उतरते हुए 'सुबहानल्लाह' कहा तो यह चौथी सुन्नत अदा हुई। रास्ता चलते हुए स्पीड ब्रेकर के आ जाने पर हमे चार सुन्नतों पर अमल का मौक़ा मिलता है जिसे हम नज़र अंदाज़ करते हुए आगे बढ़ जाते हैं और कितनी नेकियों से हाथ धो बैठते हैं अल्लाह पाक हमारे उस कुसूर को माफ फरमाऐं।

दोस्तो! बात दरअसल यह है कि हम नेकियों की क़द्र और अहमियत को जानते नहीं हैं, जिस दिन हम नेकियों की क़द्र और अहमियत जान जाऐंगे उस दिन नेकियों के हासिल करने का कोई मौक़ा हाथ से जाने न देंगे। खुदा करे कि हम नेकियों की अहमियत को समझने वाले बनें, उनकी क़द्र व क़ीमत को पहचानने वाले बनें और हर वक़्त नेकियों के हासिल करने और उनके जमा करने की हिर्स हमारे अंदर पैदा जो जाए।

एक अमल यह भी

इसी तरह जब कभी गाड़ी में बैठ कर अपने घर से निकलता हूँ तो चूंकि हमारी गाड़ी हमारी ही बिल्डिंग के कम्पाउंड (compound) में खड़ी होती है (वाज़ेह हो कि पूरी चार मंज़िला इमारत आपकी ज़ाती है) और मैं ने अपने घर के हुदूद की नियत बिल्डिंग के कम्पाउंड ही से कर रखी है, इस लिए गाड़ी में बैठने के बाद बायाँ क़दम ज़रा आगे कर लेता हूँ ताकि जब गाड़ी

कम्पाउंड की हद से बाहर निकले तो मेरा बायाँ क़दम पहले बाहर निकले और घर से निकलते वक़्त बायाँ क़दम पहले निकालने की सुन्नत पर अमल हो सके। इसी तरह जब लौट कर घर आता हूँ और गाड़ी बिल्डिंग के क़रीब पहुंच जाती है तो गाड़ी के कम्पाउंड में दाख़िल होने से क़ब्ल में अपना दायाँ क़दम ज़रा आगे कर लेता हूँ ताकि जब गाड़ी बिल्डिंग के ऐहाते में दाख़िल हो तो मेरा दायाँ क़दम पहले अंदर दाख़िल हो और घर में दाख़िल होते वक़्त दायाँ क़दम पहले दाख़िल करने की सुन्नत पर अमल हो सके।

इसी तरह जब गाड़ी में बैठा सफर कर रहा होता हूँ तो चूंकि अब बहुत सी जगह ब्रिज (पुल) बन चुके हैं, तो जब कभी कोई ब्रिज आता दिखाई देता है तो गाड़ी के ब्रिज पर चढ़ने से क़ब्ल मैं अपना दायाँ क़दम कुछ आगे कर लेता हूँ ताकि पस्ती से बलंदी की तरफ आते हुए दायाँ क़दम बढ़ाने की सुन्नत पर अमल हो जाए, इसी तरह जब गाड़ी नीचे की तरफ आ रही होती है तो उस वक़्त मैं अपना बायाँ क़दम ज़रा आगे कर लेता हूँ ताकि बलंदी से पस्ती की तरफ आते वक़्त बायाँ क़दम बढ़ाने की सुन्नत पर अमल हो जाए।

मियाँ! यह सारी बातें किसी की समझ में आऐं न आऐं, मुझे तो यही समझ में आता है कि हर दम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को याद रखा जाए, कभी फरामोश न किया जाए बल्कि याद रखने के बहाने और मवाक़े तलाश किए जाऐं, इस लिए कि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त को यही पसंद है और वह यही चाहते हैं कि उनके बंदे बहाने बहाने से उनके महबूब को याद रखा करें।

एक फिक्रमंद माँ

एक साहब जिन्हें मैं जानता हूँ, उन्होंने मुझे बताया कि एक रोज़ मेरी बेटी मेरे घर आई, उसके साथ उसकी एक तीन या साढे तीन साला बच्ची भी थी। एक रोज़ इशा की नमाज़ के बाद हम लोग खाने वग़ैरह से फारिग़ होकर बैठे गुफ्तगू कर रहे थे। जब गुफ्तगू हो चुकी तो मेरी बेटी ने अपनी बच्ची से कहा कि बेटा! अब सोने का वक़्त हो चुका है, चलो चल कर इस्तिंजा वुज़ू कर लो, मिसवाक कर लो, कपड़े तबदील कर लो और सो जाओ। यह कह कर मेरी बेटी बैतुल ख़ला तक गई, बैतुल ख़ला का दरवाज़ा खोला और अपनी बच्ची से कहा आओ बेटा! इस्तिंजा कर लो। जब वह बच्ची बैतुल ख़ला के पास पहुंची तो पहले दायाँ क़दम अंदर रखने लगी। माँ ने देखा तो कहा नहीं बेटा, नहीं बेटा। बच्ची फौरन समझ गई और दायाँ क़दम पीछे करके बायाँ क़दम आगे किया और माँ से पूछा अम्मी! यह वाला? माँ ने कहा हाँ बेटा, यह वाला।

देखिए! बच्ची सिर्फ तीन साल की है, बहुत छोटी है, अभी वह मुकल्लफ भी नहीं है, उसके बावजूद उसे उसकी माँ ने कुछ तो सीखाया समझाया होगा कि वह बैतुल ख़ला के पास पहुंच कर अपनी माँ से पूछ रही है कि अम्मी! यह वाला? यानी मैं पहले बायाँ पैर अंदर रखूँ? माँ ने कहा हाँ बेटा यह वाला, जब बैतुल ख़ला में दाख़िल होते हैं तो पहले बायाँ क़दम अंदर रखते हैं।

अब देखिए कि बच्ची सिर्फ तीन साल की है लेकिन उसी उम्र से उसकी माँ उसे किस तरह सुन्नतों के ऐहतिमाम की मश्क़ करा रही है। जब एक बच्ची को तीन साल की उम्र से इस तरह

मसनून आमाल की मश्क़ कराई जाएगी तो फिर बड़ी होने के बाद आमाले मसनूना के ऐहतिमाम पर उसे कैसा दवाम हासिल हो चुका होगा और इत्तिबाए सुन्नत में किस क़द्र पुख़्तगी आ जाएगी। और फिर ज़रा सोचें तो सही कि माँ बेटी का यह अमल जब हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम पर पेश किया जाएगा तो आप किस क़द्र ख़ुश होंगे कि मेरी एक उम्मती अपनी बेटी को बचपन ही से मेरी अदाओं की नक़ल करा रही है।

उन्हीं साहब ने अभी कुछ अरसा पहले अपनी नवासी का एक वाक़या और सुनाया कि मेरी बेटी अपनी बच्ची को लिए एक जगह मुलाक़ात के लिए गई, उस वक़्त उसकी उम्र तक़रीबन साढ़े पाँच साल हो चुकी थी। वहीं पड़ोस में कुछ जानने वाले और भी रहते थे। वह एक जगह अपनी माँ के साथ बैठी हुई थी कि पड़ोस के घर से एक बच्चा उसके पास आया और उस से कहा कि मेरे घर चलो, मेरे पास बहुत से खिलौने हैं, हम लोग वहाँ खेलेंगे। वह उसके साथ खेलने चली गई। जब खेल कर वापस आई तो अपनी माँ से कहने लगी कि अम्मी! जब मैं उसके साथ खेल रही थी तो उसके घर वालों ने मुझे खाने के लिए कुछ चीज़ें दी थीं, लेकिन मैंने खाया नहीं, पता नहीं उनके घर का खाना खाना भी चाहिए या नहीं? देखिए! साढे पाँच साल की बच्ची है, लेकिन कैसी ऐहतियात कर रही है। भला उसे जायज़ और नाजायज़ का क्या पता, लेकिन अभी से जायज़ और ना जायज़ की फ़िक्र है।

उसी बच्ची का एक मज़ाहिया वाक़या भी सुनते चलें। उन साहब ने बताया कि अल हम्दु लिल्लाह मेरी बेटी घर में अपनी बच्ची को निहायत ऐहतिमाम से सुन्नतों पर अमल की मश्क़ कराती

है। चूंकि उसके सामने बार बार सुन्नतों का तज़किरा होता रहता है कि यह सुन्नत है, यह सुन्नत है, तो वह उस लफ्ज़ से क़द्रे मानूस हो चुकी है।

एक रोज़ हुआ यह कि वह खिड़की पर बैठी बाहर की तरफ देख रही थी। उसकी माँ ने जब देखा कि यह खिड़की पर बैठी बाहर की तरफ देख रही है तो उससे पूछा कि बेटा! वहाँ बैठी हो? क्या देख रही हो? कहने लगी कि अम्मी! खिड़की पर बैठ कर बाहर की तरफ देखना सुन्नत है। देखिए! घर में सुन्नत का किस क़द्र तज़किरा हुआ होगा कि लफ्ज़ "सुन्नत" उसकी ज़बान ही पर चढ़ गया और वह अपने हर अमल को सुन्नत बतलाने लगी।

इसी तरह एक साहब ने अपनी बच्ची जिस की उम्र सिर्फ ६ साल है, के मुतअल्लिक़ सुनाया कि एक मर्तबा उनकी बेटी मकतब जाने के लिए घर से निकली, कुछ दूर जाने के बाद दोबारा पलट कर आई, घर में दाख़िल हुई और फिर निकल कर मदरसा जाने लगी। उसकी वालिदा ने देखा तो उस से पूछा कि बेटा! क्या बात हुई, तुम लौट कर क्यों आ गई थीं। कहने लगी अम्मी ! घर से निकलते वक़्त मुझे नफ्स ने धोका दे दिया था। पूछा क्या धोका दिया था? कहने लगी कि घर से निकलते वक़्त मैं बाऐं क़दम के बजाए दाऐं क़दम से बाहर निकल गई थी, कुछ दूर जाने के बाद मुझ ख़्याल हुआ कि मुझे नफ्स ने धोका दे दिया और बाऐं क़दम के बजाए दाऐं क़दम से बाहर निकाल दिया, इस लिए मैं फौरन पलट आई और दाऐं पावँ से घर में दाख़िल हुई, घर में दाख़िल होने की दुआ पढ़ी और फिर बाऐं क़दम से बाहर निकली और घर से निकलने के बाद की दुआ पढ़ी।

दोस्तो! यह सब क्या है? यह सब दर हक़ीक़त उन फ़िक्रमंद माओं की तरबीयत और सुन्नतों के ऐहतिमाम के अनवार व बरकात हैं कि इतनी छोटी उम्र में उनकी बच्चियों का दीन शोऊर बेदार हो चला है, उन के अंदर दीनी फ़िक्र पैदा हो गई है। सुन्नतों के ऐहतिमाम की बरकत से उन्हें उसी उम्र से नफ्स और शैतान की जानिब से दिए जाने वाले धोके समझ में आने लगें हैं। हम समझ सकते हैं कि जिस घर में बचपन से बच्चों की तरबियत उस रूख़ पर की जाएगी और उनके तमाम आमाल को सुन्नत के सँचे में ढालने की कोशिश की जाएगी और बार बार उनके सामने सुन्नत का तज़किरा किया जाता रहेगा तो फिर उन घरों के बच्चे जवान होकर फराइज़ और वाजिबात की अंजामदेही पर और हराम और नाजायज़ उमूर से बचने पर किस क़द्र सख़्ती से कारबंद रहेंगे। खुदा करे सुन्नतों का ऐसा ऐहतिमाम हमारी और हमारे बच्चों की ज़िंदगी में भी पैदा हो जाए ताकि हमें भी सुन्नतों के मुनाफे और समरात हासिल हों और उनकी बरकत से हमारी दुनिया और आख़िरत की ज़िंदगी संवर जाए।

छुट्टी के दिनों के दीनी प्रोग्राम

दोस्तो! हम छुट्टी के दिन का इंतिज़ार करते हैं, उस दिन के अपने बहुत से प्रोग्राम पहले से तैय कर लेते हैं कि हमें यह करना है, यह करना है, वहाँ जाना है, उन से मिलना है। जहाँ हम अपने बहुत से काम और प्रोग्राम तैय करते हैं वहीं छुट्टी के दिन का एक काम यह भी तो तैय करें कि इतवार के रोज़ हमारी छुट्टी होगी, उस दिन हमें फुरसत रहेगी, लिहाज़ा खाने के बाद की जो दुआऐं 'अद्दुआउल मसनून' और 'हिस्ने हसीन' वग़ैरह किताबों में लिखी

हुई हैं हम उन्हें रोज़ाना नहीं पढ़ पाते तो कम अज़ कम इतवार के रोज़ किताब में से देख कर पढ़ेंगे।

इसी तरह सोने से पहले की भी बहुत सी दुआऐं उन किताबों में लिखी हुई हैं जिन्हें रोज़ाना पढ़ने का मौक़ा नहीं मिलता, लिहाज़ा छुट्टी से एक रोज़ क़ब्ल हम सोने से पहले की सारी दुआऐं उन किताबों में से देख कर पढ़ेंगे। और अगर काम के दिनों में भी किसी रोज़ जल्दी घर पहुंचने का इत्तिफ़ाक़ हो गया, खाना भी जल्दी खा लिया, बिस्तर पर भी जल्दी आ गए तो इंशा अल्लाह उस रोज़ भी सोने से पहले की सारी दुआऐं पढ़ेंगे।

दोस्तो! यह सब करने के काम हैं और इसी दुनिया में करने हैं, इन्हीं मसरूफ़ियात में रहते हुए करने हैं, इन कामों को करने का कोई अलग वक़्त हमें नहीं मिलेगा, बल्कि इन्हीं औक़ात में से वक़्त निकाल कर हमें इन आमाल को अंजाम देना होगा। वरना तो वक़्त गुज़रता जाएगा और हम नफ़्स और शैतान के धोके में आकर रोज़ यह सोचते रहेंगे कि इंशा अल्लाह कल से करेंगे, परसों से करेंगे, बस आइन्दा हफ़्ते से तरतीब बना लेंगे, ज़रा यह काम निमट जाए फिर ज़रूर करेंगे।

याद रखें! यह सब नफ़्स और शैतान के धोके हैं जिन में मुबतला होकर हम आज तक धोका खा रहे हैं और अपने सब से बड़े मुहसिन को भूल कर और उनके तरीक़ों को फ़रामोश करके एक बेढब ज़िंदगी गुज़ार रहे हैं।

फ़ुरसत का इंतिज़ार न करें

मेरे दोस्तो! कल कभी आया है न कभी आएगा, कोई काम निमटा है न निमटेगा। यह दुनिया है, यहाँ तो मशाग़िल और

मसरूफ़ियात साथ लगी रहेंगी, अभी एक काम से निमटे नहीं कि फ़ौरन दूसरा काम सर पर सवार रहेगा। यहाँ मौक़ा कहाँ? यहाँ तो मौक़ा निकालने से निकलेगा। वरना इसी सोच में सारी उम्र गुज़र जाएगी और एक दिन मौत का फ़रिश्ता वापसी का पैग़ाम लेकर हाज़िर हो जाएगा कि बस वक़्त पूरा हो चुका, अब चलो, फिर उस वक़्त मोहलत मिलेगी और न ही उस वक़्त का अफ़सोस किसी काम आएगा।

मिल जाए जो भी वक़्त ग़नीमत समझ के चल
क्या ऐतेबार साँस का जब तक चली चले

दोस्तो! आज मौक़ा है, फ़ुरसत है, सेहत भी है, इस से क़ब्ल कि यह मौक़ा हाथ से निकल जाए, यह फ़ुरसत के लम्हात मज़ीद मशाग़िल के हुजूम में खो जाऐं और ख़ुदा नख़्वास्ता यह सेहत किसी बीमारी में तबदील हो जाए तो फिर उस वक़्त हम क्या कर सकेंगे? लिहाज़ा इस धोके में न रहें कि अभी बहुत मसरूफ़ हैं, फ़ुरसत मिलने पर करेंगे, अभी सेहतमंद हैं फिर कर लेंगे, अभी जो जवानी है बाद में कर लेंगे। इस लिए कि मौत का कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं है, मौत सिर्फ बूढ़ों को नहीं आती जवानों को भी आती है, मौत सिर्फ बीमारों को नहीं आती सेहतमंद और तंदरूस्त लोगों को भी आती है, मौत सिर्फ कमज़ोरों को नहीं आती, क़वी और तवाना लोगों को भी आती है।

इबरत आमोज़ वाक़या

अभी चंद साल क़ब्ल की बात है कि हमारे पड़ोस में दो आदमी रहा करते थे जिनकी आपस में बड़ी गहरी दोस्ती थी, दोनों बहुत तंदरूस्त और घटीले बदन के मालिक थे। एक मर्तबा वह

दोनों पंद्रहवीं शाबान की शब में इकट्ठे क़ब्रस्तान गए जहाँ एक क़ब्र खोदी हुई थी। चूंकि पंद्रहवीं शाबान में आइन्दा एक साल के दौरान पैदा होने वाले बच्चों और मरने वालों के मुतअल्लिक़ फैसला हो जाता है, लिहाज़ा उन में से एक शख़्स ने उस क़ब्र को देख कर कहा कि देखें आज उस में कौन आने वाला है' वह क़ब्र इसी बुनियाद पर खोदी गई थी कि एक मय्यत को लाया जा रहा है, लेकिन यह तो अल्लाह पाक ही जानते थे कि जिस मय्यत के लिए खोदी गई है वही उस में दफनाई जाएगी या कोई और उस में दफनाया जाएगा।

अब हुआ यह कि जिस मय्यत के लिए वह क़ब्र खोदी गई थी उसके लाने में किसी वजह से ताख़ीर हो गई और जिस ने यह जुमला कहा था कि 'देखें आज उस में कौन आने वाला है'' सुबह होते होते उन साहब का इंतिक़ाल हो गया। जब उनके अइज़्ज़ा क़ब्रस्तान के ज़िम्मेदारों को क़ब्र खोदने के सिलसिले से कहने के लिए गए तो उन्होंने कहा कि एक क़ब्र तैयार है जो किसी और के लिए बनाई गई थी, लेकिन वह मय्यत अब तक नहीं लाई गई है। आप ऐसा करें कि अपनी मय्यत को ले आएं, हम उसी क़ब्र में उन्हें दफना देंगे और उस मय्यत के लिए दूसरी क़ब्र बना देंगे।

देखा आप ने! यह है अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का फैसला और उनकी जानिब से लिखी गई तक़दीर कि मरने वाला मरने से पहले ख़ुद अपनी आँखों से अपनी क़ब्र को देखेगा, देखते वक़्त उस के वहम व गुमान में भी न होगा कि जिस क़ब्र को मैं देख रहा हूँ और जिस के मुतअल्लिक़ यह जुमला कह रहा हूँ वह दर असल मेरी ही क़ब्र है और सुबह होते होते मैं ख़ुद उस में दफनाया

जाऊँगा।

मौत का कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं

दोस्तो! मौत का कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं है और उस से किसी को मफ़र नहीं है, वक़्त आ जाने पर यह किसी को नहीं छोड़ती। फिर ख़्वाह बूढ़ा हो या जवान, मर्द हो या औरत, बीमार हो या तंदरूस्त, ज़ईफ हो या क़वी, शहरी हो या दीहाती, अमीर हो या ग़रीब, यह जब चाहे, जहाँ चाहे और जिसे चाहे अगर दबोच लेती है। लिहाज़ा इस से क़ब्ल कि मौत अपने पंजे हम पर गाड़ दे और हमें आकर दबूच ले, हम अपनी ज़िंदगी की क़द्र कर लें, अपने औक़ात की तरतीब बना लें, रोज़ाना सीखते रहें अमल करते रहें, सीखते रहें अमल करते रहें। जब हम हर वक़्त हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को याद रखते हुए ज़िंदगी गुज़ार देंगे तो जिस वक़्त हमें क़ब्र में आप का चेहरए अनवर दिखलाया जाएगा तो इंशा अल्लाह उस वक़्त हमें आप को पहचानने में न सिर्फ़ यह कि दुशवारी न होगी, बल्कि चहरए अनवर पर नज़र पड़ते ही हमारा चेहरा ख़ुशी से दमक उठेगा कि जिस ज़ात और जिस शख़्सियत को नमूना और आइडियल बना कर मैंने अपनी ज़िंदगी गुज़ारी थी आज वह शख़्सियत बनफ़्से नफ़ीस मेरे सामने मौजूद है।

हम तय कर लें

लिहाज़ा आज की इस मजलिस में हम सब अज़्मे मुसम्म करें, यह तय करके उठें कि आज से हम अपने हर अमल में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को याद रखेंगे, कोई अमल सुन्नत के ख़िलाफ़ अंजाम नहीं देंगे। अगर भूले से कोई अमल सुन्नत के

ख़िलाफ हो गया तो सब से पहले तौबा इस्तिग़फार करेंगे, अंदर ही अंदर नादिम और शर्मिन्दा होंगे कि हाए यह मुझ से क्या हो गया, फिर उस के बाद उस अमल को दोबारा सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम देंगे। मसलन अगर भूले से कपड़ा पहले बाऐं आस्तीन में पहन लिया तो कपड़ा उतार लेंगे, कपड़ा उतारते वक़्त की दुआ पढ़ेंगे, उस ग़लती पर तौबा इस्तिग़फार करेंगे, फिर दोबारा मसनून तरीक़े के मुताबिक़ पहनेंगे और कपड़ा पहनने की दुआ भी पढ़ेंगे। इसी तरह अगर पहले बाऐं पैर में जूता पहन लिया तो निकाल लेंगे, तौबा इस्तिग़फार करेंगे, फिर सुन्नत तरीक़े के मुताबिक़ पहले दाऐं पैर में पहनेंगे। इसी तरह घर में दाख़िल होते वक़्त अगर पहले बाऐं पैर से दाख़िल हो गए तो पहले मसनून तरीक़े के मुताबिक़ बाहर आऐंगे, घर से बाहर निकलने की दुआ पढ़ेंगे, उस भूल पर तौबा इस्तिग़फार करेंगे, फिर दोबारा मसनून तरीक़े के मुताबिक़ दाऐं पैर से दाख़िल होंगे और दाख़िल होने की दुआ भी पढ़ेंगे। आप करके देखें, कुछ दिनों के बाद इत्तिबाए सुन्नत तबियते सानिया बन जाएगी, फिर इंशा अल्लाह हर अमल सुन्नत के मुताबिक़ अंजाम पाने लगेगा।

अल्लाह पाक हमारे इस कहने सुनने को क़बूल फरमाऐं और हमें उन गुज़ारिशात पर सद फीसद अमल की तौफीक़ नसीब फरमाऐं और हम सब के ज़ाहिर व बातिन की ऐसी कामिल तरबीयत फरमावें कि हज़रत नबीए पाक अलैहिस्सलातु वस्सलाम के मुक़ाबले में हमें कोई चीज़ अच्छी न लगे। कोई हमारी कितनी ही मुख़ालिफत करे कर ले, कोई हमें छोड़ता हो तो छोड़ दे, लेकिन हम कभी हुज़ूर को न छोड़ें, उन्हें छोड़ना हमें गवारा ही न हो।

इस लिए कि आक़ा से बढ़ कर हमारा कोई मुहसिन नहीं, उन से बढ़ कर हमारा कोई ख़ैर ख़्वाह नहीं, उन से ज़्यादा किसी ने हमारी फ़िक्र नहीं की, उन से ज़्यादा हमारे लिए कोई रोया नहीं और सिर्फ यही नहीं कि उन की ज़रूरत हमें सिर्फ दुनिया में पड़ेगी, बल्कि मरने के बाद भी उनकी सिफारिश के बिग़ैर चारए कार नहीं है। तो फिर भला हम क्यों कर उन्हें भूल जाऐं?

अल्लाह पाक हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उन ख़ैर ख़्वाहों, उन फ़िक्रों और उन कुढ़नों का ऐहसास हमारे अंदर पैदा फरमाऐं और हमें आप की, कामिल अदब, कामिल अज़मत, कामिल मारफ़त, कामिल इत्तिबा और आप का कामिल इश्क़ नसीब फरमाऐं, बल्कि इश्क़ की वह दीवानगी जो हज़रात सहाबए किराम को अता फरमाई थी, उसका कुछ हिस्सा हमें भी नसीब फरमाऐं और हमें आपकी ज़ाहिरी सुन्नतों के साथ साथ बातिनी सुन्नतों पर भी अमल की तौफ़ीक़ मरहमत फरमाऐं। आमीन

واخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين